क़ुरआन पर अमल

(तहरीक से जुड़ी बहनों के मिसाली तजरिबे)

सुमय्या रमज़ान

विषय सूची

दो शब्द 5

क़ुरआन के ज़रिए इन्क़िलाब और उसके तक़ाज़े 7

—क़ुरआन एक अज़ीम मोजिज़ा 11

—तब्दीली की कैफ़ियत 12

—क़ुरआनी असर की ताक़त 13

—क़ुरआन के ज़रिए बदलाव के नमूने 14

—क़ुरआन मजीद पर अल्लाह के रसूल (सल्ल.) का अमल 15

—सहाबा (रज़ि.) का क़ुरआन से सम्बन्ध 22

—क़ुरआन मजीद के साथ हमारा रवैया 24

क़ुरआन से फ़ायदा उठाने का सही तरीक़ा 26

—(1) क़ुरआन मजीद से दिलचस्पी 26

—(2) मुनासिब जगह 27

—(3) सही और उचित समय 27

—(4) ठहर-ठहरकर पढ़ना 28

—(5) पूरी लगन और ध्यान से अध्ययन करना 28

—(6) हुक्मों के आगे झुक जाना 29

—(7) मक़सद : क़ुरआन का समझना 29

—(8) आयतों को बार-बार पढ़ना 30

बहनों के अपने-अपने तजरिबे 32

—घर में चीख़ना-चिल्लाना 34

—फ़ज्र की नमाज़ के लिए जागना 37

तलाक़ की धमकी	44
लड़ना-झगड़ना और नाराज़ी	55
नफ़रत और रंजिश	62
तस्बीह (ख़ुदा का महिमागान)	70
—टी॰वी॰ और दीवारों की तस्बीह	74
—तस्बीह की बरकत से बड़ा गुनाह छोड़ दिया	75
—बच्चों पर असर	77
माँ-बाप के साथ अच्छा बरताव	79
—आमिल और तान्त्रिक के बजाय अल्लाह	80
—माँ-बाप में बदलाव	82
—एक बहन का अजीब तजरिबा	84
—माँ-बाप के साथ मुहब्बत ज़ाहिर करना	85
—एक भाई के माँ-बाप के साथ अच्छे बोल	87
विरासत	89
—ज़ेवर और गहनों का बँटवारा	89
—एक और तजरिबा	93
—ठीक वक़्त पर बँटवारा	96
नफ़सियाती (मनोवैज्ञानिक) बिगाड़ का शिकार नौजवान	99
मज़ारों पर दुआएँ	106
—सदक़ा मुसीबत को टाल देता है	111
ज़रूरतें अल्लाह पूरी करता है	113
जिन्न-प्रेत निकालना	117
ग़ैब का इल्म अल्लाह के सिवा किसी को नहीं	125
औलाद के लिए दुआ	132

दो शब्द

अब तो यह महसूस होने लगा है कि यह दौर औरतों के लिए ख़ास हो गया है। कभी-कभी यह एहसास कुछ ज़्यादा ही होने लगता है। पश्चिमी देश और इस्लाम की तहज़ीबी कश-मकश में भी उनका मक़ाम और मन्सब तय करने का मसला फ़ेहरिस्त में सबसे ऊपर है। हमारे समाज में उन्हें उनका मक़ाम दिलाने की सरकारी और ग़ैर-सरकारी कोशिशें भी कुछ ज़्यादा ही नुमाया हैं। इसी का एक पहलू यह है कि दीन को ज़िन्दा और बाक़ी रखने के लिए जो कोशिश हो रही है, उसमें भी सरगर्मी से सहयोग और मदद करनेवालों में औरतें ही आगे हैं। नवमुस्लिमों की दास्तानें पढ़ें तो उसमें भी औरतें ही ज़्यादा नज़र आती हैं।

क़ुरआन जो दावत पेश करता है उसपर अमल में मर्द और औरत के बीच कोई फ़र्क़ नहीं है। पिछले कुछ अर्से से इस्लामी दुनिया में 'अल्लाह की तरफ़ पलटो' की मुहिम चल रही है। इदारे क़ायम हो रहे हैं, क़ुरआन समझने के लिए तरह-तरह के कोर्स और निसाब (पाठ्य क्रम) तैयार किए जा रहे हैं, जिनमें हज़ारों की तादाद में मर्द और औरतें शिरकत कर रही हैं। कुछ मर्द और औरतों के नाम तो इस हवाले से बहुत ज़्यादा शोहरत हासिल कर चुके हैं। इसी सिलसिले में मुल्क कुवैत से प्रकाशित होनेवाली मैगज़ीन (पत्रिका) 'अलमुजूतमअ' (अरबी) में एक मज़मून सिलसिलेवार छपा। उसमें मोहतरमा सुमय्या रमज़ान ने अपने दर्से क़ुरआन देने के तरीक़े और फिर उसपर अमल करने के अन्दाज़ का हाल लिखा है। सिर्फ़ क़ुरआन की तबलीग़ को काफ़ी नहीं समझा गया, बल्कि हर बार एक आयत का चुनाव करके दर्स में शामिल होनेवालों ने उसपर अमल भी किया और अपने-अपने तजरिबों से भी आगाह किया।

अरबी भाषा में बहुत-सी अच्छी और लाभदायक चीज़ें मौजूद हैं लेकिन हमारे इदारों और संस्थाओं में अनुवाद की कोई उचित व्यवस्था न होने की वजह से न सिर्फ़ अरबी बल्कि कुछ दूसरी भाषाओं की फ़ायदेमन्द चीज़ों से भी उर्दू/हिन्दी जाननेवाले महरूम हैं। यह सिर्फ़ एक अच्छा संयोग है कि जनाब मुहम्मद ज़हीरुद्दीन भट्टी साहब को यह सिलसिला पसन्द आया और इतना पसन्द आया कि उन्होंने इसका उर्दू में अनुवाद कर डाला। उसी उर्दू अनुवाद को सामने रखकर यह हिन्दी अनुवाद पेश किया जा रहा है।

इस किताब में जो तजरिबे बयान किए गए हैं, उनमें क़ुरआन मजीद पर अमल के फ़ायदे और उनके फल दो और दो चार की तरह वाज़ेह तौर पर सामने आते हैं। इनसे बुनियादी अक़ीदे ठीक होते हैं और यह अन्दाज़ा भी होता है कि मुस्लिम-समाज में औरतों के मसले एक जैसे हैं। यक़ीनन हमारी बहनें इसमें अपने लिए बहुत कुछ मार्गदर्शन पाएँगी।

इस किताब से मर्द भी फ़ायदा उठा सकते हैं और क़ुरआन के अहकाम पर अमल करने का अभ्यास कर सकते हैं। दर्सगाहों और कॉलेजों के छात्र-छात्राओं के लिए ज़्यादा मौक़ा है कि वे इस पर अमल करें और इस पैग़ाम को अपने घरों, परिवारों और समाज के दूसरे तबक़ों में ले जाएँ।

इस किताब में जगह-जगह यह बात पाठकों के सामने आएगी कि औरतें मस्जिद में नमाज़ पढ़ रही हैं और क़ुरआन का दर्स दे रही या सुन रही हैं। इस बात से कुछ लोगों को हैरत हो सकती है और उनके मन में औरतों के मस्जिद में जाने और वहाँ नमाज़ पढ़ने या दर्से-क़ुरआन देने या सुनने के बारे में सवाल पैदा हो सकते हैं। इसलिए यहां इस बात को वाज़ेह करना ज़रूरी मालूम होता है कि औरतों के लिए मस्जिद में नमाज़ पढ़ना और वहाँ दर्से-क़ुरआन या दूसरे दीनी प्रोग्राम करना जाइज़ है बस शर्त यह है कि औरतों के लिए जगह अलग से मुक़र्रर हो। मर्दों के साथ उनका ख़लत-मलत न हो और इस बारे में इस्लाम की तालीमात और हिदायतों को सामने रखा जाए। कुछ मुस्लिम देशों में तो मस्जिदों में औरतों के लिए बाक़ायदा इन्तिज़ाम है। हमारे देश में भी इस तरह का इन्तिज़ाम किया जा सकता है।

—प्रकाशक

क़ुरआन के ज़रिए इन्क़िलाब और उसके तक़ाज़े

अल्लाह के रसूल हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) का इरशाद है—

"जिसने अल्लाह की किताब का एक हर्फ़ (अक्षर) पढ़ा, उसके लिए एक नेकी है और एक नेकी का फल दस नेकी का होता है। मैं यह नहीं कहता कि अलिफ़-लाम-मीम एक हर्फ़ है। अलिफ़, लाम और मीम हर एक अलग-अलग हर्फ़ (अक्षर) हैं।" (हदीस : तिरमिज़ी)

इस हदीस से यह ग़लत मतलब लिया गया है कि क़ुरआन की तिलावत (पाठ) बिना सोचे-समझे की जाए और उसपर अमल न किया जाए तब भी वही अज्र (फल) और सवाब मिलता है। जिस तरह क़ुरआन मजीद की आयतें एक-दूसरे की वज़ाहत और व्याख्या करती हैं, उसी तरह हदीस की वज़ाहत भी क़ुरआनी आयतों और दूसरी हदीसों से होती है। क़ुरआन मजीद ने तो ग़ौर-फ़िक्र करने पर ज़ोर दिया है—

"क्या उन लोगों ने क़ुरआन पर ग़ौर नहीं किया, या (उनके) दिलों पर ताले चढ़े हुए हैं।" (क़ुरआन, सूरा-47 मुहम्मद, आयत-24)

हदीसों में भी पढ़ना और अमल करना दोनों को एक साथ बयान किया गया है। नबी (सल्ल॰) ने फ़रमाया—

"जिसने क़ुरआन पढ़ा और जो कुछ क़ुरआन में है उस पर अमल किया उसके माँ-बाप को क़ियामत के दिन एक ताज पहनाया जाएगा।" (हदीस : अहमद, अबू-दाऊद)

अगर क़ुरआन के पढ़ने का एकमात्र मक़सद अज्र और सवाब हासिल

करना है तो फिर बहुत से ऐसे वज़ीफ़े (जाप) और कलिमात (वाक्य) हैं, जिन्हें पढ़कर हम कहीं ज़्यादा तादाद में सवाब कमा सकते हैं। मिसाल के तौर पर नबी (सल्ल०) का फ़रमान है—

"जो बाज़ार में जाए और यह पढ़ ले :

﴿لاإِلٰهَ إِلَّا اللّٰهُ وَحْدَهُ لا شَرِيْكَ لَهُ، لَهُ الْمُلْكُ وَلَهُ الْحَمْدُ يُحْيِيْ وَيُمِيْتُ وَهُوَ حَيٌّ لا يَمُوْتُ بِيَدِهِ الْخَيْرُ وَهُوَ عَلٰى كُلِّ شَيْئٍ قَدِيْرٌ﴾

ला इला-ह इल्लल्लाहु वहदहू ला शरी-क लहु लहुल्मुल्कु व लहुलहम्दु युहयी व युमीतु व हु-व हय्युन ला यमूतु बियदिहिलख़ैर व हु-व अला कुल्लि शैइन क़दीर।"

"तो इसे पढ़नेवाले को दस लाख नेकियाँ मिलेंगी और उसके दस लाख गुनाह मिटा दिए जाएँगे और उसके लिए जन्नत में घर बनाया जाएगा।" (हदीस : अल-जामिउस्सग़ीर)

इन लाइनों का मक़सद क़ुरआन मजीद के पढ़ने पर मिलनेवाले अज्र (फल) और सवाब की शान कम करना नहीं, बल्कि यह है कि मुसलमान क़ुरआन मजीद के बारे में अपने अमली रवैये में बदलाव लाएँ। क़ुरआन मजीद की हक़ीक़ी क़द्रो-क़ीमत और बरकत उसके मानी में रखी गई है। शब्द तो मानी तक पहुँचने का सिर्फ़ एक ज़रिआ हुआ करता है। नबी (सल्ल०) का इरशाद है, "जिसने एक अक्षर पढ़ा उसके लिए दस नेकियाँ हैं" का मक़सद अज्र और सवाब बताकर मुस्लिम उम्मत को क़ुरआन से जुड़े रहने पर तरग़ीब देना (उत्प्रेरित करना) है। आप (सल्ल०) के इस फ़रमान का हरगिज़ यह मक़सद नहीं कि मुसलमान किसी जगह बैठकर सिर्फ़ अल्फ़ाज़ को पढ़ डाले और मानी-मतलब न समझे। अगर किसी इल्म हासिल करनेवाले का बाप उसे यह कहता है कि बेटा पढ़ो तो उसका मक़सद यह हरगिज़ नहीं होता कि बेटा सिर्फ़ शब्दों को पढ़ ले और सबक़ को न समझे।

अगर हम क़ुरआन मजीद के उतारे जाने के सबसे बड़े मक़सद को सामने रखें और फिर प्यारे नबी (सल्ल०) के बयान को उसके साथ जोड़कर देखें तो यह बात सामने आएगी कि सवाब बताकर तरग़ीब देने का मक़सद

यह है कि मुसलमान क़ुरआन को हमेशा पढ़ते रहें, इस क़ुरआन से हिदायत पाएँ और अपनी सारी अख़्लाक़ी और रूहानी बीमारियों से शिफ़ा (स्वास्थ्य) हासिल करें। क़ुरआन की बातों के मानी और मक़सद को समझे बग़ैर उसका सवाब के लिए पढ़ लेना बहुत कम पर क़नाअत (सन्तोष) कर लेना है, अस्ल मक़सद तो अमल है और अमल की नौबत तो समझने के बाद ही आया करती है।

ख़ुदा से डरनेवाली औरत ने एक बच्ची को अपने घर में रखा। यह बच्ची ग़रीब माँ-बाप की थी जो उसके पालने-पोसने की ताक़त नहीं रखते थे। इस औरत ने बच्ची को अपने घर में हर तरह के आराम और प्यार से रखा। घर में ख़िदमत के लिए नौकरानी पहले से मौजूद थी। बच्ची को लिबास, पोशाक, खाने-पीने और तालीम (शिक्षा) वग़ैरा सभी क़िस्म की सहूलतें हासिल थीं। वह लिख-पढ़ गई, बड़ी हो गई तो औरत ने पहली नौकरानी को छुट्टी दे दी और घर में पली, लिखी-पढ़ी और बड़ी हो गई लड़की को ख़ादिमा की जगह पर रख लिया और सुबह-सवेरे इस ख़ादिमा को सब काम एक काग़ज़ पर लिखकर दे दिए। बच्चों को नहलाना, कपड़े धोना और इस्तरी (प्रेस) करना, घर की सफ़ाई-सुथराई और खाना पकाना वग़ैरा। अमीर औरत यह काग़ज़ देकर मुत्मइन हो गई। जब वह दोपहर के वक़्त घर वापस आई तो देखा कि नई नौकरानी ने कोई भी काम नहीं किया। बुलाकर पूछा तो जवाब मिला कि मैंने आपकी तहरीर (लिखे हुए काग़ज़) को बड़े एहतिराम से चूमा और उसे बार-बार पढ़ती रही हूँ, यहाँ तक कि यह तहरीर मुझे ज़बानी याद हो चुकी है। यह जवाब सुनकर उस अमीर औरत का क्या रद्दे-अमल होगा? क्या वह उस पली-बढ़ी हुई नौकरानी को तनख़ाह, पोशाक, ख़ुराक और रिहाइश का इन्तिज़ाम करेगी या नाराज़ होकर उसे घर से बाहर निकाल देगी? क्या हम मुसलमानों का क़ुरआन मजीद के साथ अमली रवैया उस नौकरानी जैसा नहीं है? हम क़ुरआन की आयतों के पढ़ लेने को काफ़ी समझते हैं और अमल नहीं करते। क्या इस सूरत में हम अल्लाह के इनाम के हक़दार ठहर सकते हैं?

क़ुरआन मजीद तो आयतों को समझने और उनपर अमल करने की

हिदायत करता है। फ़रमाया है–

"यह एक बड़ी बरकतवाली किताब है जो (ऐ नबी) हमने तुम्हारी तरफ़ उतारी है ताकि ये लोग इसकी आयतों पर ग़ौर करें और अक़्ल और फ़िक्र रखनेवाले इससे सबक़ लें।"

(क़ुरआन, सूरा-38 साद, आयत-29)

अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने हज़रत अब्दुल्लाह बिन-अम्र-बिन-अल-आस (रज़ि॰) से कहा कि–

"तीन दिन से कम में क़ुरआन मजीद ख़त्म न करो।"

आप (सल्ल॰) ने इस फ़रमान की वजह यह बताई कि–

"तीन दिनों से कम में क़ुरआन मजीद पढ़नेवाला उसे न समझ सकेगा।" (अल-जामिउस्सग़ीर)

हममें से हर आदमी जिस किताब को सुनता या पढ़ता है उसे समझने की भी कोशिश करता है। सवाल यह है कि हम इस क़ायदे और नियम को क़ुरआन मजीद पर क्यों नहीं लागू करते? इस्लाम के एक बड़े आलिम इब्ने-तैमिया (रह॰) बयान करते हैं–

"यह मालूम है कि हर कलाम (वाणी) के मानी को समझना ही उसका मक़सद हुआ करता है, सिर्फ़ उसके शब्दों को पढ़ लेना उसका मक़सद नहीं हुआ करता। तो फिर क़ुरआन मजीद इस बात का ज़्यादा हक़दार है और इस लायक़ है कि उसे समझा जाए।"

(मुक़द्दिमा, उसूले-तफ़सीर इब्ने-तैमिया, पृष्ठ-75)

एक और आलिम हसन अल-हुज़ैबी (रह॰) कहते हैं–

"तिलावत में इनसान के पढ़ने की तादाद का ऐतिबार नहीं है, असूल ऐतिबार तो उसके समझने की मिक़दार का है। क़ुरआन मजीद मानी से अलग होकर प्यारे नबी (सल्ल॰) पर सिर्फ़ बरकत के लिए नाज़िल नहीं हुआ, बल्कि क़ुरआन की बरकत उसपर अमल करने में और उसे ज़िन्दगी का क़ानून बनाने में है। क़ुरआन मजीद चलनेवालों के लिए राहें रौशन करता है। इसी लिए हमारा फ़र्ज़ है

कि जब हम क़ुरआन मजीद पढ़ें तो तिलावत से हमारा मक़सद यह जानना हो कि इसका अर्थ क्या है? इसके लिए क़ुरआन की आयतों में ग़ौर-फ़िक्र करना होगा, उन्हें समझना होगा और उनपर अमल करना होगा।"

(मक़ालातुल-इस्लामीयीन फ़ी रमज़ान—मुहम्मद मूसा अश्-शरीफ़, पृष्ठ-426)

क़ुरआन मजीद में एक आयत है जिसमें कहा गया है कि—

"क्या ये लोग क़ुरआन पर ग़ौर नहीं करते? अगर ये अल्लाह के सिवा किसी और की तरफ़ से होता तो इसमें बहुत कुछ इख़्तिलाफ़ पाया जाता।" (क़ुरआन, सूरा-4 निसा, आयत-82)

इसकी व्याख्या में अल्लामा क़ुर्तबी (रह॰) लिखते हैं—

"यह आयत क़ुरआन मजीद में ग़ौर-फ़िक्र करने को वाजिब और ज़रूरी होने की दलील पेश करती है ताकि क़ुरआन के मानी व मतलब मालूम हो सकें।"

(अल-जामिउ लि-अहकामिल-क़ुरआन लिल्क़ुर्तबी, जिल्द-5, पृष्ठ-187)

क़ुरआन मजीद पर ग़ौरो-फ़िक्र और सोच-विचार करना अगरचे पढ़ने और सुननेवाले पर वाजिब है, मगर यह ख़ुद मक़सद नहीं है, बल्कि ग़ौरो-फ़िक्र तो इसलिए है कि इसपर अमल किया जाए और फिर क़ुरआन के चमत्कारी नतीजों को अपनी आँखों से देखा जाए।

क़ुरआन एक अज़ीम मोजिज़ा

दुनिया के सारे मुसलमान यह जानते हैं कि क़ुरआन मजीद अल्लाह की तरफ़ से इनसानों के लिए आनेवाला एक महान चमत्कार है। मगर यह हक़ीक़त बहुत कम लोग जानते हैं कि इस मोजिज़ा में वह क्या बात है, जिसकी वजह से यह पहले के तमाम मोजिज़ों से आगे बढ़ गया है? इल्म रखनेवाले कुछ लोगों का ख़याल है कि क़ुरआन मजीद की सर्वश्रेष्ठता उसके बयान के उसूल और अदबी तरीक़े में है और क़ुरआन ने इसका चैलेन्ज भी

किया है। कभी लोग कहते हैं कि क़ुरआन हर ज़माने और हर जगह के लिए उपयुक्त और मुनासिब है, इसलिए मोजिज़ा (चमत्कार) है। क़ुरआन मजीद के सर्वश्रेष्ठ होने की सबसे बड़ी दलील यह है कि इसमें इनसानों की ज़िन्दगी को बदलकर रख देने की क्रान्तिकारी सलाहियत है। हर इनसान को बदल डालना ताकि वह एक नए प्रकार का इनसान बनकर अल्लाह की क़ुर्बत रखनेवाला, इबादत करनेवाला, अपने सारे मामलों और हालतों में अल्लाह की फ़रमाँबरदारी करनेवाला बन जाए।

तब्दीली की कैफ़ियत

क़ुरआन जो तब्दीली पैदा करता है उसकी शुरुआत दिल में क़ुरआनी नूर के दाख़िल होने से होती है। यह नूर दिल में गुनाहों, ग़फ़लतों और ख़ाहिशों की पैरवी से जन्म लेनेवाले अन्धेरे को दूर करता है। दिल में नूर धीरे-धीरे बढ़ता चला जाता है और दिल में पैदा होनेवाले तमाम एहसासों में रौशनी और ज़िन्दगी का एहसास होता है। क़ुरआन को समझने के नतीजे में इनसान एक नई ज़िन्दगी से परिचित हो जाता है। ख़ुदा का फ़रमान है—

> "क्या वह आदमी, जो पहले मुर्दा था फिर हमने उसे ज़िन्दगी दी और उसको वह रौशनी दी जिसके उजाले में वह लोगों के बीच ज़िन्दगी की राह तय करता है, उस आदमी की तरह हो सकता है जो अन्धेरों में पड़ा हुआ हो और किसी तरह उनसे न निकलता हो?" (क़ुरआन, सूरा-6 अनआम, आयत-23)

मालूम हुआ कि क़ुरआन एक रूह (आत्मा) है जो दिल में जाकर उसे ज़िन्दा कर देती है। अल्लाह तआला पैग़म्बर को मुख़ातब करके फ़रमाता है—

> "और इसी तरह ऐ नबी! हमने अपने हुक्म से एक रूह तुम्हारी तरफ़ वह्य (प्रकाशना) की है। तुम्हें कुछ पता न था कि किताब क्या होती है और ईमान क्या होता है, मगर इस रूह को हमने रौशनी बना दिया, जिससे हम राह दिखाते हैं अपने बन्दों में से जिसे चाहते हैं।" (क़ुरआन, सूरा-42 शूरा, आयत-52)

ज्यों ही रूह दिल में बस जाती है तो दिल ईमान की रौशनी से जगमगा उठता है, ख़ाहिशें, इच्छाएँ और दुनिया की मुहब्बत दिल से निकल जाती है। इसका बिलकुल साफ़ असर इनसान के रवैये पर पड़ता है।

प्यारे नबी (सल्ल॰) से सहाबा (रज़ि॰) ने पूछा था कि—

"अब क्या वह आदमी जिसका सीना इस्लाम के लिए खोल दिया गया और वह अपने रब की तरफ़ से एक रौशनी पर चल रहा है (उस आदमी के समान है जो कठोर हृदय और अल्लाह की याद से ग़ाफ़िल है)..."।

इस आयत में 'सीना खोल दिया गया' से क्या मुराद है? तो आप (सल्ल॰) ने कहा—

"जब नूर दिल में दाख़िल हो जाता है तो दिल खिल और खुल जाता है।"

हमने पूछा कि ऐ अल्लाह के रसूल! उसकी पहचान क्या है? कहा—

"हमेशा के घर (आख़िरत) की तरफ़ लगाव और उन्मुख रहना और दुनिया से बेरुख़ी और मौत आने से पहले उसके लिए तैयारी।"

(हदीस : बैहक़ी, अल-हाकिम)

क़ुरआनी असर की ताक़त

ख़ुदा का फ़रमान है—

"और अगर कोई ऐसा क़ुरआन होता, जिसके ज़ोर से पहाड़ चलने लगते या ज़मीन फट जाती या मुर्दे क़ब्रों से निकलकर बोलने लगते? (तब भी वे लोग ईमान न लाते) बल्कि सारा इख़्तियार ही अल्लाह के हाथ में है।" (क़ुरआन, सूरा-13 रअ़द, आयत-31)

यक़ीनन क़ुरआन मजीद की असरदारी हमारे सोच-विचार से भी बहुत ज़्यादा ताक़तवर है। अल्लाह ने इसकी मिसाल इस तरह बयान की है—

"अगर हमने यह क़ुरआन किसी पहाड़ पर भी उतार दिया होता

तो तुम देखते कि वह अल्लाह के डर से दबा जा रहा है और फटा जाता है। ये मिसालें हम लोगों के सामने इसलिए बयान करते हैं कि वे ग़ौर करें।" (क़ुरआन, सूरा-59 हश्र, आयत-21)

अल्लामा क़ुर्तबी इस आयत की व्याख्या में लिखते हैं—

"अगर पहाड़ों को अक़्ल दी जाती और फिर इस क़ुरआन के ज़रिए उनसे ख़िताब (सम्बोधन) किया जाता तो पहाड़ क़ुरआनी नसीहतों के सामने झुक जाते और अपनी सख़्ती और मज़बूती के बावजूद आप उन्हें ख़ुदा के ख़ौफ़ से फटा हुआ देखते।"

(अल-जामिउ लि-अहकामिल-क़ुरआन, जिल्द-18, पृष्ठ-30)

इस मिसाल से स्पष्ट है कि क़ुरआन मजीद अपने असर की ताक़त की वजह से हर एक पर हुज्जत है, इसी लिए उस आदमी का दावा ग़लत है जो कहता है कि वह क़ुरआन समझने के क़ाबिल नहीं।

क़ुरआन के ज़रिए बदलाव के नमूने

हर वह आदमी जो क़ुरआन को हिदायत की किताब और इलाज के तौर पर क़बूल करता है और क़ुरआन मजीद के साथ उसका रवैया सच्चा होता है, उसके व्यक्तित्व (शख़्सियत) में क़ुरआन बड़ा इन्क़िलाब पैदा कर देता है और उसे एक नए साँचे में ढाल देता है। क़ुरआन के ज़रिए जिन लोगों की ज़िन्दगियों में बदलाव आया उनका अमली नमूना सहाबा (रज़ि॰) हैं। वे इस्लाम से पहले जाहिलियत की इन्तिहा (चरम) पर थे, मगर क़ुरआन की कुठाली (Crucible) से निकले तो ऐसे इनसान थे जिन पर इनसानियत आज तक फ़ख़्र (गर्व) करती है।

क़ुरआन मजीद में इनसानी ज़िन्दगियों में इन्क़िलाब पैदा करने की ताक़त, असरदारी और क़ाबिलियत कितनी है? इसका अन्दाज़ा भला कौन कर सकता है? कौन यह सोच सकता है कि एक क़ौम जो रेगिस्तान में रहती हो, ग़रीब हो, नंगे पाँव हो, लिबास की पाबन्द न हो, इल्म और सूझ-बूझ से ख़ाली हो, अपने ज़माने की सुपर पॉवर क़ौमों में उसे गिना न जाता हो, उस क़ौम को बदलने के लिए क़ुरआन आता है, ताकि उसका नवनिर्माण

करे, उसे ज़मीन की पस्ती से उठाकर आसमान की ऊँचाई तक पहुँचा दे। उस क़ौम के दिलों को अल्लाह से जोड़ दे ताकि उस क़ौम का लक्ष्य और मक़सद सिर्फ़ अल्लाह बन जाए। क़ुरआन मजीद ने यह तब्दीली कुछ ही वर्षों में कर दी और साबित कर दिया कि इस बुनियादी तब्दीली के लिए थोड़ा-सा समय ही काफ़ी है। यह किस तरह मुमकिन हुआ? अस्ल में क़ुरआन मजीद के ज़रिए तब्दीली के लिए ज़रूरी है कि क़ौम इस बदलाव के लिए तैयार हो। क़ुरआन में है–

> "हक़ीक़त यह है कि अल्लाह किसी क़ौम की हालत को नहीं बदलता जब तक वह ख़ुद अपने आचरण को नहीं बदल देती।"
> (क़ुरआन, सूरा-13 रअद, आयत-11)

कुछ ही सालों के बाद उस रेगिस्तान के दिल से एक नई ताक़त उभरी जिसने रोम और फ़ारस की बड़ी-बड़ी और पुरानी हुकूमतों को मिटाकर रख दिया और सम्मान और अपमान के पैमाने बदल दिए।

क़ुरआन मजीद पर अल्लाह के रसूल (सल्ल०) का अमल

सहाबा (रज़ि०) में क़ुरआन के ज़रिए जो बुनियादी बदलाव आया उसकी वजह उनका क़ुरआन से ताल्लुक़ था। वे क़ुरआन की क़द्र और क़ीमत से पूरी तरह परिचित थे और उसके उतारे जाने के मक़सद को ख़ूब समझे हुए थे। इस सिलसिले में उनके लिए नमूना और अच्छा चरित्र उनके शिक्षक और प्रशिक्षक प्यारे नबी (सल्ल०) थे। नबी (सल्ल०) की ज़िन्दगी की धुरी ही क़ुरआन था। आप (सल्ल०) की पूरी ज़िन्दगी क़ुरआन के रंग में रंगी हुई थी। आप क़ुरआन की हर सूरा को ठहर-ठहरकर पढ़ा करते थे। एक बार आप (सल्ल०) पूरी रात अपनी तहज्जुद की नमाज़ में इस एक आयत को ही दुहराते रहे–

> "अगर आप उन्हें सज़ा दें तो वे आपके बन्दे हैं और अगर आप उन्हें माफ़ कर दें तो आप हाकिम और सब कुछ जाननेवाले हैं।"
> (क़ुरआन, सूरा-5 माइदा, आयत-118)

अल्लाह के रसूल (सल्ल०) क़ुरआन का प्रभाव कितना ज़्यादा लेते थे,

इसका कुछ अन्दाज़ा आप (सल्ल०) की इस बात से हो सकता है—

"मुझे सूरा हूद और उस जैसी सूरतों ने वक़्त से पहले ही बूढ़ा कर दिया।" (जामिउस्सग़ीर)

नबी (सल्ल०) क़ुरआन मजीद पर अमल करने में मुसलमानों के लिए एक नमूना थे। नबी (सल्ल०) की ज़िन्दगी क़ुरआन को चरितार्थ करती थी। हज़रत आइशा (रज़ि०) ने बहुत सही फ़रमाया था—

"क़ुरआन आप (सल्ल०) का अख़लाक़ और किरदार था।"

मुसलमानों का फ़र्ज़ है कि वे किताब की शक्ल में क़ुरआन मजीद पढ़ने के साथ अल्लाह के रसूल (सल्ल०) की जीवनी का भी अध्ययन करें। इसलिए कि नबी (सल्ल०) चलता-फिरता क़ुरआन थे। नबी (सल्ल०) की जीवनी, रात-दिन के सारे काम, बोल और बातें सब क़ुरआन की अमली शक्लें हैं। क़ुरआन आप (सल्ल०) पर उतरता था, इसलिए सबसे पहले आप (सल्ल०) ही उसपर अमल करते थे। क़ुरआन मजीद के क़ानूनों की पैरवी सबसे पहले आप (सल्ल०) ही किया करते थे। आप (सल्ल०) यह सब किसी मजबूरी की वजह से नहीं बल्कि ख़ुदा की ख़ुशनूदी के लिए करते थे। क़ुरआन की मुहब्बत आप (सल्ल०) के पाक दिल में घर कर गई थी, क़ुरआन की पैरवी से आप (सल्ल०) का दिल धड़कता था। क़ुरआन की पैरवी आप (सल्ल०) के सोच-विचार का केन्द्र थी। आप (सल्ल०) क़ुरआन के हुक्मों पर अमल करने के लिए बेताब रहते थे। इस सिलसिले में अपने नफ़्स के तज़किया, हिम्मत और हौसले को ख़ूब काम में लाते थे। आइए यहाँ पर हम कुछ मिसालें देखें कि आप (सल्ल०) किस शान के साथ क़ुरआन के हर हुक्म को पूरा किया करते थे।

हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) नबी होने के ऐलान से पहले लोगों से अलग-थलग रह रहे थे और हिरा नामी पहाड़ की गुफा में एकान्तवास और सोच-विचार के दिन बिता रहे थे। जब वह्य (प्रकाशना) से नवाज़ दिया गया और क़रीबी रिश्तेदारों और फिर सारे इनसानों को डराने और उन तक अल्लाह का पैग़ाम पहुँचाने का हुक्म मिला, तो आप (सल्ल०) ने एकान्तवास और तन्हाई

की ज़िन्दगी फ़ौरन छोड़ दी और अपने-आपको अल्लाह की तरफ़ लोगों को बुलाने यानी दावत के लिए वक्फ़ कर दिया। मक्का की बड़ी ताक़तों और क़बीलों के कड़े विरोधों की कोई परवाह न की। आप (सल्ल०) ने अपनी पूरी ज़िन्दगी को दावत का अमल बना दिया। न कभी उकताए, न थके और आख़िरी साँस तक इसी में लगे रहे।

क़ुरआन मजीद ने नबी (सल्ल०) को सब्र और साबित क़दम रहने का हुक्म दिया तो आप (सल्ल०) मक्का में हक़ के इनकारियों के विरोधों, ताइफ़ में जाहिलों के अत्याचारों और मदीना में यहूदियों और मुनाफ़िक़ों (कपटाचारियों) की साज़िशों के सामने सब्र और जमाव का एक पहाड़ मालूम होते थे।

मदीने में जिहाद का हुक्म मिला तो मदनी ज़िन्दगी जिहाद में ढल गई। छोटी-बड़ी लड़ाइयाँ, जंग और सुलह (सन्धि), जंगी मुहिमें, फ़ौजी तैयारी और जीतों का सिलसिला ये सब क्या था? क़ुरआन के हुक्मों पर अमल ही तो था!

क़ुरआन मजीद ने प्यारे नबी (सल्ल०) को परेशान और कमज़ोर लोगों की मदद का हुक्म दिया तो आप (सल्ल०) ने क़र्ज़ ले-लेकर भी ज़रूरतमन्दों की मदद की। वे मुहताजी और फ़ाक़े की भी परवाह नहीं किया करते थे। तुन्दो-तेज़ हवा से भी बढ़कर सख़ावत (दानशीलता) दिखाया करते थे।

क़ुरआन ने आप (सल्ल०) को वादे को पूरा करने का हुक्म दिया तो हालत यह थी कि दुश्मन तक भी आपके वादों पर यक़ीन किया करते थे।

क़ुरआन ने दरगुज़र और माफ़ कर देने के लिए कहा तो आप (सल्ल०) ने अपने सख़्त दुश्मनों तक को माफ़ कर दिया और कभी आपने अपना ज़ाती बदला नहीं लिया।

क़ुरआन ने रहम करने का हुक्म दिया तो आप (सल्ल०) इनसानों पर इतने मेहरबान थे, जितनी एक माँ अपने छोटे बच्चे पर मेहरबान होती है, बल्कि उससे भी बढ़कर।

क़ुरआन ने आप (सल्ल०) को पूरे इनसाफ़ से काम लेने के लिए कहा तो आपके न्याय पर हैरत आप (सल्ल०) के साथियों को ही नहीं बल्कि आप

(सल्ल॰) के दुश्मनों तक को हुआ करती थी।

क़ुरआन अगर आगे आनेवाले किसी वक़्त में होनेवाली घटना और मामले की आप (सल्ल॰) को ख़ुशख़बरी देता तो आप (सल्ल॰) के नज़दीक यह बाद में होनेवाली घटना आँखों देखी से ज़्यादा भरोसा करने के लायक़ साबित होती।

क़ुरआन मजीद ने नबियों के सच्चे क़िस्से बयान करने के बाद आप (सल्ल॰) को हुक्म दिया—

"ऐ नबी! वही लोग अल्लाह की तरफ़ से हिदायत पाए हुए थे, उन्हीं के रास्ते पर तुम चलो।" (क़ुरआन, सूरा-6 अनआम, आयत-90)

प्यारे नबी (सल्ल॰) को यह हुक्म मिला तो आप (सल्ल॰) ने उन सच्चे नबियों की तमाम ख़ूबियों को अपना लिया जिनकी क़ुरआन मजीद में अल्लाह ने तारीफ़ (प्रशंसा) की थी। हज़रत नूह (अलैहि॰) का अपनी दावत पर जमे रहना, हज़रत इबराहीम (अलैहि॰) की मुहब्बत और पक्का इरादा, हज़रत मूसा (अलैहि॰) का दिली ख़ुलूस और मज़बूती, हज़रत ईसा (अलैहि॰) की परहेज़गारी, ख़ुदा का डर और नर्मदिली, हज़रत इसमाईल (अलैहि॰) की अपने रब के हुक्म के सामने फ़रमाँबरदारी और सिर झुका देना, हज़रत दाऊद (अलैहि॰) की फ़रमाँबरदारी और ख़ुदा का गुणगान, हज़रत सुलैमान (अलैहि॰) की तत्वदर्शिता, सूझ-बूझ और शुक्रगुज़ारी, हज़रत यूसुफ़ (अलैहि॰) की पाकदामनी और ख़ुदा का एहसान मानने का जज़्बा और हज़रत अय्यूब (अलैहि॰) का सब्र।

सारे ही नबियों (अलैहि॰) को एक ख़ुदा के ईमान पर जमे रहने और तौहीद के अक़ीदे के प्रचार-प्रसार का हुक्म मिला था। मगर जिस शान के साथ हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) ने दुनिया में तौहीद (एकेश्वरवाद) का डंका बजाया, अपनी उम्मत को तौहीद की अहमियत से आगाह किया उसकी मिसाल कहीं नहीं मिलती। यहाँ तक कि आप (सल्ल॰) ने शिर्क और बहुदेववाद के ज़ाहिरी और बातिनी (अन्दरूनी) पहलू से अपनी उम्मत को ख़बरदार किया और खुले-छिपे शिर्क के हर दरवाज़े को बन्द कर

दिया।

क़ुरआन मजीद ने हुक्म दिया–

"अतः ऐ नबी! तुम बस अल्लाह की बन्दगी करो और शुक्रगुज़ार बन्दों में से हो जाओ।"

(क़ुरआन, सूरा-39 ज़ुमर, आयत-66)

आप (सल्ल॰) इबादत और शुक्र अदा करने में रात-दिन गुज़ार देते। रात को आराम करने के बाद जब जागते तो अल्लाह की तारीफ़ और शुक्रगुज़ारी के वाक्य ज़बान से निकालते और फिर पूरे दिन हर-हर मौक़े पर अल्लाह की तारीफ़ और शुक्रिया अदा करते रहते। खाना खाने के बाद, दूध और पानी पीने के बाद, लिबास पहनने के बाद, आईना देखने के बाद, पहली रात का चाँद देखने के बाद, वुज़ू करने के बाद, वुज़ू के दौरान, पाख़ाना-पेशाब के लिए जाने से पहले और उसके बाद, किसी बीमार का हाल पूछते वक़्त, नया फल खाते हुए—मतलब यह कि आप (सल्ल॰) की पवित्र ज़िन्दगी का कोई ऐसा पल न था जिसमें आप (सल्ल॰) अल्लाह की तारीफ़ और शुक्रगुज़ारी से ख़ाली होते। रात को सोते तो बहुत-सी दुआएँ और हम्दो-शुक्र के बोल अदा करके सोते। क़ुरआन मजीद ने हुक्म दिया–

"खाओ-पियो और हद से आगे न बढ़ो।"

(क़ुरआन, सूरा-7 आराफ़, आयत-31)

आप (सल्ल॰) ने फ़ुज़ूलख़र्ची से बचने की हिदायत दी, कहा–

"हम ऐसे लोग हैं कि जब तक भूख न लगे खाते नहीं और अभी भूख बाक़ी होती है कि खाना छोड़ देते हैं।"

आप (सल्ल॰) अपने साथियों से कहा करते थे–

"पानी का अधिक इस्तेमाल भी हद से आगे बढ़ जाना है, इसलिए पानी में भी फ़ुज़ूलख़र्ची न करो, अगरचे तुम बहती नदी पर ही हो।"

क़ुरआन हमको पानी की नेमत के बारे में कहता है—

"हम चाहें तो उसे बिलकुल खारा बनाकर रख दें, फिर क्यों तुम शुक्रगुज़ार नहीं होते।" (क़ुरआन, सूरा-56 वाक़िआ, आयत-70)

आप (सल्ल०) पानी पीने के बाद यह दुआ पढ़ा करते थे—

"अल्लाह के लिए बड़ाई और एहसानमन्दी है, जिसने अपनी रहमत से पानी को भी मीठा और स्वादयुक्त बना दिया और अगर वह चाहता तो हमारे (इनसानों के) गुनाहों की वजह से उसे बिलकुल खारा और सख़्त कड़ुवा बना देता।"

क़ुरआन कहता है—

"अपने पालनहार की प्रशंसा के साथ उसकी तसबीह (महिमागान) करो और उसकी ख़िदमत में सजदा करो।"

(क़ुरआन, सूरा-15 हिज्र, आयत-98)

और कहा—

"और अपने रब की बड़ाई और बन्दगी के साथ उसकी तसबीह करो सूरज निकलने से पहले और डूबने से पहले और रात के वक़्तों में भी तसबीह करो और उनके किनारों पर भी, शायद कि तुम राज़ी हो जाओ।" (क़ुरआन, सूरा-20 ता०हा०, आयत-130)

क़ुरआन के इस हुक्म को पूरा करने में अल्लाह के रसूल (सल्ल०) की पाक ज़बान हर वक़्त ख़ुदा के ज़िक्र से तर रहती थी। सूरज निकलने से पहले, सूरज निकलने के बाद, अज़ान के साथ-साथ, अज़ान के बाद, नमाज़ से पहले, नमाज़ में और नमाज़ के बाद, रात और दिन के हर मुनासिब मौक़ों पर, मानो कि पूरा दिन और रात का बड़ा हिस्सा ख़ुदा की बड़ाई करने, महिमागान करने, इबादत करने, गुनाहों की माफ़ी चाहने और दुआ करने में गुज़रता था।

अल्लाह ने आप (सल्ल०) को सम्बोधित करके कहा—

"ऐ ओढ़-लपेटकर सोनेवाले, रात को नमाज़ में खड़े रहा करो मगर थोड़ा, आधी रात या उससे कुछ कम कर लो या उससे कुछ

ज़्यादा बढ़ा दो और क़ुरआन को ख़ूब ठहर-ठहरकर पढ़ो।''

(क़ुरआन, सूरा-73 मुज़्ज़म्मिल, आयतें-1-4)

अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) पूरी रात जागते रहते और नमाज़ में खड़े होकर अपने पालनहार से बातें करते रहते, यहाँ तक कि इस हालत में उनके मुबारक क़दम सूज जाते और जब कोई आराम के लिए मशवरा दिया करता तो आप (सल्ल॰) फ़रमाया करते कि—

''क्या मैं अल्लाह का शुक्रगुज़ार बन्दा न बनूँ।''

हम इन कुछ मिसालों पर बस करते हैं वरना सच्ची बात यह है कि आप (सल्ल॰) की पूरी ज़िन्दगी क़ुरआन का अमली नमूना थी। ऐसे थे हमारे प्यारे रसूल (सल्ल॰) हमारे लिए मिसाल और नमूना। आप (सल्ल॰) का दिन अमल, दावत, जिहाद, इनसाफ़ करने, बयान, ख़िताब, ज़िक्र, इबादत और रहनुमाई में बीतता। रात तहज्जुद, दुआ, तारीफ़, बड़ाई और अपने पैदा करनेवाले मालिक से बातचीत में बीत जाती। आप (सल्ल॰) ने इस तरह अपनी ज़िन्दगी के महीने और साल गुज़ार दिए और आप (सल्ल॰) के अमल करने के अन्दाज़ और काम के तरीक़े में तब्दीली न आई। ये थे हमारे सरदार, हमारे रसूल, हमारे रहनुमा और हमारे कमान्डर जिनपर क़ुरआन उतरा था।

- सबसे बेहतर आप (सल्ल॰) ने क़ुरआन समझा।
- सबसे बेहतर आप (सल्ल॰) ने ही क़ुरआन में ग़ौर-फ़िक्र किया।
- सबसे बेहतर आप (सल्ल॰) ने क़ुरआन मजीद को स्पष्ट किया।
- सबसे बढ़कर क़ुरआन की शिक्षा देनेवाले आप (सल्ल॰) ही थे।
- सबसे बढ़कर क़ुरआन की शिक्षाओं पर अमल करनेवाले आप (सल्ल॰) ही थे।

इसलिए क़ुरआन ने आप (सल्ल॰) को सारे इनसानों के लिए आदर्श ठहराया और क़ुरआन मजीद ने आप (सल्ल॰) के बारे में क्या ख़ूब फ़रमाया—

''अल्लाह और उसके फ़रिश्ते नबी (सल्ल॰) पर दुरूद भेजते हैं, ऐ लोगो जो ईमान लाए हो तुम भी उनपर दुरूद और सलाम भेजो।'' (क़ुरआन, सूरा-33 अहज़ाब, आयत-56)

सहाबा (रज़ि॰) का क़ुरआन से सम्बन्ध

क़ुरआन मजीद ने सहाबा (रज़ि॰) को बदलकर रख दिया। सहाबा (रज़ि॰) को क़ुरआन से कितना लगाव था और उनपर क़ुरआन का कितना असर था इसका कुछ अन्दाज़ा इस घटना से लगाया जा सकता है। 'ज़ातुर्रिक़ाअ' की जंग में अब्बाद-बिन-बिश्न (रज़ि॰) और अम्मार-बिन-यासिर (रज़ि॰) दोनों की बारी-बारी पहरा देने की ड्यूटी थी, ताकि रात के वक़्त कोई दुश्मन मुसलमानों की फ़ौज पर हमला न करे। हज़रत अब्बाद (रज़ि॰) ने हज़रत अम्मार (रज़ि॰) से कहा कि वह रात के पहले हिस्से में सो जाएँ, मैं पहरा दूँगा। जब हज़रत अब्बाद (रज़ि॰) ने पहरा देते हुए देखा कि ख़तरे की कोई बात नहीं, तो उन्होंने नमाज़ पढ़नी शुरू कर दी, इतने में एक दुश्मन आया और उसने तीर मारा। हज़रत अब्बाद (रज़ि॰) ने नमाज़ पढ़ने के दौरान ही तीर खींचकर निकाल दिया और नमाज़ पढ़ते रहे, यहाँ तक कि नमाज़ पूरी कर ली। फिर नमाज़ शुरू कर दी, दुश्मन ने दूसरा तीर मारा। हज़रत अब्बाद (रज़ि॰) नमाज़ में क़ुरआन मजीद की तिलावत कर रहे थे, उन्होंने खींचकर तीर निकाल दिया और अपनी नमाज़ पूरी की। एक बार फिर नमाज़ शुरू कर दी, दुश्मन ने तीसरा तीर मारा तो उन्होंने तीर निकाला और अपनी तिलावत पूरी की और हज़रत अम्मार (रज़ि॰) को जगाया। हज़रत अम्मार (रज़ि॰) ने कहा, आपने मुझे पहला तीर लगते ही जगा दिया होता? कहा, "मैं नमाज़ में एक सूरा पढ़ रहा था, इसलिए मैंने सूरा पूरी किए बिना नमाज़ ख़त्म करना मुनासिब न समझा। मगर जब दुश्मन बार-बार तीर मारता रहा तो मैंने नमाज़ पूरी करके आपको जगाया। ख़ुदा की क़सम! अगर मुझे इस बात का अन्देशा न होता कि अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने मुझे जिस जगह पहरा देने के लिए नियुक्त किया है, उसे ख़तरा पैदा हो गया है; तो मैं सूरा पढ़ता ही रहता या यह सूरा पूरी हो जाती या फिर इसी में मेरी जान चली जाती। (अस्सीरतुन-नबवीया लि-इब्ने-हिशाम)

क़ुरआन मजीद की असली क़द्र और क़ीमत उसके मानी और मतलब में छिपी है। क़ुरआन अपने पढ़नेवालों में बुनियादी तब्दीली पैदा कर देता है। उनकी अक़्ल को नए सिरे से बनाता और सँवारता है, उनके दिलों में नई

रूह फूँक देता है। उनकी तरबियत ऐसी कर देता है कि वे क़ुरआन को ख़ूब सोच-समझकर पढ़नेवाले, अल्लाह के गुणों के ज्ञाता, दिली ख़ुलूस और सूझ-बूझ से उसकी इबादत करनेवाले और अल्लाह के हुक्म और क़ानून की पाबन्दी करनेवाले हो जाते हैं। इनसानों में क़ुरआन मजीद के ज़रिए होनेवाला यह बदलाव सिर्फ़ उसी हालत में होता है जब उसका ख़ूब चिन्तन-मनन और सोच-समझकर अध्ययन किया जाए और उसपर अमल भी किया जाए। क़ुरआन के शब्दों को सिर्फ़ ज़बान से पढ़ लेने से न यह बदलाव आता है और न ही ये फ़ायदे और फल हासिल होते हैं। क़ुरआन पढ़नेवाले हज़ार बार भी क्यों न पूरा क़ुरआन पढ़ लें, सिर्फ़ सरसरी तौर पर और फ़र-फ़र तेज़ पढ़ने से कभी बदलाव नहीं आता।

पैग़म्बर के साथी यानी सहाबा (रज़ि॰) क़ुरआन मजीद को जल्दी-जल्दी पढ़ डालने को पसन्द नहीं करते थे। हज़रत आइशा (रज़ि॰) को बताया गया कि कुछ ऐसे लोग भी हैं कि उनमें से हर एक रात में दो या तीन बार पूरा क़ुरआन पढ़ डालता है। हज़रत आइशा (रज़ि॰) ने कहा—

> "उन लोगों ने पढ़ा, मगर न पढ़ा। अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) पूरी रात नमाज़ में खड़े रहते थे और उसमें अल-बक़रा, आले-इमरान और अन्-निसा सूरतों को पढ़ते थे। अगर इनमें ख़ुशख़बरी होती तो अल्लाह से उसे माँगा करते और अगर आप (सल्ल॰) ऐसी आयत पढ़ते जिसमें डराया गया होता तो आप (सल्ल॰) अल्लाह से उसकी पनाह माँगते।"

(इब्नुल-मुबारक ने यह हदीस अज़्ज़ुहद में बयान की है। हदीस नं॰ 1196, पृष्ठ-421)

हज़रत अबू-हमज़ा (रज़ि॰) से रिवायत है कि मैंने इब्ने-अब्बास (रज़ि॰) से कहा—

> "मैं बहुत तेज़ पढ़नेवाला हूँ। मैं तीन दिन में क़ुरआन मजीद पढ़ लेता हूँ। हज़रत अब्दुल्लाह-बिन-अब्बास (रज़ि॰) ने कहा, "मुझे तो एक रात में सूरा अल-बक़रा पढ़ना, उसमें सोच-विचार करना और उसे ठहर-ठहरकर पढ़ना ज़्यादा पसन्द है, उस तरह पढ़ने से जैसे तुम बता रहे हो।" (फ़ज़ाइलुल-क़ुरआन लि-अबी-उबैद, पृष्ठ-157)

क़ुरआन मजीद के साथ हमारा रवैया

हमारे पास भी वही क़ुरआन मजीद है, जो सहाबा (रज़ि॰) के पास था। क़ुरआन मजीद ने सहाबा (रज़ि॰) को सबसे हटकर एक सबसे अच्छे इनसानी गरोह में बदलकर रख दिया। क्या क़ुरआन अब उस तरह की तब्दीली लाने की क़ुव्वत नहीं रखता? क्या क़ुरआन की कारकर्दगी ख़त्म हो गई है? ऐसा हरगिज़ नहीं। तो फिर बात क्या है? क़ुरआन मजीद तो एक हमेशा रहनेवाला मोजिज़ा (चमत्कार) है। यक़ीनन कमी हमारे अन्दर है, कोताही हमारी है। क़ुरआन हर घर में मौजूद है? रेडियो स्टेशन और टेलीविज़न सेन्टर (दूरदर्शन केन्द्र) विभिन्न मुस्लिम देशों में अपने चैनल से रात-दिन क़ुरआन मजीद का प्रसारण कर रहे हैं। मुस्लिम समुदाय में इस वक़्त लाखों क़ुरआन मजीद के हाफ़िज़ मौजूद हैं। इतने हाफ़िज़ तो अल्लाह के नबी (सल्ल॰) के ज़माने और खुलफ़ा-ए-राशिदीन के ज़माने में भी न थे। इस सबके बावजूद, इतना ज़्यादा एहतिमाम और इन्तिज़ाम के होते हुए भी क़ुरआन मजीद के ज़रिए चाही गई तब्दीली और बदलाव अमल में नहीं आ रहा है। इसकी क्या वजह है?

साफ़ और वाज़ेह बात है कि हम उन शर्तों को पूरा नहीं कर रहे, जो क़ुरआन के चमत्कारिक असर के ज़ाहिर होने के लिए ज़रूरी हैं और जिनके पूरा होने से क़ुरआन मजीद तब्दीली का अमल पूरा करता है। हमारा पूरा का पूरा ध्यान क़ुरआन के लफ़्ज़ों पर है 'क़ुरआनी तालीम' का मतलब हमने सिर्फ़ यह समझा है कि क़ुरआन के अलफ़ाज़ सीखे जाएँ और क़ुरआन को पढ़ने की कैफ़ियत सीख ली जाए, उसके अलफ़ाज़ को सही-सही ज़बान से निकालकर अदा करने का तरीक़ा हमें आता हो, और अक्षरों को आवाज़ के लिहाज़ से ठीक-ठीक अदा किया जाए। न हमने क़ुरआन के मानी और मतलब तक पहुँचने पर तवज्जोह दी है, न उसमें ज़्यादा दिलचस्पी ली है और अमल का तो सवाल ही नहीं पैदा होता।

क़ुरआन के साथ हमारे इस ज़ाहिरी शक्ल तक सीमित अमल के अन्दाज़ ने हमें क़ुरआन का असली फ़ायदा पाने से रोक दिया है। ज़िन्दगी

से भरपूर इस किताब के साथ हमारे इस विचित्र रवैये का नतीजा हमारे लिए हलाक कर देनेवाला है। क़ुरआन मजीद का यह सबसे बड़ा कारनामा कि वह दिलों में तब्दीली पैदा कर देता है, हमारी बेअमली और काहिली की वजह से ज़ाहिर नहीं हो रहा। कथनी और करनी में तज़ाद (विरोधाभास) बढ़ चुका है, हमारी दिलचस्पियाँ बदल चुकी हैं, दुनिया से ताल्लुक़ और उसकी मुहब्बत में वृद्धि हुई है। आज हमारी हालत वही हो चुकी है जिसकी अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने भविष्यवाणी की थी—"बहुत क़रीब है कि क़ौमें तुमपर हमला करने के लिए एक-दूसरे को ऐसे बुलाएँ, जैसे खाना खानेवाले दस्तरख़ान पर एक-दूसरे को बुलाया करते हैं।" एक सहाबी ने अर्ज़ किया कि "क्या हम उस वक़्त थोड़ी तादाद में होंगे?" कहा—"नहीं, बल्कि उस वक़्त तुम लोग बड़ी तादाद में होगे। मगर तुम लोग सैलाब के झाग की तरह (बेवज़न) होगे, अल्लाह तुम्हारे दुश्मनों के दिलों में तुम्हारा रौब और दबदबा ख़त्म कर देगा और तुम्हारे दिलों में 'वहन' डाल देगा। एक सहाबी ने पूछा—"ऐ अल्लाह के रसूल 'वहन' क्या चीज़ है?" कहा, "दुनिया की मुहब्बत और मौत से नफ़रत।"

अगर हम मुसलमान अपने अन्दर सच्ची और असली तब्दीली पैदा करना चाहते हैं तो फिर आइए क़ुरआन की तरफ़ पलटने का इससे बेहतर कोई मौक़ा नहीं। इराक़ और अफ़ग़ानिस्तान के मौजूदा हालात हमारी आँखें खोल देने के लिए काफ़ी हैं। क्या इराक़ पर धावा बोलने के लिए अमेरिका ने अपने हामियों को उसी तरह नहीं बुलाया, जिस तरह नबी (सल्ल॰) ने ख़बर दी थी?

क़ुरआन से फ़ायदा उठाने का सही तरीक़ा

क़ुरआन मजीद का अध्ययन यह समझकर करना चाहिए कि यह पढ़नेवाले से सीधे-सीधे ख़िताब (सम्बोधन) है और इनसान की दुनिया और आख़िरत की कामयाबी की कुन्जी यही किताब है। इनसान की हालत चाहे कैसी ही ख़राब क्यों न हो, यह किताब उसे बदल सकती है। क़ुरआन मजीद पढ़नेवाला अगर यह शुऊर रखता है तो उसे क़ुरआन मजीद से फ़ायदा उठाने का तरीक़ा बताने की भी ज़रूरत नहीं। यही एहसास उसमें बदलाव लाने के लिए काफ़ी है।

अस्ल बात यह है कि हम मुसलमानों का क़ुरआन पढ़ने का तरीक़ा सैकड़ों सालों से ऐसा चला आ रहा है कि हम क़ुरआन से सही मानी में फ़ायदा उठाने से महरूम हैं। मानो सैकड़ों सालों से अमल करने के हमारे ग़लत तरीक़े ने हमारे और क़ुरआन मजीद के फ़ायदा पहुँचाने के बीच एक नफ़सियाती (मनोवैज्ञानिक) रुकावट खड़ी कर दी है।

अगर हम क़ुरआन मजीद से हक़ीक़त में फ़ायदा उठाना चाहते हैं तो हमें नीचे लिखी बातों का ध्यान रखना चाहिए।

(1) क़ुरआन मजीद से दिलचस्पी

क़ुरआन मजीद से हमारा ताल्लुक़ इतना मज़बूत हो, हमें इतनी दिलचस्पी हो कि यह हमारी सोचों और विचारों का केन्द्र बन जाए। हमारी सबसे पहली प्राथमिकता यही हो। चाहे हालात कैसे ही क्यों न हों। हम रोज़ाना पाबन्दी से इसकी तिलावत करें। हम कितने ही व्यस्त क्यों न हों,

इसके लिए हर हाल में वक़्त निकालें। याद रहे कि क़ुरआन के पढ़ने के नतीज़े में होनेवाली तब्दीली की रफ़्तार तेज़ नहीं होती। यह तब्दीली धीरे-धीरे आती है। क़ुरआन के पढ़ने का अमल तभी फलदायक बनता है जब इसे रोज़ाना पाबन्दी से और हमेशा किया जाए और हमारा कोई दिन भी क़ुरआन मजीद की ज़ियारत (दिव्यदर्शन) और मुलाक़ात के बिना न गुज़रे। हम जितना क़ुरआन को वक़्त देंगे, उतना ही वह हमें फ़ायदा देगा। जो खुशक़िस्मत इनसान दिन में कई बार क़ुरआन मजीद को पढ़ता है वह सफल और कामयाब होता है। हमें क़ुरआन के लफ़्ज़ और मानी दोनों ही से फ़ायदा उठाना चाहिए।

(2) मुनासिब जगह

क़ुरआन मजीद के ज़रिए बदलाव लाने के लिए ज़रूरी है कि हम उसके अध्ययन के लिए मुनासिब जगह चुनें। हम एक इज़्ज़तदार मेहमान का स्वागत अपने घर में जिस तरह करते हैं, उससे कहीं बढ़कर क़ुरआन का सत्कार करें। भीड़-भाड़ और शोरग़ुल से ख़ाली यानी सुकून की जगह में क़ुरआन से मुलाक़ात करें। इससे अच्छी तरह समझने में मदद मिलती है। तन्हाई में किसी कोने में बैठकर इसे पढ़ा जाए तो यह बहुत ही अच्छी बात है। तन्हाई में बैठकर अध्ययन करते समय अपने एहसासों को अच्छी तरह ज़ाहिर कर सकते हैं। तन्हाई में रोने, आँसू बहाने, दुआ करने और अल्लाह की तसबीह करने में ख़ास मज़ा आता है। पढ़नेवाला सम्बन्धित आयतों के अनुसार अपनी अन्दरूनी कैफ़ियत को ज़ाहिर करने का मौक़ा पाता है।

(3) सही और उचित समय

मुनासिब जगह के साथ उचित समय का होना भी बहुत ज़रूरी है। इनसान उस वक़्त क़ुरआन मजीद पढ़े जब वह चुस्त, मानसिक तौर पर सही और जिस्मानी व ज़ेहनी लिहाज़ से तैयार हो। अगर इनसान थका-मान्दा हो, नींद आ रही हो, बुख़ार या दर्द हो तो ऐसी हालत में क़ुरआन का अध्ययन न करना चाहिए। वुज़ू करने के बाद, जिसमें मिसवाक (दातून या ब्रश) ख़ासतौर पर की गई हो, क़ुरआन मजीद पढ़ा जाए तो ज़्यादा फ़ायदेमन्द होगा।

(4) ठहर-ठहरकर पढ़ना

हम रुक-रुककर, ठहर-ठहरकर क़ुरआन मजीद पढ़ें। अलफ़ाज़ की अदाएगी दुरुस्त हो। अक्षर और शब्दों को पूरी तरह और सही-सही अदा करें। इस तरह तेज़-तेज़ पढ़ना कि अक्षर छूट जाएँ, लफ़्ज़ अधूरे रह जाएँ अच्छी तरह पढ़ने के ख़िलाफ़ हैं और बस एक बेफ़ायदा अमल है। हमें इस आयत—"और क़ुरआन को ख़ूब ठहर-ठहरकर पढ़ो" (सूरा-39, ज़ुमर, आयत-4) के मुताबिक़ अमल करना चाहिए। हमारा मक़सद क़ुरआन पूरा करना या सूरा मुकम्मल करना न हो। क़ुरआन पूरा करने के लिए हम तिलावत की रफ़्तार बढ़ा देते हैं। ख़ासतौर पर रमज़ान के महीने में कई बार पूरा क़ुरआन पढ़ने का हमारा शौक़ हमें तेज़ी के साथ क़ुरआन पढ़ने पर उभारता है। हम अब तक न जाने कितनी बार क़ुरआन पूरा पढ़ चुके हैं। रमज़ान के मुबारक महीने में एक-एक मुसलमान कई-कई बार पूरा क़ुरआन ख़त्म कर लेता है। मगर इसका फ़ायदा क्या होता है? इससे हमारे अन्दर क्या बदलाव आता है? अपने बहन-भाइयों, दोस्त और साथियों के साथ हमारा मुक़ाबला तिलावत की मिक़्दार में न हो बल्कि इस बात में हो कि हमने क़ुरआन की आयतों से कितनी ज़्यादा बातें समझी हैं। कितनी बारीकियाँ हमारे ज़ेहनों में आई हैं। हमारे ईमान और यक़ीन में कितनी बढ़ोत्तरी हुई है।

(5) पूरी लगन और ध्यान से अध्ययन करना

क़ुरआन मजीद का अध्ययन हम कम से कम दुनिया की किसी किताब की तरह तो करें। हम जब किसी किताब, पत्रिका या अख़बार को पढ़ना शुरू करते हैं तो हम जो कुछ पढ़ते हैं, उसे समझते जाते हैं। जो बात समझ में नहीं आती, उसे दोबारा पढ़ते हैं ताकि समझ में आ जाए। क़ुरआन मजीद को भी हम—कम से कम—इसी तरह पढ़ें। ज़ेहनी तौर पर हाज़िर हों। अगर किसी वजह से ज़ेहन में बिखराव हो या इधर-उधर भटकने लगे तो आयतों को दोबारा पढ़ें। हमें पहले-पहल इस तरह अध्ययन करने में कठिनाई महसूस होगी, क्योंकि हम लफ़्ज़ों को मानी-मतलब से अलग करके पढ़ने के आदी हैं लेकिन निरन्तर अभ्यास से हमारी यह पुरानी आदत ख़त्म हो जाएगी।

(6) हुक्मों के आगे झुक जाना

क़ुरआन मजीद के मुख़ातब (सम्बोधित) सारे इनसान हैं। यह उनसे सीधे-सीधे ख़िताब (सम्बोधन) करता है। इस ख़िताब में सवाल और जवाब हैं, वादे और डरावे हैं, करने और न करने के हुक्म हैं। इसी लिए पढ़ते वक़्त हमारा फ़र्ज़ है कि हम क़ुरआन के सवालों का जवाब दें। उसके हुक्मों के सामने सिर झुकाते हुए 'सुब्हानल्लाह' (अल्लाह पाक है), 'अल्हम्दुलिल्लाह' (सारी तारीफ़ें अल्लाह ही के लिए हैं), 'अल्लाहु अकबर' (अल्लाह सबसे बड़ा है) और 'अस्तग़फ़िरुल्लाह' (माफ़ी चाहता हूँ मैं अल्लाह से) जहाँ जैसा मौक़ा हो ये बोल अदा करें। सजदेवाली आयतें आने पर सजदा करें। दुआ के बाद आमीन कहें। जहन्नम का बयान पढ़ें तो आग से पनाह माँगें, जन्नत का ज़िक्र पढ़ें तो अपने परवरदिगार से जन्नत का सवाल करें। प्यारे नबी (सल्ल०) और सहाबा (रज़ि०) का यही तरीक़ा था। इस तरह अमल के इस तरीक़े को अपनाने से हम ज़ेहन के बिखराव और ध्यान न लगने जैसी बातों से सुरक्षित रहेंगे।

(7) मक़सद : क़ुरआन का समझना

कुछ जोशीले मुसलमान जब क़ुरआन को सोच-समझकर पढ़ना शुरू करते हैं तो एक-एक लफ़्ज़ पर ग़ौर-फ़िक्र करते हैं मगर कुछ ही दिनों तक इसे निभा पाते हैं। उकताकर फिर उसी पुरानी डगर पर चल पड़ते हैं और बिना सोचे-समझे ही पढ़ने लगते हैं। सवाल यह है कि वह कौन-सा तरीक़ा है कि चिन्तन-मनन भी हो और बहुत ज़्यादा देरी भी न हो। सरल और आसान तरीक़ा यह है कि हम आयतों का संक्षिप्त-भाव समझते जाएँ। जिन लफ़्ज़ों का मतलब अरबी जानने के बावजूद नहीं जानते, सन्दर्भ से उनके मतलब को समझें, जैसे हम अंग्रेज़ी में कोई लेख या ख़बर पढ़ते हैं तो हमें हर लफ़्ज़ का तफ़सीली मतलब मालूम नहीं होता, मगर हम कहने के तरीक़े और अन्दाज़ से और सन्दर्भ से उस बात का ख़ुलासा समझ लेते हैं। अल्लाह के रसूल (सल्ल०) का इरशाद है—

"क़ुरआन ऐसे ही नहीं उतरा कि इसका कुछ हिस्सा दूसरे

हिस्से को झुठलाता हो, बल्कि इसका हर हिस्सा दूसरे हिस्सों की तस्दीक़ करता है। तुम लोग क़ुरआन में से जो समझ जाओ उसपर अमल करो और जिसका मतलब न समझ पाओ उसे क़ुरआन जाननेवाले की तरफ़ लौटाओ (यानी उससे पूछो)।"

(हदीस : मुसनद अहमद, इब्ने-माजा)

इसका यह मतलब नहीं कि हम लफ़्ज़ों के मानी और मतलब जानने की कोशिश न करें या तफ़्सीर की किताबों की तरफ़ सिरे से ध्यान ही न दें। मतलब सिर्फ़ यह है कि हम तफ़्सीर (व्याख्या) के लिए अलग वक़्त रखें और अल्लाह की किताब को पढ़ने के लिए अलग वक़्त ख़ास करें। तिलावत से हमारा मक़सद "दिल को ज़िन्दा" करना हो। इसके लिए हमें तफ़्सीरों के बिना क़ुरआन मजीद से सीधे तौर पर मुलाक़ात करनी होगी।

(8) आयतों को बार-बार पढ़ना

हमने क़ुरआन मजीद से फ़ायदा हासिल करने के लिए अब तक जो बातें पेश की हैं, ये सब अक़्ल से ताल्लुक़ रखती हैं, जो इल्म और सूझ-बूझ का केन्द्र है। अब जो तरीक़ा हम बयान कर रहे हैं, वह दिल के लिए है। दिल ईमान का घर है। दिल इनसान के अन्दरूनी जज़्बों और एहसासों का केन्द्र है। दिल में जितना ईमान ज़्यादा होगा उतने ही भले और नेक अमल होंगे। इसका मतलब यह है कि ईमान जज़्बे और एहसास से बनता है। हमारा असर क़बूल करना, बात को मान लेना, प्रभावित होना, नमाज़, दुआ और अल्लाह के कलाम में ईमान का बढ़ना सबका ताल्लुक़ दिल से है। क़ुरआन में है—

"और जब अल्लाह की आयतें उनके सामने पढ़ी जाती हैं तो उनका ईमान बढ़ जाता है।" (क़ुरआन, सूरा-8 अनफ़ाल, आयत-2)

क़ुरआन मजीद ईमान में बढ़ोत्तरी करने के महत्वपूर्ण ज़रिओं में से एक है। शुरू-शुरू में क़ुरआन मजीद के असर करने की रफ़्तार कम होगी, मगर जब ऊपर बयान किए हुए सारे साधन काम में लाए जाएँगे तो इसमें धीरे-धीरे बढ़ोत्तरी हो जाएगी।

सहाबा (रज़ि॰) और सहाबियात (रज़ि॰) कभी-कभी एक ही आयत को बार-बार पढ़ते रहते थे। हज़रत उबादा-बिन-हमज़ा (रज़ि॰) बयान करते हैं कि मैं हज़रत असमा (रज़ि॰) की ख़िदमत में हाज़िर हुआ तो वे यह आयत पढ़ रही थीं—

> "आख़िरकार अल्लाह ने हमपर फ़ज़्ल फ़रमाया और हमें झुलसा देनेवाली हवा के अज़ाब से बचा लिया।"
>
> (क़ुरआन, सूरा-52 तूर, आयत-27)

मैं उनके पास ठहरा रहा तो वे इसी आयत को ही दोहराती रहीं और दुआ करती रहीं। यहाँ तक कि जब मैं अपने काम से फ़ारिग़ होकर वापस आया तब भी वे इसी आयत को दोहराती रहीं और दुआ करती रहीं।

(मुख़्तसर क़ियामुल्लैल-लि-मुहम्मद बिन-नसह, पृष्ठ-149)

बहनों के अपने-अपने तजरिबे

हाल ही में एक अरब मुल्क में क़ुरआन मजीद पर अमल करने की अमली दावत की शुरुआत हुई है। यह तहरीक आधुनिक शिक्षा प्राप्त औरतों ने शुरू की है। थोड़े ही समय में इस नेक और मुबारक क़दम के हैरान कर देनेवाले, मगर बहुत ही अच्छे नतीजे सामने आए हैं। इस तहरीक की बुनियाद मुहतरमा सुमैया रमज़ान ने डाली है। उन्होंने सिविक्स (Civics) और पोलिटिकल साइंस (Political Science) की उच्च शिक्षा प्राप्त की है। उन्होंने इन विषयों पर ख़ुसूसी महारत हासिल करने के बजाए शरीअत के इल्म की तरफ़ अपना रुख़ किया और कई साल तक शरीअत का इल्म हासिल किया। इन विषयों में महारत हासिल करने के बाद उन्होंने अमली ज़िन्दगी की शुरुआत की। वे अपनी सहेलियों के साथ पड़ोसियों के घरों में जाकर उन्हें तालीम देतीं और दीनी मामलों की जानकारी देतीं।

मुहतरमा सुमैया रमज़ान अपने पास की जामा मस्जिद में जुमा की नमाज़ अदा करने गईं, तो उन्होंने नमाज़ के बाद वहाँ मौजूद औरतों से बातचीत में यह तय किया कि हफ़्ते में एक बार जुमा की नमाज़ के बाद सब औरतों की एक मजलिस हुआ करेगी। हर जुमा को औरतों की तादाद बराबर बढ़ने लगी। औरतें अपनी रिश्तेदारों और पड़ोसनों को लेकर आती थीं। उनमें से बहुत-सी औरतें मुहतरमा सुमैया से अपने मसले और परेशानियाँ बयान करतीं। मुहतरमा सुमैया बहुत ही राज़दारी से उन्हें जवाब देतीं और हर मुश्किल का हल बतातीं। मुहतरमा इस नतीजे पर पहुँचीं कि उनमें से बहुत-सी परेशानियों का हल मामूली-सी कोशिश से सम्भव है। ज़रूरत इस बात की है कि हम अपने मसलों और परेशानियों को क़ुरआन मजीद के सामने पेश करें और अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) की शिक्षाओं से मदद लें।

एक दिन क़ुरआन का दर्स देने के बाद सुमैया साहिबा ने औरतों से कहा,

"आज हम एक नए प्रोग्राम की शुरुआत कर रहे हैं। हम अपनी तमाम मुश्किलों को क़ुरआन मजीद से हल करेंगे और हम जो कुछ क़ुरआन से समझेंगे अमली ज़िन्दगी पर उसे पूरी तरह लागू करेंगे। हम हर हफ़्ते एक आयत लेंगे। पूरा हफ़्ता उसे ही दोहराते रहेंगे। हम उस आयत को याद करेंगे। उसपर अमल करने की पूरी कोशिश करेंगे। उस आयत को अमली तौर पर लागू करेंगे। उस आयत से ही हम हरकत करेंगे, उसके हुक्म और मंशा की पाबन्दी करेंगे और इस तरह यह आयत हमारी ज़िन्दगी का हिस्सा बन जाएगी। चाहे इस पर अमल करने में एक हफ़्ता लगे या एक हफ़्ते से ज़्यादा का वक़्त। इसके बाद हम फिर दूसरी आयत लेंगे। उस पर भी अच्छी तरह अमल हो जाएगा तो फिर एक और आयत लेंगे। इस तरह हम देखेंगे कि क्या नतीजा सामने आता है।

संक्षेप में यह कि नतीजा निहायत ही शानदार निकला। बहुत-से मसले हल हुए, बहुत-सी कठिनाइयाँ ख़त्म हुईं, बड़ी हद तक लोगों को सुकून और चैन की दौलत मिली। ख़ानदानी झगड़े कम हो गए, उजड़े हुए घर बसने लगे, रूठे हुए राज़ी हो गए। बहुत से शौहरों ने अपनी बीवियों के रवैये की तब्दीली को सराहा और इसे एक ख़ुशगवार इन्क़िलाब क़रार दिया। दर्स में शामिल होने के लिए अब औरतें बड़ी तादाद में आने लगीं, यहाँ तक कि औरतों के लिए उस ख़ास दर्सगाह में बैठने की गुन्जाइश न रही। अब दर्स मस्जिद के अन्दर जहाँ मर्द नमाज़ अदा करते हैं, होने लगा, मगर बहुत जल्द ही पूरी मस्जिद जब औरतों से भर गई तो मस्जिद तंग मालूम होने लगी। ये दर्स सिर्फ़ औरतों के लिए होते थे। मर्दों को इजाज़त न थी, मगर औरतों के दर्स सुनने के नतीजे में घरों में जो माहौल बदला तो मर्दों ने भी मस्जिद का रुख़ किया। यह देखकर मस्जिद की इन्तिज़ामिया कमेटी ने मस्जिद को और बढ़ाने का फ़ैसला किया।

यह थी उस मुबारक सिलसिले को शुरू करने की दास्तान। इसके बाद क्या हुआ? आयतों पर अमल कैसे हो? क़ुरआन के हुक्मों पर औरतों ने अमल का तजरिबा कैसे किया? उन ख़ुशगवार और सच्ची घटनाओं में से कुछ यहाँ पेश की जा रही हैं।

घर में चीख़ना-चिल्लाना

हफ़्तावार क़ुरआन का दर्स हो चुका तो मामूल के मुताबिक़ पिछले हफ़्ते के बारे में औरतों ने जो असर लिया और जो देखा, सुनाना शुरू किया। साथ ही साथ उनपर तबसिरे (टीक़ा-टिप्पणी) भी होते जा रहे थे कि एक महिला बोलीं—

"अल्लाह का फ़ज़्ल है कि मैंने अपनी सारी ख़ामियों और कमज़ोरियों को दूर कर लिया है। ख़ुदा के फ़ज़्ल से मैंने, मेरे शौहर ने और मेरे बच्चों ने मिलकर घर के माहौल को ख़ुशगवार बना रखा है। मगर मेरे अन्दर एक कमज़ोरी है, जिससे मैं जान नहीं छुड़ा सकी हूँ। वह है मेरी ऊँची आवाज़। मेरी कई बहनों को भी ऊँची आवाज़ में चिल्लाने की बीमारी है। वे भी इससे छुटकारा चाहती हैं।"

इस पर मैंने कहा, "आज हमारी मजलिस में इस आयत पर ग़ौर होना चाहिए—

> "और अपनी आवाज़ ज़रा पस्त रख, सब आवाज़ों से ज़्यादा बुरी आवाज़ गधों की आवाज़ होती है।"
>
> (क़ुरआन, सूरा-31 लुक़मान, आयत-19)

हम इस आयत के मुताबिक़ ज़िन्दगी गुज़ारेंगे। इसी आयत की रौशनी में सोचेंगे और इसपर अमल करने की कोशिश करेंगे। हम इसे बराबर दोहराते रहेंगे, ताकि अल्लाह हम सबको अपनी आवाज़ धीमी करने की तौफ़ीक़ दे। हम सब औरतों ने यह तय कर लिया कि हम इस आयत को इतना दोहराएँगे कि यह आयत मानो हमारे दिलों में घर कर गई है और हमारे दिलों को इसने रौशन और पुरनूर कर दिया है। आइए देखें कि यह पवित्र आयत क्या नतीजा दिखाती है?

जिस बहन को ऊँचा बोलने और चीख़ने-चिल्लाने का दौरा पड़ता था और जिसने हफ़्तावार क़ुरआन के दर्स में मुझसे मशवरा माँगा था, उसे दर्स सुने और ऊपर लिखी आयत का नुस्ख़ा हमसे लिए हुए अभी कुछ ही दिन हुए थे कि उसकी पड़ोसन ने उसे टेलिफ़ोन किया और पूछा, "मैंने कई दिन

से आपकी आवाज़ नहीं सुनी, ख़ैरियत तो है?" उस बहन ने जवाब दिया, "बिलकुल ख़ैरियत है, आप आ जाइए दर्स में तो अभी बहुत दिन हैं। मैं इतना इन्तिज़ार नहीं कर सकती। अगर आपके पास कुछ वक़्त है तो मेरी बात सुनने के लिए आ जाइए।" पड़ोसन जल्दी पहुँच गई तो उस बहन ने उससे कहा—

जैसा कि दर्स में सुमैया साहिबा ने रहनुमाई की थी, मैं यह आयत बार-बार दोहराती रही, यहाँ तक कि मुझे याद हो गई। इस तरह एक दिन गुज़र गया। अगले दिन की सुबह मामूल के मुताबिक़ बच्चे स्कूल जाने के लिए तैयारी कर रहे थे। उस वक़्त, जैसा कि आपको मालूम है मेरी हालत इन्तिहाई क़ाबिले-रहम होती है। एक ही वक़्त में हर कोई अपनी-अपनी चीज़ें माँग रहा होता है। मुझे इस मौक़े पर चिल्लाने की आदत थी। मैं बच्चों के साथ चीख़-चीख़कर बातें करती थी, मगर इस सुबह मैंने इस आयत पर अमल करने का फ़ैसला कर लिया। इस आयत पर अमल करने के असूली टेस्ट के वक़्त, बच्चों के रवैये की वजह से मेरे रवैये में भी सख़्ती आने लगी। मेरे मिज़ाज में आज फिर तेज़ी आने लगी, क्योंकि एक बच्चे को जूता नहीं मिल रहा था, दूसरे को बेल्ट और तीसरे को पेन। एक बच्चे ने कहा, मुझे बस्ता नहीं मिल रहा है। यह सुनकर मेरी कैफ़ियत वही हो गई जो पहले होती थी। मैंने बच्चों को ज़ोर-ज़ोर से डाँटना शुरू कर दिया, मगर उसी पल मैंने महसूस किया कि मेरा चेहरा लाल हो गया है और मेरी शक्ल गधे की-सी हो रही है, कान गधे की तरह लम्बे हो रहे हैं। मैंने फ़ौरन सोचा कि गधे की तरह आवाज़ निकालने से तो हमें रोका गया है। हमें अपनी आवाज़ गधे के समान नहीं करनी चाहिए। अल्लाह ने जब रोक दिया है और हुक्म दे दिया है तो फिर हमें उसका पालन करना चाहिए। कहीं हमारी शक्ल-सूरत बिगड़ न जाए, हम ख़ुदा के ग़ज़ब की शिकार पिछली गुज़री हुई नाफ़रमान क़ौमों की तरह ख़िंज़ीरों और बन्दरों की सूरत में बदलकर न रख दिए जाएँ।

मैं इस चीख़ने-चिल्लाने की तुलना गधे से करने का ख़याल करके शर्मिन्दा हुई, क्योंकि इस तरह मैं इनसानों से निकलकर जानवरों के गरोह में दाख़िल हो चुकी थी। यह विचार आते ही मैं बच्चों के लिए नर्म पड़ गई

और आहिस्ता-आहिस्ता बोलने लगी—"हाँ यह ले लो। यह तुम्हारा जूता है। क़लम भी यहीं कहीं होगा। तुमने अपनी ज़रूरी चीज़ें कल ही अपने बस्ते में क्यों न रख लीं।" इस तरह यह परेशानियों से भरा मरहला आसानी से गुज़र गया। इन कुछ ही मिनटों में मेरा गुस्सा अपनी इन्तिहा को पहुँच जाया करता था और मुझे अपनी जान निकलती हुई महसूस होती थी। उस दिन ये पल सुकून और चैन से गुज़र गए।

"मैं परीक्षा में पास हो गई, जी हाँ मैं पास हो गई।" कुछ दिनों से मेरा यही हाल है। मेरा यह सुकून चैन और धीमी आवाज़ और लहजे को देखकर मेरे शौहर पहले तो परेशान हुए। पूछने लगे, 'तुम बीमार तो नहीं हो?" मैंने जवाब दिया—"जी हाँ, मैं बीमार थी, मरीज़ थी, अल्लाह ने मुझे शिफ़ा दे दी। अल्लाह ने क़ुरआन मजीद पर अमल के ज़रिए मुझे सेहत दे दी।" मेरे शौहर ने मेरी यह बात सुनी तो उन्हें यक़ीन नहीं आ रहा था। फिर कहने लगे, "यह तो अच्छी बात है। बड़ा अच्छा है कि बदलाव ख़ुद तुम्हारी तरफ़ से आया है। काश! यह तब्दीली जारी रहे।" मैंने जल्दी से जवाब दिया, "अब अगर अल्लाह ने चाहा तो यही हालत रहेगी। अल्लाह का फ़रमान मेरे दिल में हमेशा समाया रहेगा। मुझे तो अल्लाह की किताब ने ज़िन्दगी के निहायत ख़ुशगवार पहलू से परिचित करवा दिया है।"

क़ुरआन मजीद की इस आयत पर अमल करने का तजरिबा लगभग सारी ही औरतों ने अपने-अपने घरों में किया। तजरिबा कामयाब रहा। हक़ीक़त में क़ुरआन मजीद को पाक दिलों पर कन्ट्रोल हासिल है। सिर्फ़ अमल करने के इरादे की ज़रूरत है। क़ुरआन इनसानों को बदल देने की पूरी क़ुदरत रखता है, जो इनसान भी एक बार क़ुरआन पर अमल की मिठास का मज़ा चख लेता है वह क़ुरआन को फिर कभी नहीं छोड़ता। वह अपने आपको क़ुरआनी साँचे में ढालने, अपने आपको बेहतर हालत में तब्दील करने और आख़िर में अपने-आपको क़ुरआन के रंग में रंगने का काम करता है। यह हमेशा लगातार आगे बढ़ते रहने का अमल है।

फ़ज्र की नमाज़ के लिए जागना

क़ुरआन मजीद तो उतरा ही अमल करने के लिए है। क़ुरआन की रहनुमाई में ज़िन्दगी का सफ़र तय करना दरअस्ल दुनिया में ही जन्नत में रहना है। क़ुरआन मजीद पर अमल करने से कितने ज़ख़्म ठीक हुए, कितनी जुदाइयाँ ख़त्म हुईं, कितने घर, जो तबाही की कगार पर पहुँच चुके थे, सलामती के घर बने। ये सब कुछ क़ुरआन मजीद पर अमल करने की बरकत है। क़ुरआन ही की रहनुमाई से एक आदमी का सुधार किस तरह होता है? इस सिलसिले में एक बहन का तजरिबा उसके अपने शब्दों में बयान किया जाता है। वे कहती हैं–

"मुझे रात में देर तक जागते रहने की आदत थी। जब सुबह अज़ान देनेवाला फ़ज्र की नमाज़ के लिए अज़ान देता था, मैं उस वक़्त ग़ाफ़िल और लापरवाह सोई रहती। अल्लाह के फ़रिश्ते मुझे नमाज़ियों में न पाते। इस मुबारक वक़्त में, मैं और मेरे घरवाले शैतान की पकड़ में होते थे। हम सब गहरी नींद सोते। जागने के बाद मुझे सारा दिन इसका पछतावा रहता। मैंने कई बार सुबह-सवेरे नमाज़ के लिए उठने का फ़ैसला किया, मगर इस फ़ैसले ने कभी अमल का रूप न लिया। हर बार नाकामी का सामना करना पड़ता। यह उस वक़्त की बात है जब मुहतरमा सुमैया रमज़ान की निगरानी में क़ुरआन की आयतों पर अमल का तजरिबा शुरू नहीं हुआ था। जब मुझे मालूम हुआ कि मुहतरमा सुमैया रमज़ान ने बहुत-सी बहनों के मसले हल कर दिए हैं, तो मैंने भी अपना मसला हल करने का पक्का इरादा कर लिया। मुहतरमा सुमैया रमज़ान से मशवरा किया तो उन्होंने मुझे ख़ुदा के इस हुक्म को बार-बार दोहराने की ताकीद की–

> "जो तुम्हें उस वक़्त देख रहा होता है जब तुम उठते हो, और सजदा करनेवाले लोगों में तुम्हारी चलत-फिरत पर निगाह रखता है।" (क़ुरआन, सूरा-26 शुअरा, आयतें-218-219)

अतः मैं इस नूरानी आयत को बार-बार दोहराती रहती और मैंने कोशिश की कि यह अल्लाह का मुबारक फ़रमान जिस तरह मेरी ज़बान पर जारी है, उसी तरह दिल में भी उतर जाए।

आख़िरकार वह वक़्त आ गया, फ़ैसलाकुन वक़्त, आयत के मुताबिक़ हरकत करने का वक़्त। उधर मुअज़्ज़िन ने "अल्लाहु अकबर, अल्लाहु अकबर" की आवाज़ लगाई इधर मैंने अपने बिस्तर पर करवटें बदलनी शुरू कर दीं। मैं मुअज़्ज़िन की आवाज़ पर लब्बैक (मैं हाज़िर हूँ) कहने से हिचकिचा रही थी। शैतान मेरे लिए नींद को ख़ुशगवार बनाकर पेश कर रहा था और नमाज़ के मामले को मेरी नज़र में मामूली बनाकर दिखा रहा था। उधर अज़ान देनेवाले (मुअज़्ज़िन) के बोल मुझे यह हक़ीक़त याद दिला रहे थे कि मैं मुसलमान हूँ। मुअज़्ज़िन कह रहा था, "मैं गवाही देता हूँ कि अल्लाह के सिवा कोई माबूद नहीं।" अब मुअज़्ज़िन मेरे प्यारे रसूल (सल्ल॰) का ज़िक्र कर रहा था। "आओ नमाज़ की तरफ़, आओ नमाज़ की तरफ़" कहकर मुअज़्ज़िन मुझे तैयार कर रहा था कि भलाई और कामयाबी नमाज़ अदा करने में है—"हय-य अलल् फ़लाह" (यानी आओ कामयाबी की तरफ़) मुअज़्ज़िन के बोल और क़ुरआन की उस आयत के पाक लफ़्ज़, जिसे बार-बार पढ़ने और अमल करने का मुझे मशवरा दिया गया था, मुझे नमाज़ के लिए पुकार रहे थे। फिर अज़ान और आयत के लफ़्ज़ मेरे दिल में उतरते चले गए। अब नींद मेरी आँखों से जा चुकी थी। मैंने अल्लाह को, जो बड़ा ही रहमवाला है, अपने पास ही महसूस किया और इस एहसास के होते ही मैं उठकर बैठ गई। मैंने अपने कपड़े संभाले, बहुत तेज़ी से एहसास हुआ कि मैं कमरे में अकेली नहीं हूँ। यहाँ कोई और भी है। वही जो मेरी गर्दन की रग से भी ज़्यादा मेरे क़रीब है। उसके क़रीब होने का एहसास हुआ तो मैं पाकी के लिए लपकी। वुज़ू किया और फ़ज्र की नमाज़ अदा करने के लिए अपने पैदा करनेवाले मालिक के सामने खड़ी हो गई। यही वह नमाज़ थी, जिसके पढ़ने की मुझे बेहद हसरत थी। कितनी ही बार इरादे बाँधे और तोड़े। मेरी आँखें आँसुओं से डबडबाई हुई थीं और नमाज़ के बाद मेरे होठों पर ये लफ़्ज़ थे—अल्लाह का शुक्र है, वह हस्ती हर ऐब और कमी से पाक है, जिसने मुझे, मेरे मरने से पहले मुझे इस नमाज़ की तौफ़ीक़ दी और इस तरह मुझपर बड़ा करम किया। अल्लाह ने मुझपर चार नहीं, पाँच नमाज़ें फ़र्ज़ की थीं, मगर मैं अपनी सुस्ती और काहिली की वजह से सिर्फ़ चार नमाज़ें

ही अदा करती थी। मैंने रो-रोकर अल्लाह से अपने इस गुनाह की माफ़ी माँगी और अल्लाह के सामने दुआ की कि वह मुझे आख़िरी साँस तक इसी तरह पाँचों नमाज़ें अदा करने की तौफ़ीक़ दे।

अल्लाह के सामने तौबा करने और माफ़ी माँगने के बाद मैं सुकून से बैठ गई तो मेरे सामने मेरी ज़िन्दगी की फ़िल्म चलने लगी। मैं कल्पना की आँखों से अपनी बीती हुई ज़िन्दगी के मन्ज़र (दृश्य) देख रही थी। मैं एक साधारण-सी लड़की थी, जिसकी ज़िन्दगी का कोई वाज़ेह मक़सद नहीं था। मेरी ज़िन्दगी कोल्हू के एक बैल की तरह घूम रही थी, जिस तरह मुझसे पहले बहुत से लोग घूम चुके थे। एक बेमक़सद ज़िन्दगी! आख़िरकार मेरी शादी हो गई। मुझे अपने शौहर के विचारों और सोच से कोई दिलचस्पी न थी। मुझे तो बस उसकी पोज़ीशन और माल-दौलत से मतलब था। उसे भी नमाज़-रोज़े से कोई दिलचस्पी न थी। सिर्फ़ दुनिया की गहमा-गहमी से सरोकार था। ज़िन्दगी की गाड़ी ऐसे ही चलती रही। दुनिया में बच्चे भी आ गए। मुझे अपने बच्चों से ताल्लुक़ था तो इतना कि वे क्या खाते हैं, क्या पहनते हैं, स्कूल जाते हैं, पढ़ाई कैसी चल रही है, होमवर्क कैसे हो रहा है। मैंने अपने बच्चों से कभी भूलकर भी न पूछा कि उन्होंने नमाज़ पढ़ी है या नहीं। उन्होंने कितना क़ुरआन याद कर लिया है। क्या वे नबियों के हालात को जानते भी हैं या नहीं। उन्हें अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) के बारे में कुछ पता भी है या नहीं। मुझे बच्चों के इन मामलों में बिलकुल भी दिलचस्पी न थी, बल्कि मैं तो देर तक उनके साथ ही टेलीविज़न सेट के सामने बैठी रहती। मैं टेलीविज़न से प्रसारित होनेवाले प्रोग्रामों, ड्रामों और फ़िल्मों की बातें बच्चों के लिए साफ़-साफ़ बयान करती ताकि उन्हें समझने में कोई परेशानी न हो।

मैं नमाज़ पढ़कर बैठी थी, पिछली ज़िन्दगी के बीते हुए रात-दिन की यह फ़िल्म मेरे ज़ेहन के पर्दे पर चल रही थी कि मैं यकायक अपने शौहर के ख़र्राटों से चौंक पड़ी। दृश्य धुंधले पड़ गए। मेरा जीवन-साथी गहरी नींद के मज़े ले रहा था। मैंने चाहा कि उसे जगाऊँ, उसे नमाज़ के लिए उठाऊँ और अपना क़िस्सा भी उसे सुनाऊँ। मैंने उसे उसका नाम लेकर नहीं जगाया,

जैसा कि मेरा रोज़ का तरीक़ा था, बल्कि मैंने आज उसके कन्धों पर झुककर कुछ ऊँची आवाज़ से यह आयत पढ़ी—

"اَلَّذِیْ یَرَاکَ حِیْنَ تَقُوْمُ٥ وَتَقَلُّبَکَ فِی السّٰجِدِیْنَ٥"

"अल्लज़ी यरा-क ही-न तक़ूमु व तक़ल्लु-ब-क फ़िस्साजिदीन।"

"जो तुम्हें उस वक़्त देख रहा होता है जब तुम उठते हो, और सजदा करनेवाले लोगों में तुम्हारी चलत-फिरत पर निगाह रखता है।" (क़ुरआन, सूरा-26 शुअरा, आयतें-218, 219)

यह आयत सुनकर मेरे शौहर उठे, वज़ू किया, नमाज़ पढ़ी और फिर आकर मेरे पास बैठ गए। कहने लगे—"आज की सुबह कितनी मुबारक और कितनी ख़ूबसूरत है कि आज मुझे तुमसे क़ुरआन सुनने का मौक़ा मिला। मैं इसे अपनी बड़ी ख़ुशक़िस्मती समझता हूँ।" मैंने कहा, "ख़ुशक़िस्मती तो मेरी है कि मैंने आज मुअज़्ज़िन की अज़ान पर, क़ुरआन की आयत पर अमल किया है। ख़ुशक़िस्मत मैं हूँ कि मैंने आज तुम्हें पहली बार फ़ज्र की नमाज़ पढ़ते देखा है।" यह सुनकर मेरे शौहर का दिल ईमान के नूर से जगमगा उठा। उन्होंने कहा, "मैं तुम्हें एक अजीब बात सुनाता हूँ। मेरे साथ यह घटना घटी कि मैं कल जब घर वापस आ रहा था और मैं अपनी गाड़ी में रेडियो की सूई घुमा रहा था कि यह सूई क़ुरआन मजीद के चैनल पर आकर रुक गई। मैंने चाहा कि इस चैनल से सूई को हटा दूँ लेकिन इससे पहले ही ट्रैफ़िक पुलिस ने मुझे गाड़ी रोकने के लिए इशारा किया। मुझे उस वक़्त क़ुरआन सुनते हुए यही एहसास हुआ कि अल्लाह मुझसे कह रहा है—तुम जानती हो कि मेरा रब मुझसे क्या कह रहा था? वह कह रहा था—

"उन लोगों ने अल्लाह की क़द्र ही न की जैसा कि उसकी क़द्र करने का हक़ है। उसका तमाम चीज़ों पर क़ुदरत रखने का हाल तो यह है कि क़ियामत के दिन पूरी ज़मीन उसकी मुट्ठी में होगी और आसमान उसके दाएँ हाथ में लिपटे हुए होंगे। पाक और बालातर है वह उस शिर्क से जो ये लोग करते हैं।"

(क़ुरआन, सूरा-39 ज़ुमर, आयत-67)

क़ुरआन मजीद के इस बयान ने मेरे पूरे वुजूद को हिलाकर रख दिया। मैं समुद्र के किनारे-किनारे जा रहा था। मैंने अपने हाथ की मुट्ठी को देखा और फिर समुद्र की तरफ़ देखा। इस फ़र्क़ ने मुझे झिंझोड़कर रख दिया। यह समुद्र तो कुछ भी नहीं, अल्लाह के हाथ में तो पूरी ज़मीन है। अल्लाह कितना बड़ा है। मुझे महसूस हुआ, मानो यह आयत मेरे दिल में है और मेरा दिल इसी से धड़क रहा है। मुझे अपने पूरे जिस्म में एक सुकून और मिठास का एहसास हुआ और मेरे पालनहार का फ़ज़्ल मुझपर आज उस वक़्त पूरा हुआ, जब तुमने क़ुरआन मजीद की आयत पढ़कर मुझे जगाया। मुझे तुमने नहीं जगाया, बल्कि अल्लाह ने जगाया है, फ़ज्र की नमाज़ अदा करने के लिए।"

मैंने कहा कि, "मुझे भी मेरे रब ही ने बरकतवाली आयत से जगाया है। मेरे और तुम्हारे अमल से यह आयत ज़िन्दा हुई और हरकत में आई है।" मेरे शौहर ने शर्मिन्दगी का इज़हार करते हुए कहा, "मेरी उम्र चालीस साल से ज़्यादा हो गई है। क़ुरआन मजीद मेरे घर में मौजूद है। मैं यह नहीं कहता कि मैं क़ुरआन पढ़ता नहीं हूँ। मैं पढ़ता हूँ। बहुत-सी सूरतें और आयतें याद भी हैं, मगर मेरे और क़ुरआन के बीच एक रुकावट थी।" मैंने फ़ौरन जवाब दिया, "जी हाँ, यह रुकावट थी; क़ुरआन के मुताबिक़ अमल न करने की, क़ुरआन के मुताबिक़ न चलने की, प्यारे नबी (सल्ल०) तो ज़मीन पर चलता-फिरता क़ुरआन थे।"

"हम भी ज़मीन पर चलते हैं, मगर क़ुरआन के साथ नहीं", मैंने यह कहा और मैं फूट-फूटकर रोने लगी। मेरे शौहर की आँखों में भी आँसू थे। वे एकदम खड़े हो गए। बच्चों के कमरे की ओर बढ़े। उन्होंने कमरे की लाइट ऑन कर दी। फिर ऑफ़ कर दी। कई बार ऐसा किया तो बच्चे भी जाग उठे। उन्होंने नमाज़ के लिए ज़ोर से "अल्लाहु अकबर" कहा। बच्चे हैरान और परेशान थे कि यह क्या हो रहा है? मेरे जीवन-साथी ने बच्चों से कहा, "जानते हो हमसे कौन मिलने आया है? और हमें अब देख रहा है? अल्लाह तुम लोगों से मिलने आया है।" बच्चों ने एक-दूसरे को देखा, उनका बाप बड़ी मीठी आवाज़ में पढ़ रहा था–

"जो तुम्हें उस वक़्त देख रहा होता है, जब तुम उठते हो और सजदा करनेवाले लोगों में तुम्हारी चलत-फिरत पर निगाह रखता है।"

फिर उन्होंने कहा, "आज घर में नमाज़ पढ़ लो, कल से अल्लाह ने चाहा तो मस्जिद में नमाज़ पढ़ने जाएँगे।" मेरे शौहर बच्चों को नमाज़ पढ़ते देखते रहे। सबने नमाज़ पढ़ ली तो उनका दिल मुत्मइन हुआ। फिर मेरे शौहर का ज़ेहन इस आयत की तरफ़ गया—

> "वह अपने घरवालों को नमाज़ और ज़कात का हुक्म देता था और अपने रब के नज़दीक एक पसन्दीदा इनसान था।"
>
> (क़ुरआन, सूरा-19 मरयम, आयत-55)

उन्होंने अल्लाह से दुआ की कि, "ऐ अल्लाह! मुझसे राज़ी हो जा, मुझे माफ़ कर दे, मुझपर रहम कर।" इसके बाद वे मुझसे कहने लगे, "आज से तुम बच्चों की निगरानी करोगी और उन्हें नमाज़ पढ़ने को कहोगी।" मैंने कहा, "ये मेरी नहीं सुनते, मुझे इन्हें नमाज़ का पाबन्द बनाने में काफ़ी मेहनत करनी पड़ेगी।" मेरे शौहर ने मुझे मशवरा दिया कि तुम उन्हें इस आयत के ज़रिए हरकत में लाओ—

> "वह अपने घरवालों को नमाज़ और ज़कात का हुक्म देता था और अपने रब के नज़दीक एक पसन्दीदा इनसान था।"
>
> (क़ुरआन, सूरा-19 मरयम, आयत-55)

मैंने अपने बच्चों को नमाज़ का पाबन्द बनाने का पक्का इरादा कर लिया। मैंने एक बड़ा चार्ट लिया और यह आयत बड़े-बड़े अक्षरों में उसपर लिख दी—

"اَلَّذِیْ یَرٰاکَ حِیْنَ تَقُوْمُ○وَتَقَلُّبَکَ فِی السّٰجِدِیْنَ○"

"अल्लज़ी यरा-क ही-न तक़ूमु व तक़ल्लु-ब-क फ़िस्साजिदीन।"

> "जो तुम्हें उस वक़्त देख रहा होता है जब तुम उठते हो, और सजदा करनेवाले लोगों में तुम्हारी चलत-फिरत पर निगाह रखता है।" (क़ुरआन, सूरा-26 शुअरा, आयतें-218-219)

यह थी फ़ज्र की नमाज़ पढ़ने के लिए क़ुरआन मजीद के मुताबिक़ हरकत करने की बरकत की असली कहानी।

इसी बहन ने मस्जिद में आकर यही आयत एक बड़े चार्ट पर लिखवाकर दीवार पर लटकवा दी। और दर्स सुनने आनेवाली अपनी सभी बहनों को अपने तजरिबे से आगाह किया।

हममें से हर एक इस बात का मुहताज है कि वह अपनी आँखों पर पड़े हुए परदों को हटा दे। दिलों पर लगी मुहरों को खुरच-खुरचकर फेंक दे। दिलों पर ग़फ़लत के पड़े हुए पर्दों की वजह से हम बिना सोचे-समझे ऐसे ही क़ुरआन-मजीद को पढ़ते रहते हैं। न हम समझते हैं, न अमल करते हैं। हमारी यह दावत सिर्फ़ मुसलमान औरतों के लिए ही ख़ास नहीं है, हम पूरी दुनिया के मुसलमानों को दावत देते हैं कि आइए हम क़ुरआन मजीद का मुताला (अध्ययन) हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) की रूह और सहाबा (रज़ि०) की रूहों के साथ करें। वही जज़्बा, वही जोश जो आप (सल्ल०) और आप (सल्ल०) के साथियों (रज़ि०) में था, हमारे अन्दर आ जाए। हम क़ुरआन मजीद की तिलावत करते वक़्त यह ख़याल करें कि ये नूरानी आयतें किताबों, कैसेटों और सीडियों से निकलकर हमारे सामने खड़ी हैं। वे हमें बुला रही हैं; पुकार रही हैं। यही आयतें ख़ालिक़ (पैदा करनेवाले) और मालिक के एक होने का ऐलान कर रही हैं। हम प्रतिज्ञा करते हैं कि क़ुरआन जिस बात का हमें हुक्म देगा हम उसे पूरा करेंगे और जिस बात से रोकेगा हम उससे रुक जाएँगे।

तलाक़ की धमकी

औरतों में क़ुरआन मजीद पर अमल करने के इस अभियान का मक़सद अपनी ज़िन्दगी की हर चीज़ को अल्लाह की पसन्द के मुताबिक़ बदलना है। यह दावत दुनिया में जन्नतवाली ज़िन्दगी गुज़ारने की दावत है यानी क़ुरआन मजीद की आयतों को अमली शक्ल देने की दावत। हम मुसलमानों को चाहिए कि सिर्फ़ क़ुरआन को पढ़ लेने को ही काफ़ी न समझ लें कि क़ुरआन को पढ़ा और बस क़ुरआन बन्द कर दिया। क़ुरआन की आयतों पर कुछ ग़ौर-फिक्र न किया। क़ुरआन की आयतों पर ग़ौर-फ़िक्र करना और उनपर अमल करना हर मुसलमान का फ़र्ज़ है ताकि उन आयतों से दिल धड़कें और बदन का अंग-प्रत्यंग उसके मुताबिक़ काम करे। जब हम क़ुरआन के मुताबिक़ अमल करेंगे तो यह किताब हमारे दिलों की बहार बन जाएगी और हमारे सारे दुख-दर्द और ग़म जाते रहेंगे। अब हम क़ुरआन मजीद की एक आयत पर अमल का सच्चा और ज़िन्दा तजरिबा बयान करते हैं। इस तजरिबे में औरतों के एक ग्रुप ने हिस्सा लिया। उन औरतों को इस बात की तालीम और तरबियत दी गई कि उन्हें क़ुरआन की आयतों पर किस तरह अमल करना है। इस तजरिबे के फ़ायदेमन्द और दूरगामी नतीजे निकले। आइए उस तजरिबे के बारे में तफ़्सील से जानें।

तलाक़ एक ऐसा ख़तरनाक और बरबाद कर देनेवाला क़दम है, जिससे पलभर में हँसता-बसता घर उजड़ जाता है। ख़ुशी ग़म में और सुख दुख में बदल जाते हैं। तलाक़ सुकून भरे और मज़बूत ख़ानदान को उखाड़कर रख देती है। तलाक़ समाज में काला दाग़ छोड़ देती है। बीवी की आगे आनेवाली ज़िन्दगी अन्धकारमय हो जाती है। बच्चे अलग हैरान और परेशान होते हैं। माँ के साथ रहें तो बाप के स्नेह और देख-रेख से महरूम। बाप के पास रहें

तो माँ की ममता और मेहरबानी से महरूम। शौहर अलग परेशान, बदहवास और पागल हो जाता है। उसे कुछ समझ नहीं आता कि वह क्या करे? वह इस परेशानी में फँसा होता है और इसी उधेड़-बुन में रहता है कि नई शादी कर ले या कुछ समय के लिए रुक जाए? बहुत-से बाप अपनी औलाद को अनदेखा कर देते हैं और उन्हें ऐसे भूल जाते हैं, जैसे उनके बच्चे थे ही नहीं।

कठिनाइयों का एक ऐसा चक्कर चल पड़ता है जो ख़त्म होने में नहीं आता। ये कठिनाइयाँ दिनों और महीनों में ख़त्म नहीं हो जातीं बल्कि सालों-साल तक रहती हैं। समाज को तलाक़ की वजह से कई तरह की कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है। घर नुहूसत का गढ़ बन जाते हैं और अदालतों में समाज की इज़्ज़तदार औरतें बदनाम और रुसवा होती हैं। घरों की पर्दे की बातें अदालतों में खुलेआम बयान होती हैं जिसमें बदनामी और रुसवाई के सिवा कुछ हाथ नहीं आता। ख़ुद मियाँ-बीवी हर सुनने और देखनेवाले के लिए अपने राज़ बयान करते हैं। बच्चों का अल्लाह के सिवा कोई मददगार नहीं होता। वे माँ-बाप के होते हुए भी दोनों के स्नेह और प्यार से महरूम हो जाते हैं। न बाप से बात कर सकते हैं, न माँ से। अगर माँ के पास रह रहे हैं तो वह उन्हें उनके बाप से बात तक नहीं करने देती और अगर बाप के पास रह रहे हों तो वह उन्हें उनकी माँ से बात करवाने या मुलाक़ात करवाने को तैयार नहीं होता। तलाक़ के इस भयानक मसले का हल भी अल्लाह ने अपनी किताब में रख दिया है। बड़े ही दुख की बात है कि हम अल्लाह की किताब क़ुरआन के अल्फ़ाज़ (शब्दों) को पढ़ते और समझते हैं मगर उनपर अमल नहीं करते।

हमने मस्जिद में हफ़्तेवार क़ुरआन के दर्स में इस पेचीदा और मुश्किल मसले का हल निकालने की कोशिश की। मस्जिद में हम सभी औरतों ने यह अहद (प्रतिज्ञा) कर रखा था कि हम जिस गिरावट और पस्ती का शिकार हैं उससे निकलने का सिर्फ़ एक रास्ता यही है कि हममें से हर एक क़ुरआन की आयतों के ज़रिए पस्ती के गढ़े से निकले। चुनाँचे इस अहद को वफ़ादारी से निभाने के लिए जब अगले हफ़्ते के लिए क़ुरआन मजीद की आयत के

चुनने का मरहला आया तो हमने एक बार फिर यह कहा कि क़ुरआन की इस आयत पर अमल करते हुए हम अपनी ख़ाहिशों और अपने माहौल की बन्दिशों और रस्मों की परवाह नहीं करेंगे। इस बार हमने अपने पालनहार के इस हुक्म के बारे में तय किया—

"ऐ नबी, जब तुम लोग औरतों को तलाक़ दो तो उन्हें उनकी इद्दत (अवधि) के लिए तलाक़ दिया करो और इद्दत के ज़माने की ठीक-ठीक गिनती करो, और अल्लाह से डरो जो तुम्हारा रब है। (इद्दत के ज़माने में) न तुम उन्हें उनके घरों से निकालो और न वे खुद निकलें, सिवाए इसके कि वे कोई खुली बुराई कर बैठी हों। ये अल्लाह की तय की हुई हदें हैं और जो कोई अल्लाह की हदों (सीमाओं) से आगे बढ़ेगा, वह अपने ऊपर खुद जुल्म करेगा। तुम नहीं जानते, शायद इसके बाद अल्लाह (मेल-मिलाप की) कोई राह पैदा कर दे।" (क़ुरआन, सूरा-65 तलाक़, आयत-1)

आयत की तिलावत के बाद जब उसकी तफ़सीर (व्याख्या) बयान हुई ताकि सभी बहनों को यह मालूम हो सके कि इस आयत पर कैसे अमल करना है और आयत के ज़रिए अल्लाह के स्पष्ट हुक्म को कैसे लागू करना है तो दर्स में शामिल एक बहन ने पुकारकर कहा, "ज़रा ठहरिए! आप लोग क्या बात कर रहे हैं? क्या उस औरत के लिए जिसका शौहर उसे तलाक़ दे दे, ज़रूरी है कि वह इद्दत की अवधि के बीच अपने (शौहर के) घर में ही रुकी रहे?" मैंने उस बहन पर स्पष्ट कर दिया कि तलाक़ पाई हुई औरत के लिए इद्दत शौहर के घर में गुज़ारने का हुक्म मेहरबान और बेइन्तहा रहम करनेवाले हमारे खुदा ने दिया है ताकि इस बीच मेल-मिलाप की कोई सूरत पैदा हो जाए। मियाँ-बीवी अपने घर में एक साथ रहें और अपने-अपने ख़ानदानवालों की दख़ल-अन्दाज़ी से सुरक्षित रहें तो शायद उनमें साज़गारी और मेल-मिलाप पैदा हो जाए और वे फिर नए सिरे से ख़ैरो-आफ़ियत से रहने लगें। बीवी का घर से निकल जाना या उसे निकाल देना गुस्से की वजह बनता है और बहुतों के दिलों को इससे तकलीफ़ पहुँचती है। गुस्सा, नफ़रत, उत्तेजना और शिकवा-शिकायत का माहौल शैतान के लिए बहार का मौसम

होता है। मामलों की बाग-डोर शैतान के हाथ में चली जाती है तो अलगाव और जुदाई तक नौबत पहुँच जाती है। ऐसे में शैतान की ख़ुशी की कोई हद नहीं रहती।

मेरा यह स्पष्टीकरण और वज़ाहत सुनकर सवाल करनेवाली बहन ने बताया, "हाय मेरी बदक़िस्मती और बदनसीबी कि दीने-इस्लाम को न जानना और न समझना मेरे घर के उजड़ने की वजह बनी। क़ुरआन मजीद से अज्ञानता ने मेरे बच्चों को मुझसे दूर कर दिया। मेरे शौहर और मेरे बीच मामूली-सा इख़्तिलाफ़ (मतभेद) हुआ। बात बिलकुल छोटी-सी थी। उस बात से मेरा शौहर इतना न भड़कता, मगर मैंने बिना वजह के कुछ ऐसी बातें कह दीं कि उसका ग़ुस्सा अपनी इन्तिहा को जा पहुँचा। ग़ुस्से के कारण मेरा शौहर होशो-हवास में न रहा और उसने तलाक़ का लफ़्ज़ बोल दिया। यह लफ़्ज़ सुनते ही मैंने जल्दी से अपना सामान बाँधा और घर से निकल पड़ी। दिल दर्द से भरा हुआ था और आँखें आँसुओं से। मैं जैसे ही अपने मैके पहुँची तो मेरी कहानी सुनकर मेरे मैके का हर आदमी मेरे शौहर से मेरी तौहीन का बदला लेने के लिए बेताब था। मेरे शौहर ने कहला भेजा कि घर चली आओ मगर मैंने उसकी यह पेशकश हिक़ारत (नफ़रत) से ठुकरा दी। इस तरह मेरे नफ़्स (मन) ने, मेरे ग़ुरूर ने मुझे सोच-विचार और सही फ़ैसला करने से महरूम कर दिया।

आपने जो आयत अभी पढ़ी है, मैं यह आयत कई बार पढ़ चुकी हूँ। मगर अफ़सोस कि मैंने इसे समझने की एक बार भी कोशिश नहीं की। मुझे न इसकी समझ आई और न मैंने कभी इसे समझने की कोशिश की। इद्दत गुज़ारने के बाद हम मियाँ-बीवी में जुदाई हो गई। इद्दत के दौरान अपने घर से निकलने का गुनाह भी किया। मैं शौहर से भी महरूम हुई और अल्लाह के साफ़ और वाज़ेह हुक्म को न मानने का गुनाह भी अपने सिर ले लिया।"

इस ग़म की मारी बहन ने फूट-फूटकर रोते हुए कहा, "हाय! मेरी शामत और बदनसीबी! मैं आप सबसे दरख़ास्त करती हूँ कि आप लोगों ने अल्लाह की किताब पर अमल का जो अहद और पक्का इरादा किया है उसपर मेहरबानी करके सख़्ती से जमे रहना।"

यह दुख भरी दास्तान सुनकर हमने एक बार फिर क़ुरआन की आयत पर अमल करने के पक्के अहद को दोहराया और पूरे हौसले और इरादे के साथ इस रास्ते पर चलते रहने का संकल्प किया।

फिर कुछ समय बाद हमने बहनों से तलाक़ के बारे में अल्लाह के हुक्म पर अमल के तजरिबे सुनने का इरादा किया।

एक बहन ने कहा, "जब से मैंने अपने रब-अल्लाह के साथ यह अहद किया कि मेरी करनी और कथनी पर अल्लाह की आयत ही की हुक्मरानी होगी तो मैं हमेशा यह दुआ करती रहती थी कि जब हक़ीक़ी अमल का मौक़ा आए तो अल्लाह मुझे जमे रहने की ताक़त देना ताकि मैं अमलन क़ुरआन के मुताबिक़ आगे बढ़ती रहूँ। मेरा शौहर जज़्बाती आदमी है, अक्सर गुस्से में आकर उल्टी-सीधी बातें बकने लगता है। आयत पर अमल करने के दौर से पहले तो मैं भी भड़क जाती और उसे बात-बात पर जवाब देती। मैं कोई बात बर्दाश्त न करती। हम मियाँ-बीवी की यह हालत देखकर हमारा छोटा बेटा हमें देखता, चुपचाप रहता, सदमे और घबराहट से कुछ न बोलता था। हम मियाँ-बीवी इस हालत में एक-दूसरे की बात बिलकुल ही न सुनते और हम दोनों अपनी-अपनी बात पर डटे रहते।

यह मन्ज़र अब फिर सामने आया, लेकिन अब मेरे दिल की हालत बदल चुकी थी। मैंने अल्लाह से लौ लगाए रखी और क़ुरआन मजीद की आयत पर अमल करने का फ़ैसला कर लिया। आज मेरी पूरी कोशिश यह थी कि मैं शौहर को किसी भी तरह भड़कने न दूँ। मुझपर बेचैनी और बेक़रारी की एक अजीब कैफ़ियत तारी थी। मैं चाहती थी कि घर से निकलकर अपने घर के क़रीब की मस्जिद में चली जाऊँ, मस्जिद ही को मैं अपनी पनाह और सुकून-चैन की जगह समझती थी। कभी यह ख़याल आता कि अपनी किसी मुसलमान बहन के पास चली जाऊँ, ताकि वह हमदर्दी के कुछ बोल बोलकर मुझे तसल्ली दे और मेरी ढारस बँधाए और इस तरह मेरे दिल को सुकून और ठंडक नसीब हो। मेरी हालत तो यह थी कि इधर मेरा शौहर आपे से बाहर हो रहा था, गुस्से के मारे उसका बुरा हाल था, उसकी गुस्से से भरी बातों से यह महसूस होता था कि वह मुझे तलाक़ देने के बारे में सोच रहा है।

कई बार शौहर को जवाब देने का शैतानी ख़याल दिल में आया, मगर मैंने हर बार अपने ऊपर क़ाबू पा लिया। मैंने अल्लाह का ज़िक्र और उसकी तस्बीह और बड़ाई का गुणगान करना शुरू कर दिया। मैं साथ-साथ यह भी सोचती रही कि अगर ख़ुदा न करे मेरे शौहर ने तलाक़ का शब्द मुँह से निकाल ही दिया तो फिर मुझे शौहर के घर में यहीं रहना होगा। मैं तो चाहती हूँ कि मस्जिद में जाऊँ वहाँ हफ़्तावार क़ुरआन का दर्स सुनूँ। इद्दत के ज़माने में तो मैं घर से बाहर न निकल सकूँगी क्या मैं क़ुरआन के दर्स की मजलिस से भी महरूम हो जाऊँगी। यह ख़याल मेरी रूह को रह-रहकर तकलीफ़ दे रहा था। अल्लाह के घर में जाकर तो हम पवित्र माहौल में क़ुरआन की आयतों को समझते हैं और फिर उनपर अमल का वादा करके वहाँ से बाहर निकलते हैं। मेरे लिए इद्दत गुज़ारने के लिए अपने शौहर के घर में इस तरह पाबन्द होकर रहना कि क़ुरआन का दर्स सुनने के लिए मस्जिद में भी न जा सकूँ, बड़ी बेचैनी का कारण बन रहा था। क़ुरआन के दर्स ने तो मेरी ज़िन्दगी को ऐसी चमक-दमक बख़्शी थी, जिसकी मैं इससे पहले कभी कल्पना भी नहीं कर सकती थी। मैं क़ुरआन मजीद बहुत ज़्यादा पढ़ा करती थी मगर अल्लाह का कलाम मेरे गले से नीचे नहीं उतरता था। मैं ख़यालों की दुनिया से बाहर निकली तो क्या देखती हूँ कि मेरे बच्चे ने अपने बाप पर नज़रें गाड़ रखी हैं, मानो अपने हाव-भाव से कह रहा है कि वे भी अम्मी की तरह चुप हो जाएँ। मैंने बच्चे को अपनी गोद में ले लिया और अल्लाह से दुआ करने लगी कि वह शौहर को शान्त कर दे।

धीरे-धीरे मेरे शौहर के गुस्से का पारा नीचे उतरने लगा और वे ख़ामोशी से अपना काम करने लगे। फिर बैठकर मग़फ़िरत की दुआएँ करने लगे। जबकि मैं अपनी जगह से न हटी। तस्बीह और ज़िक्र करने में लगी रही और अल्लाह से दुआ करती रही। बाद में जब घर का माहौल सुकून और प्यार में बदल गया और हम दोनों का गुस्सा ठंडा हो गया तब मेरे शौहर ने कहा, "मैं बहुत शर्मिन्दा हूँ और माफ़ी चाहता हूँ। मुझे बराबर इस बात का अन्देशा रहा कि तुम मेरी बातों का अपनी आदत के मुताबिक़ ताबड़-तोड़ जवाब दोगी। आज तलाक़ का लफ़्ज़ मेरे होंठों के बिलकुल क़रीब पहुँच चुका

था। मैं हैरान हूँ कि आज तुमने तलाक़ की माँग नहीं की। पहले तुम कहती थीं कि मुझे तलाक़ दे दो, मगर मैं नहीं देता था। आज मैंने सोच रखा था कि तुम्हारी तरफ़ से तलाक़ की माँग होते ही मैं तड़ाक से तलाक़ दे दूँगा। तुमने आज अपनी आदत के मुताबिक़ तलाक़ की माँग क्यों नहीं की?" मैंने जवाब दिया, "मेरे रब ने मुझे अपनी किताब के ज़रिए और अपने आदेशों के ज़रिए अदब सिखा दिया है। मैं पहले सोचा करती थी कि तलाक़ से मुझे आज़ादी मिल जाएगी, मगर मेरी सोच अल्लाह की किताब के अमली बयान से बिलकुल टकरानेवाली थी।"

उस बहन ने अपनी यह दास्तान सुनाकर हमें बताया, "उस दिन के बाद से अब तक हम घर में ख़ुशी-ख़ुशी और प्यार-मुहब्बत से रह रहे हैं। ऐसा मेल-मिलाप, सुख-शान्ति, सुकून और इत्मीनान हमें इससे पहले कभी नसीब नहीं हुआ था। शुक्र है कि मेरी ज़बान उस दिन क़ुरआन की बरकत से बन्द रही और मैंने अपने शौहर से यह नहीं कहा कि मुझे तलाक़ दे दो। पहले मुझे शैतान तलाक़ को ख़ुशनुमा बनाकर पेश करता था। वह इसे मेरी आज़ादी क़रार देता था। जबकि हक़ीक़त में तलाक़ तो पाबन्दी है। इस घटना के बाद मेरे शौहर में भी काफ़ी बदलाव आ चुका है। उसका रवैया बहुत कुछ बदल गया है। उसने अपने सख़्त ग़ुस्से, नफ़रत और दुश्मनी पर क़ाबू पा लिया है। क्योंकि जब वे गुस्सा करते और मैं शान्त रहती तो मेरे इस अमल पर उन्हें काफ़ी कुछ माफ़ी-तलाफ़ी करनी पड़ती थी। मैं जितना भी अल्लाह का शुक्र अदा करूँ, कम है कि उसने मेरे लिए क़ुरआन समझने का काम आसान कर दिया। उसी ने हमें क़ुरआन के मुताबिक़ रवैया अपनाने की तौफ़ीक़ दी। शुक्रगुज़ारी भी उसी मेहरबान की तौफ़ीक़ से मुमकिन है। अल्लाह का शुक्र है कि उसकी किताब क़ुरआन मजीद की एक आयत पर अमल करने की बरकत से मेरा घर उजड़ने और बरबाद होने से बच गया।"

जब यह बहन अपना क़िस्सा सुना चुकी तो दर्स की मजलिस में मौजूद औरतों में से एक औरत ने बात करने के लिए अपना सिर उठाया, लेकिन फिर शर्माकर जल्दी से नीचे कर लिया। थोड़ी देर तक वह इस कश-मकश में पड़ी रही, फिर हिम्मत की और बात करने की इजाज़त माँगी।

इजाज़त मिलने के बाद उसने बताया, "मेरा शौहर दिल का अच्छा है, मगर है बहुत गुस्सेवाला, अपने फ़ैसले में जल्दबाज़ और शीघ्रता अपनाने वाला। मुझे भी उससे कुछ-कुछ नफ़रत थी। अगर वह मेरे ख़िलाफ़ एक बात करता तो मैं उसके ख़िलाफ़ दस बातें करती, मैं उसके हर काम पर टोक देती और बहुत ज़्यादा तनक़ीद (आलोचना) का निशाना बनाती। वह अगर मुझे कोई काम करने के लिए कहता तो मेरी प्रतिक्रिया के बाद उसे ऐसा महसूस होता, जैसे उसका वास्ता किसी चट्टान से पड़ा है। एक दिन हमारे बीच कड़वी बातों ने बड़ी कठोरता अपना ली। बक-बक और झक-झक के एक ऐसे ही दौरे के बाद उसने मुझे आवाज़ दी। मैं समझी कि शायद मेरे साथ सुलह-सफ़ाई करना चाहता है। मैंने उसकी तरफ़ ध्यान दिया तो मेरा नाम लेकर कहने लगा, "तुम्हें तलाक़ है।" मैंने कहा, "तुम क्या कह रहे हो? मेरे बच्चों का क्या होगा? मेरे पाँच बच्चे हैं, इनका अंजाम क्या होगा? तलाक़ का शब्द तुमने कितनी आसानी से कह दिया!" मेरी इन बातों का उसपर कुछ असर नहीं हो रहा था। मानो मेरा चीख़ना-चिल्लाना उसके लिए बेकार और फ़ुज़ूल था। मैं जल्दी से अपने कमरे की तरफ़ बढ़ी और बहुत ही गुस्से की हालत में अपने सूटकेस में ख़ास-ख़ास कपड़े रखने लगी। इस बीच बच्चे रो रहे थे, चिल्ला रहे थे। उनके रोने की आवाज़ सुनकर पत्थर से पत्थर दिल के आदमी का भी दिल पसीज जाता। मैंने अपना सूटकेस बन्द किया तो इसके साथ ही उस ज़ालिम आदमी की तरफ़ से अपने दिल को भी बन्द कर लिया।

जैसे ही मैंने घर से निकलने का इरादा किया तो मुझे अल्लाह के इस हुक्म ने बाहर जाने से रोक दिया, "और न वे ख़ुद निकलें।" मैं दरवाज़ा बन्द करके कमरे में बैठ गई और सोचने लगी, "ऐ अल्लाह! अब मैं क्या करूँ?" मैं बराबर रो रही थी, मेरे पास मेरे बच्चे बैठकर मुझे तसल्ली देने की कोशिश कर रहे थे। वे मेरे आँसू पोंछ रहे थे। जब मुझे कुछ सुकून हो गया तो शौहर कमरे के दरवाज़े के पास आकर कहने लगा, "तुम गई क्यों नहीं? क्या मैंने तुम्हें तलाक़ नहीं दे दी?" मैंने उससे बहुत ही नर्मी से कहा, "एक बहुत बड़ी चीज़ मुझे जाने से रोक रही है?" उसने हँसी उड़ाते हुए कहा,

"यह बहुत बड़ी चीज़ क्या है?" मैंने कहा, "अल्लाह! अल्लाह ने अपनी एक आयत के ज़रिए से मुझे जाने से रोक रखा है?" शौहर बोला, "अब तुम क़ुरआन की बात कर रही हो। तुम जब पहले मेरी नाफ़रमानी करती थीं और मेरे हक़ों को अनदेखा करती थीं तो उस वक़्त तुम्हें क़ुरआन याद नहीं आता था? अब तुम एक तलाक़ पाई हुई औरत हो और तुम्हें यहाँ रहने का कोई हक़ नहीं।" मैंने जवाब दिया, "यह तो आप कह रहे हैं और इस घर का मालिक कुछ और कह रहा है। वह तो तलाक़ देनेवाले मर्दों से मुख़ातिब (सम्बोधित) होकर फ़रमा रहा है—

"न तुम उन्हें उनके घरों से निकालो और न वे ख़ुद निकलें।"
(क़ुरआन, सूरा-65 तलाक़, आयत-1)

अल्लाह का यह हुक्म मुझपर भी लागू है और आप पर भी। मेरे लिए इतनी सज़ा काफ़ी है, जो मैंने क़ुरआन के मुताबिक़ न चलने की वजह से पा ली है।" जब मेरे शौहर ने देखा कि मैं यहीं रहने पर अड़ी हुई हूँ तो उसने भी अल्लाह के हुक्म के सामने अपना सिर झुका देने का फ़ैसला कर लिया।

अपने शौहर के साथ तलाक़ के बाद रहने के क़ुरआन के हुक्म पर अमल करने का अच्छा नतीजा यह निकला कि मेरे शौहर ने मेरे साथ बोलचाल शुरू कर दी। धीरे-धीरे हम दोनों एक-दूसरे के क़रीब आने लगे और एक-दूसरे को ख़ुश रखने की कोशिश करने लगे। एक महीने के बाद ही मेरा घर सुख-चैन और प्यार-मुहब्बत का गहवारा बन गया। मेरे शौहर ने तलाक़ से रुजू कर लिया। उनके इस क़दम ने मेरी ख़ुशियों में बेपनाह इज़ाफ़ा कर दिया। मेरी दुआएँ रंग लाईं और क़ुरआन की बरकत से मेरी ज़िन्दगी, मेरा घर, मेरे बच्चे और मेरा शौहर एक बहुत बड़ी मुसीबत और कष्ट से बच गए। मेरे बच्चे भटकने और मानसिक रोगी बनने से बच गए। मैं बहुत ही ख़ुश और सुख-चैन से हूँ और कहती हूँ, मेरे सच्चे और सब कुछ जाननेवाले रब ने कितना सही फ़रमाया था—

"शायद इसके बाद अल्लाह मेल-मिलाप की कोई सूरत पैदा कर दे।" (क़ुरआन, सूरा-65 तलाक़, आयत-1)

मेरी प्यारी बहनो! मैं अपने घर में अपने बच्चों के साथ रहने पर बहुत ख़ुश हूँ। मेरे मुश्किल के दिन गुज़र गए। मेरी अब यही कोशिश होती है कि हर मुमकिन तरीक़े से अपने शौहर को ख़ुश रखूँ और उनके खाने-पीने, लिबास और आराम-चैन का ख़याल रखूँ। मुझे अफ़सोस है कि पहले मेरा रवैया सही नहीं था। मुझे अपने पिछले रवैए पर बहुत शर्मिन्दगी है। मैं उस क़ुसूर और कोताही की भरपाई के लिए शौहर की ज़्यादा से ज़्यादा ख़िदमत करती हूँ, नफ़्ल नमाज़ें पढ़ती और ख़ुदा से मग़फ़िरत की दुआ करती हूँ। मैं हमेशा दुआ करती हूँ कि अल्लाह अब मुझे इतनी फ़ुरसत दे कि मैं अपनी ख़िदमत और मुहब्बत से अपने शौहर का दिल जीत लूँ। वह हक़ीक़त में एक अच्छा आदमी है। वह चाहता था कि मैं उसकी शराफ़त को उसकी कमज़ोरी न समझूँ।

यह है मेरी सच्ची कहानी। इस वक़्त हमारे सम्बन्ध बहुत ही अच्छे हैं। हममें जो मुहब्बत, उदारता और मेल-जोल इस वक़्त है वह पहले कभी न था। पाक है अल्लाह, इनसानों का पैदा करनेवाला, इनसान के दिल की बात जाननेवाला। इसलिए उसने यह हुक्म दे दिया कि तलाक़ पाई हुई औरत अपने घर में अपने शौहर के साथ रहे ताकि इस इद्दत के दौरान इस मसले का कोई अच्छा और पसन्दीदा हल निकल आए। मैं अपनी बहनों से दरख़ास्त करती हूँ कि अगर किसी बहन को ख़ुदा न करे ऐसी सूरतेहाल से दोचार होना पड़े तो वह घर से न निकले, अपने मन की इच्छाओं और सोच को प्राथमिकता न दे, बल्कि अल्लाह के हिकमत भरे हुक्म को मौक़ा दे, क्योंकि यह अल्लाह का हुक्म है। औरतों को ऐसे मौक़े पर अपनी "इज़्ज़त" का भरम रखने के लिए नहीं सोचना चाहिए बल्कि अल्लाह के हुक्म को मान लेने को ही अपनी इज़्ज़त समझनी चाहिए। अल्लाह के हुक्म की नाफ़रमानी करके ख़ुद ही अपने घर को बरबाद कर लेना कहाँ की अक़्लमन्दी है।

यह था क़ुरआन का असर ली हुई उस औरत का क़िस्सा। मैंने यह सुनकर अल्लाह की बारगाह में शुक्र का सजदा अदा किया। क्या अज़मत और बड़ाई है क़ुरआनी आयतों की। हमने जब अपने हफ़्तावार दर्से-क़ुरआन में ये सब तजरिबे सुने और देखे तो हिकमतवाले अल्लाह की हिकमत और

इल्मवाले अल्लाह अलीम के इल्म पर हमारे ईमान में इज़ाफ़ा हुआ। अल्लाह अकेला ही इस बात पर पूरी क़ुदरत रखता है कि वह हमारी जिहालत (अज्ञानता) और नासमझी से जन्म लेनेवाले सारे मसलों को हल कर दे। अल्लाह की मज़बूत रस्सी हमें जिहालत के अंधेरों से इल्म और सूझ-बूझ की रौशनी में ले जाने के लिए काफ़ी है। ज़रूरत सिर्फ़ इस बात की है कि हम क़ुरआन मजीद की आयतों के मुताबिक़ चलें और हमारा रद्दे-अमल अल्लाह के हुक्मों के मुताबिक़ हो।

यह तो कुछ एक मिसालें दी हैं। क़ुरआन मजीद के दर्स और हर हफ़्ते के लिए एक आयत का चुनाव, उसके मुताबिक़ ज़िन्दगियों को ढालने का पक्का इरादा और संकल्प जारी है। हमने अल्लाह की किताब के मुताबिक़ चलने के कई ख़ुशगवार तजरिबे देखे और सुने, जिनके नतीजे में घर ख़ुशहाली का गहवारा बने। घरवालों ने इत्मीनान, अमन-चैन के माहौल में ज़िन्दगी गुज़ारनी शुरू की। यह सब नतीजा है क़ुरआन मजीद को समझने का, उसके मुताबिक़ चलने का और क़ुरआन मजीद के हुक्मों के मुताबिक़ अपनी इस्लाह और सुधार करने का।

लड़ना-झगड़ना और नाराज़ी

लड़ने-झगड़ने और फिर नाराज़ होकर सम्बन्ध तोड़ लेने को बहुत-से लोग मसलों और कठिनाइयों का सबसे आसान हल समझते हैं। ख़ास तौर पर औरतें सच्चाई से मुँह फेरने के लिए ताल्लुक़ ख़त्म करने और नाराज़ी को अपना एक असरदार हथियार समझती हैं। अपनी नादानी और नासमझी से वे इसे अपना हिमायती और मददगार जानती हैं, हालाँकि नाराज़ी सबसे ज़्यादा नुक़्सान पहुँचानेवाली चीज़ है। एक औरत अपने ससुरालवालों से लड़-झगड़कर बोलचाल बन्द कर लेती है। दूसरी औरत अपनी पड़ोसन से झगड़ा करने के बाद आना-जाना बन्द कर देती है। कोई औरत अपने भाई और अपने भाई के घरवालों से दुश्मनी रखती है, कोई अपनी ननद से बेज़ार है और उससे परेशानी चल रही होती है। यहाँ तक कि कई औरतें अपने माँ-बाप से भी सम्बन्ध तोड़ लेती हैं। जब उन औरतों से इसका कारण पूछा जाता है तो वे जवाब देती हैं कि क्या अल्लाह ने अपनी किताब में यह नहीं कहा—

"और शराफ़त के साथ उनसे अलग हो जाओ।"

(क़ुरआन, सूरा-73 मुज़्ज़म्मिल, आयत-10)

क्या ये सारे नाते-रिश्तेदार और पड़ोसी दीन के दुश्मन हैं? क्योंकि इस आयत में तो दीन के दुश्मनों से अलग हो जाने का हुक्म है। अपने क़रीबी रिश्तेदारों के साथ तो रिश्ता जोड़े रखने और नर्मी अपनाने की ताकीद की गई है। जब ऐसी बात-बात पर नाराज़ होनेवाली झगड़ालू औरतों से पूछा जाता है कि क्या ये सारे लोग बेदीन हैं, तो उनका जवाब 'नहीं' में होता है। जब आप भी मुसलमान हैं और ये भी मुसलमान हैं, तो फिर इनसे ताल्लुक़ ख़त्म करना क्यों?

यह सच्ची बात हर मुसलमान पर वाज़ेह है कि जो मुसलमान किसी मुसलमान से सम्बन्ध तोड़ लेता है उसका कोई अमल भी आसमान की ऊँचाइयों की तरफ़ नहीं जाने पाता, जब तक कि सम्बन्ध का तोड़ना ख़त्म न हो, और नाराज़गी ख़त्म न हो जाए। झगड़ा एक ऐसा तीर है, जिसका निशाना दुश्मन नहीं होता, बल्कि हमारा अपना गला होता है। अगर हमारे नेक अमल क़बूल न हों तो ऐसी दुनिया का हमें क्या फ़ायदा?

कई औरतों की सोच यह होती है कि वे नाराज़गी और सम्बन्ध तोड़ लेने के ज़रिए अमन और सुरक्षा में आ जाती है, कठिनाइयों से बच जाती हैं। उनका किसी से न टकराव होता है, न झगड़ा। उनकी यह सोच सरासर ग़लत है। इसलिए कि हम अपने क़रीबी रिश्तेदारों के बिना कैसे ज़िन्दा रह सकते हैं? क्या कोई औरत अपने शौहर से नाराज़गी मोल लेकर सुकून से ज़िन्दगी गुज़ार सकती है? क्या ऐसी "ज़िन्दगी" ज़िन्दगी है? क्या ऐसी औरत या मर्द ख़ुशनसीब है? लड़ना-झगड़ना, सम्बन्ध तोड़ना और नाराज़गी तो मुस्लिम समाज के लिए बहुत ही नुक़्सानदेह है। इससे मुहब्बतें ख़त्म हो जाती हैं, चाहतें बाक़ी नहीं रहतीं, लगाव और प्यार ख़त्म हो जाता है। यह और बात है कि कोई मुसलमान औरत या मर्द कबूतर की तरह आँखें बन्द कर ले, सच्चाई से नज़रें चुराए, बदनसीबी को ख़ुशनसीबी, कठोरता को अच्छाई और बदक़िस्मती और महरूमी को कामयाबी माने।

मैंने अपने एक हफ़्तावार (साप्ताहिक) दर्से-क़ुरआन में मौजूद अपनी सारी बहनों से दरख़ास्त की कि आइए हम यह नेकी और भलाई की कुन्जी हाथ में लें और फिर उसे इस्तेमाल करके यह देखें कि हमें कितना सुकून, चैन और आराम मिलता है। हमपर हमेशा रहनेवाली नेकी के दरवाज़े कैसे खुलते हैं? मैंने कहा कि आज की कुन्जी ख़ुदा का यह हुक्म है–

> "तुम बुराई को उस नेकी से दूर करो जो बेहतरीन हो, तुम देखोगे कि तुम्हारे साथ, जिसकी दुश्मनी पड़ी हुई थी वह जिगरी दोस्त बन गया है।"
>
> (क़ुरआन, सूरा-41 हा॰मीम॰ अस-सजदा, आयत-34)

मैंने इस आयत का मक़सद और मतलब स्पष्ट किया और बहनों को बताया कि इस आयत पर अमल करने के लिए हमें अल्लाह पर पूरा यक़ीन और लगातार सब्र और बरदाश्त से काम लेना होगा। मैंने दुआ की कि अल्लाह इस आयत की मन्शा पर अमल करने और इसके मुताबिक़ चलने की हिम्मत दे। अब हमें अमल के नतीजे का इन्तिज़ार करना होगा। अब तक हम अपने मसलों को नज़रअन्दाज़ करते रहे हैं। हमें कठिनाइयों से मुँह फेरने की आदत पड़ चुकी है। हमें अब सच्चाइयों का सामना करना होगा। हममें से हर एक को अपने विरोधी के साथ एक अमली तजरिबा करना होगा। फिर हम देखेंगे कि दुश्मन को "जिगरी दोस्त" में तब्दील करने में कितना वक़्त लगता है और कितनी मेहनत की ज़रूरत पड़ती है? हो सकता है कि आपमें से कोई अगले हफ़्ते के दर्से-क़ुरआन में आकर रो-रोकर यह बताए कि जी मैं तो अपनी फ़ुलाँ विरोधी के पास गई थी। उसे मनाने के लिए, राज़ी करने की बहुत कोशिश की लेकिन मुझे कामयाबी नहीं मिली। कई रुकावटें खड़ी हुईं। मैं अपनी उन बहनों से कहूँगी कि वे अपने साथ सब्र और बरदाश्त की दौलत भी लेकर जाएँ। आप विरोधी के पास अकेली न जाएँ। अपने साथ सब्र को लेकर जाएँ और बार-बार जाएँ, मायूस न हों।

कई दिन बीत गए, कई हफ़्ते गुज़र गए। अभी हमने क़ुरआन मजीद की इस आयत पर होनेवाले अमल का जाइज़ा नहीं लिया था। एक दिन मैंने सभी बहनों से कहा, "आज आप लोगों के तजरिबों को सुनने का वक़्त आ गया है। वे कौन-कौन ख़ुशक़िस्मत हैं जिन्होंने इस आयत पर यक़ीन करने के बाद, दिल में जगह देने के बाद अपने तन-मन से इसपर अमल किया है।

उन मौजूद बहनों में से एक ने बताया, "अल्लाह का शुक्र है मुझे इसपर अमल की तौफ़ीक़ मिली है। मेरा अपनी ननद के साथ झगड़ा था। वह बहुत जल्द नाराज़ हो जाती है। मुझे उससे बहुत-सी नापसन्दीदा और नागवार बातें सुननी पड़ती थीं। इसलिए मैंने उससे न मिलने का फ़ैसला कर लिया। उसने मेरे इस फ़ैसले का बहुत सख़्त जवाब दिया। मैं असल में उसे पसन्द करती हूँ क्योंकि वह मेरे शौहर की बहन है, मेरी ननद है, मेरे बच्चों की फूफी है। मगर होता यह है कि शैतान हमें बहकाता है। हमारे ग़लत कामों को

अच्छा बनाकर पेश करता है तो हम उन्हें अच्छा समझने लगते हैं। जब यहाँ क़ुरआन के दर्स में इस आयत के बारे में यह तय किया तो मैंने घर जाकर इस आयत को बार-बार पढ़ा और फ़ैसला किया कि मैं दिलो-जान से इस आयत पर अमल करूँगी। फ़ैसला कर लेना तो आसान था लेकिन उसपर पूरी तरह अमल करना इतना आसान न था। ख़तरा था कि मेरी ननद नहीं मानेगी, रुकावट डालेगी।

मैं मुनासिब मौक़े की तलाश में थी ताकि इस नाराज़ी को ख़त्म करूँ। मुझे बहुत ही जल्द मौक़ा मिल गया। मुझे मालूम हुआ कि मेरी ननद अस्पताल में दाख़िल है। उसके यहाँ तीसरे बच्चे का जन्म हुआ था। मैंने अपने शौहर से ज़िद की कि वह मुझे अपने साथ अस्पताल ले जाएँ ताकि मैं उनकी बहन से मुलाक़ात करूँ। पहले तो वे हैरान हुए, फिर बड़ी ख़ुशी से मुझे अपने साथ अस्पताल ले गए। मेरा दिल ज़ोर से धड़क रहा था, धक-धक कर रहा था। मैंने दरवाज़ा खोला और मुस्कुराहट के साथ अन्दर चली गई। मैंने अपनी ननद को बच्चे की पैदाइश पर और उसकी जान की सलामती पर मुबारकबाद दी। मगर उसने मेरी तरफ़ कोई ध्यान न दिया और अपने भाई से ही बातें करती रही। मेरा शौहर परेशान था और उसे यह समझ में नहीं आ रहा था कि वह क्या करे। मैंने उसके जन्मे बच्चे को उठाया और उसे प्यार किया। मैंने ननद को ख़ुशख़बरी दी कि उसका बच्चा ख़ूबसूरत है और इंशा-अल्लाह नेक और फ़रमाँबरदार बनेगा।

मेरी ये बातें सुनकर वह हल्की-सी मुस्कुराई। ख़ैर हमारी मुलाक़ात ख़त्म हुई। मैं कार में बैठी। मैंने एक ठंडी साँस भरी, जो मेरे शौहर ने सुन ली। मैंने उस वक़्त अपने दिल में तय कर लिया कि मैं कभी हार नहीं मानूँगी। ख़ुदा का कलाम सच्चा है, मेरे अन्देशे ग़लत हैं। मैंने तो अच्छा सुलूक किया है, अब 'जिगरी दोस्त' बनना रह गया है। मुझे सब्र करना होगा। सब्र के लिए वक़्त चाहिए। घर पहुँचते ही मैंने दूर-दूर तक के सारे अन्देशे अपने दिल-दिमाग़ से झटक दिए और बुराई को नेकी से बदल देने का पक्का इरादा कर लिया। मैंने बच्चों के लिए खाना तैयार किया और खाना लेकर ननद के घर जा पहुँची। उनकी ख़ैरियत पूछी। वापस आकर मैं रात को बहुत ही

अमन और सुकून से सोई। मुझे अल्लाह के हुक्म की पैरवी पर ख़ुशी थी और इस बात का पूरा यक़ीन था कि फ़ायदेमन्द नतीजे जल्द सामने आएँगे।

अगले दिन मैंने अपनी ननद के रद्दे-अमल (प्रतिक्रिया) के बारे में जानना चाहा तो मालूम हुआ कि वह मेरे रवैए पर ख़ुश है और मेरी शुक्रगुज़ार है। मैंने उसके बच्चे के साथ जो सुलूक किया था, उसका उसपर बहुत अच्छा असर पड़ा। मैंने उस दिन भी खाना तैयार किया, वह खाना पहले खाने से बढ़कर था। मैं खाना लेकर फिर ननद के घर गई। अब मेरी कोशिश और मेहनत का नतीजा सामने आने लगा था।

मैं उसके बच्चों का ख़्याल रखने लगी। अब मेरी ननद मेरे साथ मुहब्बत और नर्मी से बातें करने लगी। उसने मुझे अपने बेटे के अक़ीक़े के प्रोग्राम में शामिल होने के लिए कहा। मुझे भला क्या इनकार हो सकता था। उसने बड़ी गर्मजोशी से मेरा स्वागत किया। ऐसा लगता था कि वह एक लम्बी जुदाई के बाद मुझसे मिल रही है। मैंने उसे गले से लगा लिया। मुझे अपनी ख़ुशक़िस्मती पर रश्क (गर्व) आ रहा था। अल्लाह ने मेरे अमल को क़बूल कर लिया था। और मुझे इनाम से नवाज़ा था। अब मुझे अपनी ननद सब औरतों से ज़्यादा प्यारी लगती थी। हालाँकि शैतान ने हमारे बीच ग़लतफ़हमी पैदा कर दी थी। मेरी प्यारी बहनो! क़ुरआन के अल्फ़ाज़ बड़े जामेअ और हिकमत से भरे हुए हैं। इनसान का दिल जब अल्लाह की फ़रमाँबरदारी कर लेता है तो उसमें कितनी बड़ी तब्दीली पैदा हो जाती है।"

उस औरत ने जब अपना तजरिबा बयान कर लिया तो मैंने उस औरत से कहा, आपकी ननद में बदलाव इसलिए आया है कि आपने ख़ुद पहल की। आपके सामने एक लक्ष्य था, वह था अल्लाह को राज़ी करना। आपने अपने मक़सद के लिए क़ुरआन को ज़रिआ बनाया। आपने क़ुरआन मजीद पर अमल किया। अल्लाह से मदद माँगी, सब्र से काम लिया तो अल्लाह, जो दिलों को बनानेवाला और जिस्मों का मालिक है, उसने दिलों को आपके लिए नर्म व मुलायम कर दिया, दुश्मनी दोस्ती में बदल गई।

एक दूसरी औरत ने कहा, "क्या आपके पास इतना समय है कि मैं अपना तजरबा बयान करूँ? मुझे ख़ुद इस तजरिबे के नतीजे का यक़ीन नहीं

आ रहा, मगर यह एक हक़ीक़त है।'' मैंने उसे अपना वाक़िआ बयान करने की इजाज़त दी तो उसने इस तरह अपना वाक़िआ सुनाना शुरू किया—

''मेरी एक पड़ोसन थी, जिसे मैं बहुत पसन्द करती थी। मैं उसके पास बैठना और बातें करना चाहती थी। मुझे उससे इतनी मुहब्बत हो गई कि मैंने अपनी कई राज़ की बातें उसे बता दीं। बात यह है कि मेरे मैकेवाले यहाँ से दूर हैं, कोई और क़रीबी रिश्तेदार भी यहाँ नहीं रहता, इसलिए यह पड़ोसन ही मेरे लिए सब कुछ थी। मुहब्बत और दोस्ती के कुछ साल बाद मैंने देखा कि मेरी पड़ोसन का रवैया बदल गया है। वह मेरे बारे में बदगुमानी में पड़ गई। मुझसे कटी-कटी रहने लगी। वह मुझसे ऐसी बातें जोड़ देती, जो मैंने कभी न की होतीं। मैंने उसे मनाने और उसकी ग़लतफ़हमियाँ दूर करने की हर मुमकिन कोशिश की मगर सब बेकार। उसने शैतान के वसवसे का शिकार होकर मुझसे आख़िरकार ताल्लुक़ ख़त्म कर लिया। बोल-चाल, आना-जाना सब बन्द हो गया। वह अब मेरे साथ बैठने को भी सही न समझती थी। अब तो मैंने भी अपनी इज़्ज़त और ख़ुद्दारी इसी में समझी कि उसके साथ मैं भी सम्बन्ध तोड़ दूँ। यही सूरतेहाल चल रही थी कि मैं क़ुरआन के दर्स में शामिल होने लगी और हमने सूरा हा-मीम-अस्-सजदा की इस आयत पर अमल करने का फ़ैसला किया। जब इस आयत की तशरीह (व्याख्या) हो रही थी तो मैं सोच रही थी कि मैंने तो कोशिश की मगर बेकार गई। मैं यह सोच ही रही थी कि हमारी उस्तानी साहिबा ने क़ुरआन के ये अल्फ़ाज़ तिलावत किए, जिनका तर्जमा यह है—

> ''यह ख़ूबी नसीब नहीं होती मगर उन लोगों को, जो सब्र करते हैं।'' (क़ुरआन, सूरा-41 हा॰मीम॰ अस-सजदा, आयत-35)

उस वक़्त मैं पुकार उठी कि सब्र तो मैंने किया ही नहीं। मैं मस्जिद के दर्से-क़ुरआन से वापस आई तो मैंने पक्का इरादा कर लिया था कि मैं लगातार कोशिश करती रहूँगी और नाकामी से बचने के लिए सब्र करती रहूँगी। मेरी यह नाराज़ सहेली चौथी मंज़िल पर रहती थी। हर सीढ़ी पर शैतान यही कहता था कि वापस चली जाओ मगर मेरा सच्चा-पक्का इरादा मुझे शैतानी चालों और वसवसे के शिकार होने से रोकता रहा और मैं बराबर

सीढ़ियाँ चढ़ती चली गई। अब मैं अपनी सहेली के घर के दरवाज़े के सामने खड़ी थी। मैंने एक बार उस तोहफ़े (उपहार) को देखा, जो मैं उसके लिए लाई थी। कॉल बेल पर हाथ रखा तो सोचा कि कुछ भी हो सकता है। मैंने उसके हर तरह के रवैये का सामना करने के लिए अपने आपको तैयार कर रखा था। मैंने उस वक़्त सोचा कि मैं यहाँ अपनी पड़ोसन के लिए नहीं आई बल्कि अल्लाह के लिए आई हूँ। मेरा मक़सद उसकी ख़ुशी हासिल करना है।

दरवाज़ा खुला तो वह मेरे सामने खड़ी थी। मैंने पूरे भरोसे और मुहब्बत से कहा, "क्या आप मुझे अन्दर आने की इजाज़त देंगी?" उसने एकदम पूरा दरवाज़ा खोल दिया। मुझे अन्दर ले गई। वह एक लम्बी जुदाई के बाद मेरे वहाँ आ जाने के बारे में सोच भी नहीं सकती थी। हमने बातें शुरू कीं। हर तरह के विषयों पर, मगर ग़ुस्से और मलामत के एक मामूली इशारे के बग़ैर। मुझे ऐसा मालूम हो रहा था कि मैं अपनी सहेली के घर में नहीं बल्कि सबसे बड़े रहम करनेवाले अल्लाह के बाग़ में बैठी हूँ। मैंने वहाँ कुछ देर बैठने और बातें करने के बाद सोचा कि अल्लाह की एक आयत पर चलने और उसके मुताबिक़ काम करने के नूर ने मेरी रूह और बदन को अन्धेरों की मनहूसियत से निकाल दिया है। अब मेरी पड़ोसन सबसे प्यारी और जिगरी दोस्त बन चुकी है। मैंने सब्र से काम लिया। सब्र का दामन हाथ से नहीं छोड़ा। बुराई का बदला अच्छाई से दिया। मायूस नहीं हुई। मैं अपनी ख़ुशक़िस्मती पर नाज़ (गर्व) करती हूँ। मैं अपनी ख़ुशी का इज़हार लफ़्ज़ों की सूरत में करने में असमर्थ हूँ और आपकी शुक्रगुज़ार हूँ।"

मैंने उस बहन से कहा, "आप मेरा शुक्रिया अदा न करें, बल्कि कायनात के पैदा करनेवाले और जिस्म-जान के मालिक का शुक्र अदा करें, जिसने हमें अपनी ख़ाहिशों का शिकार नहीं बनने दिया। हमें दूसरों के स्वार्थों और ख़ाहिशों का निशाना बनने के लिए अकेला नहीं छोड़ दिया बल्कि अपने पाक कलाम (क़ुरआन) से हमारा मार्गदर्शन किया। क़ुरआन मजीद पर अमल की आसानी अता फ़रमाई। हम सबका पैदा करनेवाला ही बेहतर जानता है कि इनसानों की भलाई किसमें है। बस सारा का सारा शुक्र है उस सबसे महान हस्ती का जिसने इनसानों की भलाई और फ़ायदे के लिए अपनी आख़िरी किताब अपने आख़िरी रसूल (सल्ल॰) के ज़रिए दुनिया में भेजी।"

नफ़रत और रंजिश

मेरे हफ़्तावार क़ुरआन का दर्स सुननेवाली औरतों में से एक अच्छे घराने की औरत मेरे घर पर आई और कहने लगी, "बाजी मैं मस्जिद में आपका दर्स सुनती हूँ तो मुझे ऐसा महसूस होता है कि मैं फ़ज़ा (वातावरण) में उड़नेवाला कोई पक्षी हूँ। आपकी बातों से मेरे मन व मस्तिष्क को सुकून मिलता है, मगर घर पहुँचकर ज़िन्दगी के तक़ाज़ों की कड़वाहट इतनी ज़्यादा होती है कि मैं मस्जिद में बयान होनेवाली बातों और अपने कर्मों में कोई समानता नहीं रख पाती।" यह कहकर वह बहन फूट-फूटकर रोने लगी। मेरे लिए यह कोई अनोखी बात न थी। बहुत-सी बहनें इस कैफ़ियत को महसूस करती हैं। यहाँ तक कि कई शौहर सिर्फ़ इसलिए अपनी बीवियों को क़ुरआन के दर्स में जाने से ही रोक देते हैं कि उन औरतों की ज़िन्दगियों और कामों पर उनका कोई प्रभाव नहीं होता। ख़ैर मैंने उस मिलनेवाली बहन को तसल्ली दी, उसकी ढारस बंधाई और पूछा कि वह अपना अस्ल मसला बताए ताकि मुझे रोने की सही वजह मालूम हो सके। हौसला पाकर उस बहन ने बताया—

"मेरा शौहर बहुत ही जज़्बाती और ग़ुस्सैल है। बहुत जल्द भड़क उठता है। उसके इस मिज़ाज की वजह से मैं भी उसे सख़्त लफ़्ज़ों में जवाब देने पर मजबूर हो जाती हूँ। वह भी इसी तरह जवाब देता है। मैं उससे नफ़रत करती हूँ और दिल में उसके ख़िलाफ़ नफ़रत रखती हूँ। मैं अपने इस रवैये पर दिल ही दिल में शर्मिन्दा भी रहती हूँ। मुझे यह कटु एहसास सताता रहता है कि मेरा अंजाम बहुत बुरा होगा।"

मैंने मुस्कुराकर कहा, "इसका इलाज यह है कि हम क़ुरआन मजीद का दामन थाम लें, क़ुरआन की तरफ़ पलटें और उसके मुताबिक़ चलें।" वह

बहन कहने लगी, "इसी लिए तो मैं आपके पास आई हूँ।" अब उसने अपने आँसू पोंछ लिए थे और उसकी आँखों में उम्मीद की किरन चमक रही थी। मैंने उससे कहा, "अल्लाह सुब्हानहू ने अपनी आयतें इसी लिए उतारी हैं कि हम उनको पढ़ें, उन्हें समझें और उनपर अमल करें। हमें पहले एक उसूल (नियम) पर सहमत हो जाना चाहिए। क्या आप मेरे साथ इस बात पर सहमत होंगी कि आपकी जन्नत की कुन्जी आपके शौहर के हाथ में है और जब तक आपका शौहर यह कुन्जी ख़ुशी से आपको न थमा दे, आप जन्नत में नहीं जा सकतीं?" उसने जवाब दिया, "यही बात तो मुझे परेशान करती है।" मैंने कहा, "अगर आपको यक़ीन है कि अपने शौहर से चाबी लिए बग़ैर आप जन्नत का दरवाज़ा नहीं खोल सकतीं तो मेरी प्यारी बहन! आपको मालूम होना चाहिए कि आपका सरताज आपका दुश्मन नहीं है। वह तो सब लोगों से बढ़कर आपका क़रीबी और प्यारा है। उसी की ख़ुशी की बदौलत आप अपने पालनहार 'रब' की ख़ुशनूदी की हक़दार बन सकती हैं। अल्लाह की रहमत हासिल करने का यही तरीक़ा है।

अब हम क़ुरआन मजीद की आयतों पर अमल करके इस नफ़रत और रंजिश का इलाज करेंगे, जो आपके दिल में अपने शौहर के ख़िलाफ़ है। आप ही नहीं बल्कि क़ुरआन की हिदायतों की बरकत से दर्स में शामिल होनेवाली सारी बहनें अपने शौहर, भाई, बहन, पड़ोसन और बच्चों के ख़िलाफ़ अपने दिलों में मौजूद नफ़रत और रंजिश का इलाज कर सकेंगी। आपका शौहर अगर आपके साथ बुरा बर्ताव करे तो भी आप उसके साथ अच्छा बर्ताव करें। अगर वह आपके साथ लड़-झगड़कर अपने काम पर चला जाए तो आप घबराएँ नहीं। किसी सोच और अन्देशे में न पड़ें। शैतानी चालों और वसवसों पर ध्यान न दें। अपने ज़ेहन और दिमाग़ पर बोझ न डालें। शौहर की बुराई के मुक़ाबले में अच्छाई करें। आप क़ुरआन मजीद की इस आयत पर अमल करें—

> "तुम बुराई को उस नेकी से दूर करो जो बेहतरीन हो, तुम देखोगे कि तुम्हारे साथ जिसकी दुश्मनी थी वह जिगरी दोस्त बन गया है।" (क़ुरआन, सूरा-41 हा॰मीम॰ अस-सजदा, आयत-34)

आप अल्लाह का नाम लेकर अल्लाह के हुक्म का पालन करने के लिए पक्के इरादे के साथ तैयार हो जाएँ और इसके लिए अपनी पूरी ताक़त लगा दीजिए, अच्छे से अच्छा उपाय कीजिए। अपने शौहर को राज़ी करने के लिए हर तरकीब आज़माइए। वह घर आए तो मुस्कुराते हुए उसका स्वागत कीजिए। उसके लिए उसका मनचाहा खाना तैयार कीजिए, बेहतरीन कपड़े पहनकर अपने को सजाइए। अच्छे अख़लाक़ (सुशीलता) से पेश आना, मुस्कुराहट क़ायम रखना, बात-बात पर न उलझना इन उसूलों को अपनाइए। अगर उसकी किसी बात पर नाराज़ी ज़ाहिर भी करनी है तो इसके लिए मुनासिब वक़्त का चयन करना चाहिए। आप जाएँ और इस बरकतवाली आयत पर अमल करें। आप देखेंगी कि इसके कितने बेहतरीन नतीजे सामने आते हैं। आपसे पहले कई बहनें इस आयत पर अमल कर चुकी हैं। आप भी तजरिबा कर लें। लोग इस आयत को पढ़ते हैं, मगर इसपर बहुत ही कम अमल करते हैं।''

मेरी ये नसीहत भरी बातें सुनकर वह बहन बोली, ''ख़ुदा की क़सम! यह काम तो बहुत मुश्किल मालूम होता है।'' मैंने जवाब में कहा—''आपका यह ख़याल सही नहीं है। यह शैतानी उकसाहट है। क़ुरआन मजीद तो इनसानों की तबीअतों और मिज़ाजों (स्वभावों) के मुताबिक़ ही मार्गदर्शन करता है। ख़ुदा अपनी पैदा की हुई चीज़ों को अच्छी तरह जानता है। इसलिए यह कहना कि इस क़ुरआन की किसी आयत पर अमल करना कठिन है, क़ुरआन की हिकमत और रब की मसलिहत के ख़िलाफ़ है। अगर आपके ज़ेहन में कभी इस तरह का विचार आए तो फ़ौरन इस आयत पर अमल कीजिए—

> ''और अगर तुम शैतान की तरफ़ से उकसाहट महसूस करो तो अल्लाह की पनाह माँग लो, वह सब कुछ सुनता और जानता है।''
> (क़ुरआन, सूरा-41 हा॰मीम॰ अस-सजदा, आयत-36)

जब आप सब कुछ सुनने-देखने और जाननेवाली हस्ती यानी अल्लाह की पनाह में आ जाएँगी तो वह आपको शैतानी उकसाहटों और वसवसों से सुरक्षित रखेगा।'' यह सुनकर वह कहने लगी, ''अल्लाह ने चाहा तो मैं ऐसा ही करूँगी और करके रहूँगी।'' मैंने कहा, ''आपके अलावा बहुत-से लोग

इस आयत पर अमल कर चुके हैं। अगर फिर भी आपको ख़ुदा के हुक्म और रब की बातों पर अमल करने में सुस्ती और कोताही का सामना करना पड़े तो आप यह पढ़ लिया करें—

"رَّبِّ أَعُوذُ بِكَ مِنْ هَمَزَاتِ الشَّيَاطِيْنِ○وَأَعُوذُ بِكَ رَبِّ أَن يَحْضُرُونِ○"

रब्बि अऊज़ु बि-क मिन् हमज़ाति-श्शयातीनि-व अऊज़ु बि-क रब्बि अँय्यहज़ुरून।

"ऐ मेरे रब! मैं शैतानों की उकसाहटों से तेरी पनाह माँगती हूँ, बल्कि ऐ मेरे पालनहार! मैं तो इससे भी तेरी पनाह माँगती हूँ कि वह मेरे पास आए।" (क़ुरआन, सूरा-23 मोमिनून, आयतें-97,98)

आप यह बात भी याद रखें कि क़ुरआन मजीद पर अमल करने के लिए दो चीज़ों की ज़रूरत है। सब्र के साथ अमल पर जमे रहना और अल्लाह से पूरी उम्मीद। इन दोनों ख़ूबियों के साथ अल्लाह के हुक्मों पर अमल आसान हो जाता है।

"यह ख़ूबी नसीब नहीं होती मगर उन लोगों को, जो सब्र करते हैं और यह मक़ाम हासिल नहीं होता मगर उन लोगों को जो बड़े नसीबवाले हैं।" (क़ुरआन, सूरा-41 हा॰मीम॰ अस-सजदा, आयत-35)

वह बोली, "ऐ रहम करनेवाले (मेरे अल्लाह)! मेरी मदद कर!"

मैंने कहा, "आप अगर अल्लाह की मदद चाहती हैं तो आपको चाहिए कि अपने शौहर को माफ़ करें और याद करें कि जब वह गुस्से की हालत में नहीं होता तो उसने आप पर कितने उपकार किए हैं, आपके साथ कैसा अच्छा बर्ताव किया है। आप गुस्से से बचें। क्योंकि ईमानवालों की ख़ूबी तो यह है कि—

"और जब उन्हें गुस्सा आता है तो वे माफ़ कर देते हैं।"
(क़ुरआन, सूरा-42 शुअरा, आयत-37)

क्या आपने कई गुनाह और ग़लतियाँ नहीं कीं, जिनके बारे में आप चाहती हैं कि अल्लाह उन्हें माफ़ कर दे? यह आपके लिए एक सुनहरा मौक़ा

है, इसे ग़नीमत और सही समझकर फ़ायदा उठाइए।

> "और उन्हें माफ़ कर देना चाहिए और दरगुज़र करना चाहिए। क्या तुम नहीं चाहते कि अल्लाह तुम्हें माफ़ करे?"
>
> (क़ुरआन, सूरा-24 नूर, आयत-22)

अल्लाह को तो यह मालूम है कि इस वक़्त आपका दिल गुस्से से भरा हुआ है। अगर आपने अपने गुस्से पर क़ाबू पा लिया तो अल्लाह आपको नेक लोगों का दर्जा अता करेगा। आप अपने क़ौलो-फ़ेल (करनी-कथनी) में गुस्से के ज़ाहिर करने से बचती रहें।

> "और जो गुस्से को पी जाते हैं और दूसरों के क़ुसूर माफ़ कर देते हैं, ऐसे नेक लोग अल्लाह को बहुत पसन्द हैं।"
>
> (क़ुरआन, सूरा-3 इमरान, आयत-134)

वह बहन बोली, "सुबहानल्लाह! मुझे तो ऐसा मालूम हो रहा है कि यह आयत मैं पहली बार सुन रही हूँ।"

मैंने कहा, "मैं चाहती हूँ कि आप इस आयत पर अमल करें और इसकी मिठास का आनन्द लें।" उसने कहा, "बातें करना तो बहुत आसान है, लेकिन मेरे लिए अपने गुस्से पर क़ाबू पाना कैसे मुमकिन होगा? मेरा गुस्सा तो एक ज्वालामुखी लावे की तरह है, जब तक फट नहीं जाता उसे सुकून नहीं होता।" मैंने कहा, "क्या मैं आपको यह बता नहीं चुकी हूँ कि अल्लाह जो हमारा पैदा करनेवाला और मालिक है, वही हमारे मसलों के हल का सही तरीक़ा जानता है। उस पैदा करनेवाले और जाननेवाले ने आपको अपने गुस्से के ज्वालामुखी पर कन्ट्रोल करने की सलाहियत दे रखी है; मगर आप अब तक उस सलाहियत को अपने काम में नहीं लाईं। ख़ुदा का फ़रमान है—

> "अपने रब की हम्द (प्रशंसा) के साथ उसकी तस्बीह (महिमागान) करो, उसके सामने सजदा करो और उस अन्तिम घड़ी तक अपने रब की बन्दगी करते रहो, जिसका आना बिलकुल यक़ीनी है।"
>
> (क़ुरआन, सूरा-15 हिज्र, आयतें-98,99)

फिर मैंने उनसे कहा, "अब मैं आपके सामने एक बहुत पढ़ी-लिखी

समझदार बहन का अमली तजरिबा बयान करती हूँ, जिसने अल्लाह की आयतों के मुताबिक़ अपने आपको ढाला। उसने इस बात का पक्का इरादा कर लिया था कि क़ुरआन मजीद उसके सिर्फ़ दिल और ज़बान पर न हो, बल्कि उसके शरीर के सारे अंग क़ुरआन के मुताबिक़ हरकत करेंगे। यह बहन अपनी दास्तान इस तरह सुनाती है—

'एक दिन मेरे शौहर ने मुझे मामूली-सी बात पर डाँटना शुरू कर दिया। उनका गुस्सा धीरे-धीरे बढ़ने लगा, वे ज़ोर-ज़ोर से चीख़ने-चिल्लाने लगे। मैं पहले तो आराम से सुनती रही फिर मेरे अन्दर ही अन्दर गुस्सा भड़कने लगा। गुस्से का एक ज्वालामुखी लावा था, जो फटने और बाहर निकलने के लिए बेताब और बेक़रार था। मैं उनको चिल्ला-चिल्लाकर जवाब देने के लिए लगभग तैयार ही थी कि मेरा ध्यान अल्लाह के फ़रमान की तरफ़ चला गया। मैं अल्लाह की हिदायतें अपने ज़्यादा क़रीब महसूस करने लगी। मुझे क़ुरआन की आयतों से शक्ति मिल रही थी। मेरे ज़ेहन में यह बात आई कि मेरी प्रतिक्रिया का सही इलाज यह है कि मैं अल्लाह की तस्बीह (महिमागान) करूँ। जैसा कि ख़ुदा का हुक्म है—

> "अपने पालनहार की हम्द के साथ उसकी तस्बीह करो, उसके सामने सजदा करो और उस आख़िरी घड़ी तक अपने रब की बन्दगी करते रहो, जिसका आना बिलकुल यक़ीनी है।"
>
> (क़ुरआन, सूरा-15 हिज्र, आयतें-98,99)

मैंने अपने-आप से कहा, क्या मैं इस तस्बीह (अल्लाह का महिमागान) करने की पोज़ीशन में हूँ? मैंने धिक्कारे हुए शैतान के शर (बुराई) से अल्लाह की पनाह माँगी और अपने-आप से कहा कि मेरे मन में जो कुछ है अल्लाह उसे ख़ूब जानता है। यह सोचकर मैंने "ला इला-ह इल्ला अन-त सुब्हान-क, इन्नी कुन्तु मिनज़्ज़ालिमीन" और इसी तरह के दूसरे तस्बीह के बोल पढ़ने शुरू कर दिए। उधर मेरे शौहर जो उनके मुँह में आता था, लगातार बिना मक़सद बके जा रहे थे। मानो शैतान ने उनपर कब्ज़ा कर लिया था। वे शैतानी उकसाहटों का निशाना बने हुए थे। मैंने इस मुक़ाबले में अपनी हार मान ली और अलग हट गई। वुज़ू किया और सजदा करनेवालों में शामिल

होने का इरादा करके नमाज़ शुरू कर दी। नमाज़ शुरू करनी थी कि शौहर ख़ामोश हो गए। वे हैरान और परेशान थे। वे नदामत और शर्मिन्दगी महसूस कर रहे थे। उन्होंने भी लड़ाई के मैदान से मुँह फेर कर अल्लाह की तरफ़ मुँह कर लिया। वे ख़ुदा से माफ़ी चाहने लगे यहाँ तक कि बिलकुल शान्त हो गए। अब वे मुझे राज़ी करना चाहते थे। मैं गुस्से में आई ही न थी इसलिए मैं सुकून से और मुत्मइन थी। वे मुझे नर्मी से बातचीत करते पाकर हैरान हुए। मैं मुस्कुरा रही थी और उनके गुस्से के दौरे पर डाँट-डपट भी नहीं कर रही थी। इसपर वे पूरी तरह हैरान थे। मैंने पहल करते हुए कहा, "मैं आपसे दरख़ास्त करती हूँ कि आप मुझे मेरी जन्नत की कुंजी दे दीजिए। मुझे जन्नत की बहुत ही चाहत है। मैं शैतान को अपने इस ख़ाब के सच होने की राह में बाधा नहीं बनने दूँगी।"

शौहर ने यह सुनकर कहा, "आप हमेशा कहा करती थीं कि क़ुरआन दुनिया की जन्नत है। आज आपने अपने अमल से यह साबित कर दिया है कि हक़ीक़त में क़ुरआन दुनिया की जन्नत है।" उसी दिन से मैं और मेरे शौहर "दर्से-क़ुरआन" के दिन का इन्तिज़ार करते रहते हैं ताकि दूसरी आयतों पर भी अमल करने का मौक़ा मिले। इस तरह हम सब क़ुरआन पर अमल करते हैं। हम मियाँ-बीवी भी और हमारी औलाद भी। अल्लाह के फ़ज़्ल और क़ुरआन मजीद की बरकत से हमारा घर जन्नत बन चुका है।'

यह ईमान को बढ़ा देनेवाला क़िस्सा सुनकर मेरी मेहमान बहन ने इक़रार किया, "आज से ही मैं अल्लाह की किताब के मुताबिक़ अपने-आपको बदलूँगी।"

मेहमान बहन चली गई। मैं उसके लिए दुआ करती रही। एक दिन मैं जब क़ुरआन का दर्स देने के लिए मस्जिद गई तो मुझे यह देखकर बहुत ख़ुशी हुई कि वही बहन एक और औरत के पास बैठी उसके आँसू पोंछ रही थी। और उसे ढारस बंधा रही थी कि किस तरह क़ुरआन मजीद के मुताबिक़ चलने में ही हमारे सारे मसलों और मुश्किलों का हल है। उसका चेहरा सुकून और इत्मीनान ज़ाहिर कर रहा था। उसकी ख़ूबसूरती पहले से बढ़ी हुई थी। मुझे यह देखकर प्यारे नबी (सल्ल॰) के एक सहाबी याद आए। उनके बारे

में अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने फ़रमाया कि ये जन्नतवालों में से हैं। हज़रत अब्दुल्लाह-बिन-उमर (रज़ि॰) इस टोह में लगे कि मालूम करें कि इन सहाबी (रज़ि॰) का वह कौन-सा अमल है, जिसकी वजह से अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने उन्हें जन्नती क़रार दिया है। वे इस मक़सद के लिए कुछ दिनों तक उन सहाबी (रज़ि॰) के घर में मेहमान बनकर रहे, ताकि देखें कि वे क्या करते हैं? उनका आना-जाना, उठना-बैठना कैसा है? उनकी इबादतों की क्या हालत है? वहाँ रहकर देखा कि उनकी नमाज़, रोज़ा तहज्जुद और नफ़्लों की तादाद कुछ ज़्यादा नहीं। आख़िर जब पैग़म्बर (सल्ल॰) द्वारा जन्नत की ख़ुशख़बरी दिए जाने की हिकमत वे समझ न पाए तो ख़ुद उन सहाबी (रज़ि॰) से पूछा कि अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने आपके बारे में कहा था, "बेशक वे जन्नतवालों में से हैं।" तो बताएँ आप कौन-सा ऐसा अमल करते हैं, जिसकी वजह से पैग़म्बर (सल्ल॰) ने आपको यह ख़ुशख़बरी दी है, ताकि मैं भी आपके मुताबिक़ अमल करूँ। उन सहाबी ने इसके जवाब में सोचकर कहा, "मेरे अन्दर और तो कोई ऐसा नुमायाँ ख़ास गुण नहीं। हाँ, यह है कि जब मैं सोने लगता हूँ तो मेरे सीने में किसी इनसान के ख़िलाफ़ नफ़रत नहीं होती। मैं माफ़ी-तलाफ़ी करके मुत्मइन होकर सुकून से सोता हूँ।"

तस्बीह (ख़ुदा का महिमागान)

कुछ औरतें मुझसे मिलने आईं। वे क़ुरआन मजीद पर अमल करने के प्रोग्राम के बारे में जानना चाहती थीं। मैंने उन्हें बताया कि क़ुरआन पर अमल करने के लिए सबसे अच्छी मिसाल और नमूना खुद अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) हैं। हमारा कर्तव्य है कि हम आयतों को क़ुरआन के पन्नों से बाहर निकालकर अमल की दुनिया में ले आएँ। इस तरह हम अपनी दुनिया को अल्लाह की प्रसन्नता और मन्शा के मुताबिक़ तामीर करें। पहले तिलावत और पढ़ने का तरीक़ा सही करें। फिर उसकी तफ़्सीर और तशरीह (व्याख्या और मतलब) समझें। फिर हम यह जानने की कोशिश करें कि अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने किस तरह इस आयत पर अपनी कथनी और करनी के ज़रिए अमल किया है। इसके बाद हम में से हर एक अपने आपसे यह पूछे कि हिकमतवाले और सब कुछ जाननेवाले अल्लाह की उतारी हुई यह आयत मुझसे क्या चाहती है और क्या तक़ाज़ा कर रही है?

उनमें से एक औरत ने कहा, "यह तो एक कठिन और लम्बे समय तक चलनेवाला काम है। मुझे नतीजे तक पहुँचने में बहुत वक़्त लगेगा और अल्लाह ही बेहतर जानता है कि मैं मनचाहे नतीजे तक पहुँच सकूँगी या नहीं।"

मैंने कहा कि यह क़ुरआन मजीद का ही बताया हुआ तरीक़ा है। यह कोई नई बात नहीं है। अल्लाह ने नबी (सल्ल॰) पर क़ुरआन नाज़िल किया और नबी (सल्ल॰) ने उसपर अमल करके दिखाया। अब हमें क़ुरआन के हुक्मों पर अमल करना और उसकी मन्शा के मुताबिक़ चलना है। हम अपनी जिन्दगियाँ क़ुरआन के मुताबिक़ ढालेंगे तो दुनिया में अच्छे अख़लाक़ का बोलबाला होगा और हम अल्लाह के वादे के मुताबिक़ ज़मीन के वारिस

बनेंगे।

> "अल्लाह ने वादा फ़रमाया है तुममें से उन लोगों के साथ, जो ईमान लाएँ और नेक अमल करें कि वह उनको उसी तरह ज़मीन में ख़लीफ़ा बनाएगा जिस तरह वह पहले गुज़रे हुए लोगों को बना चुका है।" (क़ुरआन, सूरा-24 अन-नूर, आयत-55)

हम लोग बातें तो बहुत बनाते हैं, मगर क़ुरआन मजीद की एक आयत पर भी अमल के लिए तैयार नहीं होते।

इन औरतों के साथ यह तय किया गया कि सिर्फ़ एक आयत पर हम सब मिलकर अमल करेंगे। चुनाँचे हमने एक आयत को तय कर लिया। मैंने उस आयत का मतलब और तफ़्सीर बयान की। फिर मैंने उन औरतों से कहा कि इस आयत को अमल में कैसे लाया जाए? मैं इसकी कैफ़ियत को आपके सामने बयान नहीं करूँगी। मैं इसे आप पर छोड़ती हूँ। मगर मैं आपसे यह गुज़ारिश ज़रूर करूँगी कि आप इस आयत को बार-बार दुहराएँ और उसके मतलब को अपने ज़ेहन में रखें। आयत यह थी—

> "कोई चीज़ नहीं जो उसकी तारीफ़ के साथ उसकी तस्बीह न कर रही हो, मगर तुम उसकी तस्बीह समझते नहीं हो।"
> (क़ुरआन, सूरा-17 बनी-इसराईल, आयत-44)

मैंने बहनों से यह भी कहा कि यह आयत सिर्फ़ आपकी ज़बानों पर ही न रहे बल्कि आपके दिलों में भी मौजूद रहे। ये औरतें चली गईं। कुछ दिनों के बाद वे मुझसे भी पहले तय वक़्त पर दर्स की जगह पर पहुँच गईं। हर बहन यह चाहती थी कि वह पहले बोले। मैंने पूछा कि तय की गई आयत के साथ आप लोगों का उठना-बैठना कैसा रहा? एक औरत ने ज़ोरदार अंदाज़ में अपना तजरिबा इस तरह बयान किया—

"मैं शादी-शुदा हूँ और मेरे छोटे-छोटे बच्चे हैं। हमारे घर में कोई नौकरानी नहीं है। सारा काम मुझे ही करना पड़ता है। मेरे शौहर काम के लिए कहीं जाते हैं और हर रोज़ देर से ही पहुँचते हैं। बड़े बच्चे अपने स्कूलों में जाते हैं, जबकि छोटे बच्चे घर में मेरे पास होते हैं। सुबह-सवेरे से लेकर

शाम तक मुझे लगातार काम करना पड़ता है। घर के छोटे-बड़े सब काम मुझे ही करने होते हैं। घर का हर आदमी मुझसे कोई न कोई काम करने के लिए कहता है। कभी-कभी तो शैतान मेरे दिल में वसवसे (बुरे ख़याल) डालता है, 'तुम क्या हो? तुम एक नौकरानी हो, बल्कि नौकरानी तुमसे बेहतर होती है। क्योंकि वह क्या काम करेगी, और फिर कितना काम करेगी यह सब तय होता है। फिर उसे तनख़ाह मिला करती है।' मैं कई बार शैतान के इस वसवसे से प्रभावित भी हो जाती हूँ, यानी शैतान मुझे बहकाने में कामयाब हो जाता है। मैं सुस्ती से काम करने लगती हूँ। फिर भी दिल के न चाहने के बावजूद भी घर के सभी काम मुझे ही करने होते हैं।

यह मेरी और मेरे घरवालों की ख़ुशक़िस्मती है कि मुझे आपके यहाँ क़ुरआन के दर्स की मजलिस में शामिल होने का मौक़ा मिला और फिर आपकी तरफ़ से तय की हुई आयत पर अमल का इरादा किया। मैं एक दिन सुबह-सवेरे बैठी यह सोच रही थी कि आज तो मुझे बहुत से काम करने हैं। सख़्त काम-काज के ख़याल ही से मेरा हौसला पस्त हो रहा था। मैंने अपने-आप से पूछा कि पहले कौन-सा काम करूँ? मैं पवित्र आयत को भी दोहरा रही थी कि मेरी नज़र मेज़ की तरफ़ गई। उसपर धूल पड़ी थी। मैंने अपने आप से पूछा—सुबहानल्लाह! क्या यह मेज़ भी तस्बीह करती है? फिर मेरे मुँह से ये शब्द ख़ुद-बख़ुद निकले, "कोई चीज़ ऐसी नहीं जो उसकी हम्द के साथ उसकी तस्बीह न कर रही हो, मगर तुम उनकी तस्बीह समझते नहीं हो।" (क़ुरआन, सूरा-17 बनी-इसराईल, आयत-44) मैं देखती हूँ कि यह मेज़ कैसे तस्बीह करती है? मैंने अपने-आपसे पूछा—मुझे फ़ौरन ही यह जवाब मिला—"तुम उनकी तस्बीह समझते नहीं हो?"

मैं एक ग़ैर-इरादी हरकत के साथ उठी, कपड़ा लिया और तस्बीह करनेवाली मेज़ से धूल साफ़ कर दी। मुझे मेज़ से लगाव-सा महसूस हुआ। हम दोनों तस्बीह करनेवाले हैं। फिर मैंने घर की किताबों की अलमारी और दूसरी सब चीज़ों की सफ़ाई की। अब मैं किचिन (रसोईघर) में थी। मुझे ऐसा महसूस हुआ जैसे यहाँ की हर चीज़ तस्बीह कर रही हो। दीवारें, चूल्हा, गैस, बर्तन। मैंने सोचा कि जो खाना मैं तैयार करती हूँ वह भी अल्लाह की तस्बीह

करता है। मुझे ऐसा महसूस हो रहा था कि हर चीज़ की तस्बीह करने की समझ के साथ ही मेरी ज़िन्दगी में कितना बड़ा इन्क़िलाब आ चुका है। ये सच्चाइयाँ जानकर ज़िन्दगी कितनी ख़ुशगवार, ख़ूबसूरत और सार्थक हो चुकी है। एक अजीब बात यह हुई कि अब घर के काम-काज में पहले से कम वक़्त लगने लगा। इसके साथ ही मुझे हज़रत फ़ातिमा (रज़ि॰) याद आईं। वे हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) के पास एक ख़ादिमा (नौकरानी) की दरख़ास्त करने गई थीं ताकि नौकरानी काम-काज में उनका हाथ बटाए। आप (सल्ल॰) ने उन्हें नौकरानी देने के बजाए नौकरानी से बेहतर चीज़ अता फ़रमाई। वह तस्बीह करने का अमल था। मैं पहले यह ख़याल करती थी कि नबी (सल्ल॰) ने उन्हें तस्बीह करने के लिए इसलिए कहा ताकि उन्हें नफ़सियाती ताक़त मिले और वे काम को आसान समझने लगें। मैंने तो कभी यह सोचा भी न था कि तस्बीह करने से काम करने में मदद मिलती है। इनसान के लिए काम की मशक़्क़त (कठिनाई) आसान हो जाती है, इसी लिए वह कम वक़्त में ज़्यादा काम कर लेता है।

मुसलमान तस्बीह करते वक़्त एक अच्छी बल्कि शानदार ज़ेहनी, नफ़सियाती कैफ़ियत से परिपूर्ण होता है। उसे थकावट और मेहनत का एहसास भी नहीं होता या बिलकुल मामूली थकावट महसूस होती है। मैं अपनी हर बहन बल्कि हर आदमी और मेहनत करनेवाले इनसान को यह मशवरा देती हूँ कि वह काम करते हुए 'सुबहानल्लाह, सुबहानल्लाहिलअज़ीम' जैसे तस्बीह के बोलों को बोलते रहने को अपना तरीक़ा बनाए। काम आसान भी होगा और ख़ुशगवार भी। जल्द भी होगा और आसानी से भी।"

इस बहन ने ज़ब अपना तजरिबा बयान कर लिया तो मैंने वाज़ेह करते हुए कहा—"मेरी प्यारी बहनो! क़ुरआन मजीद के मुताबिक़ अमल करने और अपने आपको क़ुरआन के साँचे में ढालने से यही मुराद है। जैसे हमारी इस बहन ने सिर्फ़ आयत के शब्द दोहराने पर बस नहीं किया, बल्कि आयत को अपने दिल में जगह दी और अपने हवास (इन्द्रियों) और अंगों को आयत से जोड़ दिया। क़ुरआन पर अमल करने का यही तरीक़ा होना चाहिए।

टी॰वी॰ और दीवारों की तस्बीह

एक लड़की ने उठकर कहा, "अब मेरी बात सुनो! मेरा मामला बहुत ही अजीब है। मैं मेडिकल कॉलेज की छात्रा हूँ। मेरे टीचर यह बताते रहते हैं कि अल्लाह ने इनसान को किस तरह बनाया है, वे इनसानों के जिस्म की विभिन्न अवस्थाओं के बारे में हमें बताते रहते हैं। मैं ख़ुदा की कारीगरी पर अचम्भित होकर "सुबहानल्लाह" कह दिया करती थी, मगर ये शब्द सिर्फ़ मेरी ज़बान से निकला करते थे। मुझे इस बात का ज्ञान न था कि मुझे ख़ुदा की नेमतों का शुक्र अमली तौर पर अदा करना चाहिए। मुझे अल्लाह की दी हुई नेमतों को अपने पालनहार की ख़ुशी के लिए इस्तेमाल करना चाहिए और मेरा मक़सद सिर्फ़ अल्लाह को राज़ी करना होना चाहिए। मगर ऊपर वाली आयत को अमल के लिए चुने जाने के बाद तो अल्लाह ने मेरे दिलो-दिमाग़ को रौशन कर दिया। मैं उठते-बैठते, चलते फिरते यहाँ तक कि सोते-जागते इस आयत को दोहराती रहती थी और इस आयत की मुहब्बत मेरे दिल में समा गई।

एक दिन मैंने मामूल के मुताबिक़ रिमोट-कन्ट्रोल हाथ में लिए टेलीविज़न स्क्रीन पर अपनी पसन्द की फ़ीचर-फ़िल्म देखनी चाही। फ़िल्म शुरू हो गई। कई मन्ज़र (दृश्य) सामने आए। मैं फ़िल्म देख रही थी मगर एक मुसलमान की हैसियत से मेरे जज़्बात आहत और ज़ख़्मी हो रहे थे। एक दम मुझे ख़याल आया कि यह टेलीवीज़न सेट भी ज़रूर अल्लाह की तस्बीह करता होगा? फिर मुझे अपने ख़याल के सही होने का एहसास हुआ, इसलिए कि— "कोई चीज़ ऐसी नहीं, जो उसकी हम्द के साथ उसकी तस्बीह न कर रही हो।" मुझे इस बात का पक्का यक़ीन हो गया कि टेलीविज़न सेट और यह पूरा सिस्टम अल्लाह की तस्बीह कर रहा है। मेरे रब की तस्बीह कर रहा है। अल्लाह ने तो इस सिस्टम को अपनी तस्बीह के लिए मुसख़्ख़र (वशीभूत) किया है। ख़ुदा ने इसे हमारे वश में कर दिया है ताकि ख़ुदा हमें आज़माए कि कौन अच्छे अमल करता है। मुझे अपने अन्दर से यह आवाज़ सुनाई दी कि टेलीविज़न सेट तो तस्बीह करनेवालों में से एक है, लेकिन मैंने इसे बड़ी तकलीफ़ पहुँचाई है। क्योंकि मैंने इसकी स्क्रीन पर ऐसी चीज़ पेश कर दी,

जो अल्लाह को नाराज़ करनेवाली है। साथ ही मुझे ख़याल आया कि टेलीविज़न सेट मुझसे नफ़रत करता है। इसे भी बेहूदा प्रोग्रामों, फ़ुज़ूल ड्रामों और लचर फ़िल्मों से नफ़रत है, मगर यह मजबूर है। यह सेट क़ियामत के दिन ख़ुदा के सामने मेरे ख़िलाफ़ गवाही देगा। ख़ुदा के सामने मेरी शिकायत करेगा।

बस इस ख़याल का आना था कि ग़ैर-शऊरी तौर पर मेरी उँगलियाँ रिमोट कन्ट्रोल पर पड़ीं। इस तरह अल्लाह ने अपनी इस आयत की बरकत से मुझे बेहूदा फ़िल्मों, ड्रामों और सीरियलों से नजात दिला दी। इसी क्षण मैंने यह तय कर लिया कि मैं कभी भी टेलीविज़न सेट को दुख नहीं पहुँचाऊँगी और इसपर वही चीज़ चलाऊँगी, जो अल्लाह को पसन्द होगी।

मेरे इस फ़ैसले से मुझे जो सुकून-चैन, इत्मीनान और ज़ेहनी ख़ुशी मिली, उसका अन्दाज़ा आप शायद न लगा सकें। मैं जिस तरह अपनी प्यारी उम्र बरबाद कर रही थी, अब उसपर शर्मिन्दगी होती है। मैं बेकार की बातों से बच गई हूँ। मुझे अल्लाह की नेमतों पर अमली शुक्र अदा करने का तरीक़ा मालूम हो गया है। मेरा हाथ अल्लाह को राज़ी करने के लिए काम करे तो यह अल्लाह का शुक्र है। मेरी आँख अल्लाह की ख़ुशी के लिए देखे तो यह अल्लाह का शुक्र है। मेरे पाँव उन जगहों की ओर चलते हैं जहाँ अल्लाह की फ़रमाँबरदारी की जाती है, तो यह पाँव की नेमत का शुक्र है। मतलब यह कि अल्लाह की नेमतों का शुक्र और उसकी तस्बीह ज़बान भी करती है, हवास (इन्द्रियाँ) भी करते हैं और शरीर के अंग भी।''

तस्बीह की बरकत से बड़ा गुनाह छोड़ दिया

उस लड़की का बयान अभी ख़त्म ही हुआ था कि एक और बहन ने अपना तजरिबा बयान करना शुरू किया। उन्होंने कहा, ''इस पवित्र आयत पर अमल की बरकत से अल्लाह ने मुझे बड़े गुनाह छोड़ देने की तौफ़ीक़ दी।'' सभी मौजूद बहनों ने हैरान होकर उसकी तरफ़ देखा तो उसने कहा, ''जी हाँ, इस क़ुरआनी आयत की बरकत से मैंने ग़ीबत (चुग़ली) जैसे बड़े गुनाह को हमेशा के लिए छोड़ दिया है। बात यह हुई कि एक दिन मैंने अपनी अम्मी जान को फ़ोन किया ताकि उनकी ख़ैरियत और कुशलता

मालूम करूँ। बात शुरू हुई तो उसका रुख़ कई रिश्तेदार औरतों की तरफ़ फिर गया। हम माँ-बेटी बड़े मज़े के साथ बातें कर रही थीं। दुश्मन ग़ायब था और हम दोनों ग़ीबत किए जा रही थीं। इसी दौरान अचानक मेरे दिल में ख़याल आया कि यह टेलीफ़ोन सेट भी तो तस्बीह करता है। क्योंकि क़ुरआन मजीद कहता है कि "कोई चीज़ नहीं जो उसकी 'हम्द' के साथ तस्बीह न कर रही हो।" लिहाज़ा यह टेलीफ़ोन सेट हमारी इस बातचीत से ख़ुश न होगा। मैंने माँ से रिश्तेदार औरतों के बारे में ग़ीबत फ़ौरन बन्द कर दी और अब क़ुरआन मजीद पर अमल करने के विषय पर बातचीत करने लगी। मैंने अम्मी को बताया कि इन दिनों हमारे लिए कौन-सी आयत अमल के लिए चुनी गई है। मैंने उन्हें यह भी बताया कि अभी-अभी टेलीफ़ोन सेट के तस्बीह करने के बारे में मैंने क्या सोचा है। मैंने अम्मी को बताया कि ग़ीबत जैसे बड़े गुनाह के लिए इस्तेमाल करके इस तस्बीह करनेवाले यन्त्र को हमने कितनी ज़्यादा तकलीफ़ पहुँचाई है।

मतलब यह कि मैंने अल्लाह के फ़रमान, "कोई चीज़ ऐसी नहीं, जो उसकी हम्द के साथ उसकी तस्बीह न कर रही हो, मगर तुम उनकी तस्बीह समझते नहीं हो।" पर अमल किया। मैंने ग़ीबत के विषय को छोड़कर क़ुरआन मजीद पर अमल, तहज्जुद, फ़ज्र की नमाज़ वग़ैरा के बारे में बातचीत शुरू कर दी। इस तरह हमारी टेलीफ़ोन पर बातचीत ख़त्म हुई। मगर मुझे एक आइडिया मिला। मैं पहले भी टेलीफ़ोन सेट को साफ़ रखती थी और उसके आस-पास की चीज़ें भी साफ़ करती थी। लेकिन अब मुझे टेलीफ़ोन सेट और अपने बीच एक दिलचस्प सम्बन्ध का एहसास होता था। हम दोनों एक ही पालनहार की तस्बीह करनेवाले हैं। हमारे अमल करने से अल्लाह की आयतें बिलकुल वाज़ेह और निखरकर हमारे सामने आ जाती हैं।"

एक और बहन अपना वाक़िआ सुनाना चाहती थीं मगर चूँकि वक़्त ख़त्म हो गया था। इसलिए हम उनकी बात न सुन सके।

मतलब यह कि इस आयत के बारे में क़ुरआन के दर्स की मजलिस में शरीक होनेवालों के तजरिबों ने तमाम बहनों पर अच्छे और ख़ुशगवार असर

छोड़े। यह भी साफ़ हुआ कि क़ुरआन पर अमल करना कोई कठिन काम नहीं है। ज़रूरत इस बात की है कि हम इसके लिए तैयार हो जाएँ, सूझ-बूझ और समझदारी से काम लें और फिर अमल करें।

बच्चों पर असर

जब मैं मस्जिद से निकलकर घर के लिए चलने लगी तो एक बहन ने घर तक मेरे साथ चलने पर ज़िद की। रास्ते में उसने एक ऐसी बात बताई जिसका मुझपर बड़ा असर हुआ।

उस बहन ने बताया, "मेरा एक भांजा है, जो पाँच साल से कुछ ही बड़ा है। वह मेज़ों, दीवारों और दरवाज़ों पर लकीरें बनाता रहता है। हमने बहुत कोशिश की कि वह इस हरकत से रुक जाए, नर्मी और सख़्ती से समझाया, मार-पीट भी की, मगर सब बेकार रहा। जब मैंने आपके दर्से-क़ुरआन में शामिल होना शुरू किया और अल्लाह का यह फ़रमान कि "और कोई चीज़ नहीं जो उसकी हम्द के साथ उसकी तस्बीह न कर रही हो; मगर तुम उनकी तस्बीह समझते नहीं हो।" हमें अमल करने के लिए तय किया गया तो मैं इस आयत को दोहराती रहती थी। मुझे इस बात की बहुत ज़्यादा चाह थी कि मेरी भावनाओं और अंगों में से कोई एक इस पर किसी तरह अमल करे, इसके मुताबिक़ मेरी सोच बने, इसके मुताबिक़ मेरे तन-बदन का अंग-अंग काम करे।

मैंने अपने भांजे को देखा कि वह एक नई मेज़ पर हर तरफ़ मार्कर से लाइनें खींच रहा है। उसने मेज़ पर लकीरें ही लकीरें बना दीं। मैंने भांजे को अपने पास बुलाकर बड़े प्यार और सुकून से कहा, "क्या तुम जानते हो कि मेज़ अल्लाह की तस्बीह करती है?" उसने बहुत ही हैरानी के साथ मेरी ओर देखा। उसका मुँह खुला हुआ था। उसने कहा, "सच्ची?" मैंने उसे बताया कि जी हाँ। यह बात हमें अल्लाह ने बताई है, जो हर चीज़ को जानता है। तुम जानते हो कि तुमने मेज़ को कितना गन्दा कर दिया है? ज़रूर मेज़ गुस्से में है और यह अल्लाह के सामने तुम्हारे ख़िलाफ़ शिकायत करेगी?

भांजे ने मेरी तरफ़ देखा, फिर मेज़ की तरफ़ देखा। फिर अपना कान मेज़

से लगा दिया। फिर बोला, "मगर मुझे तो कोई आवाज़ नहीं आ रही है। मैं तो कुछ भी नहीं सुन रहा। मैंने कहा मुझे मालूम है, यह बात अल्लाह पाक ने बता दी है कि हम लोग उनकी तस्बीह को समझते नहीं। बच्चा थोड़ी देर ठहरा रहा। फिर उसने एक कपड़ा उठाया और निहायत ख़ामोशी के साथ मेज़ साफ़ करने लगा। धीरे-धीरे लेकिन जोश और हौसले के साथ वह मेज़ साफ़ कर रहा था। उसकी रफ़्तार में तेज़ी आ रही थी ताकि वह बहुत जल्दी से मेज़ को मार्कर के निशानों से साफ़ कर दे। फिर उसने एक और कपड़ा लिया और दूसरी निशान लगाई हुई चीज़ों को साफ़ करने लगा। मैंने कहा, अब मैं भी तुम्हारी मदद करूँगी। वह बोला, "हाँ ख़ाला (मौसी)! आप मेरी मदद करें ताकि हम सारी चीज़ों से निशान और लकीरें साफ़ कर दें। ये सारी चीज़ें तो तस्बीह करती हैं।"

शाम के वक़्त उसकी अम्मी ड्यूटी से वापस आई तो उनसे लिपट गया। कहने लगा, "अम्मी, क्या आपको मालूम है कि यह मेज़ तस्बीह करती है?" उसने अपने नन्हे हाथों से मेज़ की तरफ़ इशारा करते हुए कहा। उसकी अम्मी ने जवाब दिया, "हाँ बेटा! क्यों नहीं। हर चीज़ अल्लाह की हम्द के साथ अल्लाह की तस्बीह करती है।" मेरे भांजे ने अब पहले मेरी तरफ़ देखा और फिर कमरे की हर चीज़ की तरफ़ देखा। उस दिन के बाद लिखने के ख़ास काग़ज़ के सिवा उसने कभी किसी चीज़ पर लकीरें नहीं लगाईं। अब वह अपनी उम्र के साथियों से कहता रहता है कि दुनिया की हर चीज़ अल्लाह की तस्बीह करती है। किसी भी चीज़ को गन्दी नहीं करना चाहिए।

एक दिन उसका बड़ा भाई किसी बात पर उसे मारने लगा तो उसने कहा, "भैया मुझे मत मारो! मैं तस्बीह करता हूँ।" यह सुनकर मुझे हँसी आई और मारे ख़ुशी के रो पड़ी।

क़ुरआन मजीद की आयतों पर अमल करने की बहुत ज़रूरत है। क़ुरआन मजीद अल्लाह ने उतारा ही इसलिए है कि लोग उसके मुताबिक़ अपनी ज़िन्दगियों को ढालें। जिस बात को एक पाँच साल के बच्चे ने समझ लिया, न जाने बड़ी उम्र के लोग उसे कब समझेंगे?

माँ-बाप के साथ अच्छा बरताव

माँ-बाप के साथ अच्छा सुलूक करने के बारे में बातचीत करना तो बहुत आसान है। इस विषय पर तक़रीर करना भी कोई कठिन काम नहीं है। लेकिन अमली तौर पर माँ-बाप की ख़िदमत करना, उनसे नेक और अच्छा बरताव करना इतना आसान नहीं। इसके लिए अल्लाह पर गहरा और पक्का ईमान चाहिए। सब्र और सहनशीलता चाहिए। सबसे बढ़कर एक बेटी के लिए ज़रूरी है कि वह अपने माँ-बाप के लिए मीठी बोली बोलनेवाली हो। अल्लाह ने माँ-बाप के साथ हमेशा अच्छा सुलूक करने का हुक्म दिया है। अपने राज़ों और भेदों को वही बेहतर जानता है। माँ-बाप से अच्छा बरताव एक ऐसा नेक अमल है, जिससे इख़लास (पाकीज़गी) की ख़ुशबू महकती है। यह अल्लाह की हमेशा फ़रमाँबरदारी का सुबूत है। मतलब यह कि माँ-बाप के साथ अच्छे बरताव का शुमार उन बुनियादी ख़ूबियों में होता है, जिनकी तरबियत मुस्लिम समाज के सारे लोगों को मिलनी चाहिए। न सिर्फ़ क़ुरआन मजीद ने बल्कि प्यारे नबी (सल्ल०) ने भी माँ-बाप के साथ अच्छे सुलूक और बरताव की ताकीद की है।

हमने अपने हफ़्तावार दर्से-क़ुरआन मजीद में यह तय किया कि हम इस बार अल्लाह के इस हुक्म पर अमल करेंगे—

> "और उन्हें (माँ-बाप को) उफ़ तक न कहो, न उन्हें झिड़ककर जवाब दो।" (क़ुरआन, सूरा-17 बनी-इसराईल, आयत-23)

हमने अपने प्रोग्राम के मुताबिक़ इस आयत की तफ़्सीर (व्याख्या) बयान की। इस पर वाज़ेह और पूरी-पूरी बातचीत की। फिर यह तय किया गया कि हममें से कोई भी न तो अपने माँ-बाप को झिड़के और न ही उन्हें तकलीफ़

पहुँचाए, चाहे वे कुछ भी करें या कहें।

जब कुछ दिनों बाद अपने-अपने तजरिबे बयान करने का वक़्त आया तो क़ुरआन के दर्स में शामिल होनेवाली बहनों में से पाँच औरतों ने क़ुरआन मजीद की आयत के इस छोटे से हिस्से पर अमल करने के अपने तजरिबों को बताया।

आमिल और तान्त्रिक के बजाए अल्लाह

मेरी अम्मी मुझसे मिलने के लिए मेरे घर आई हुई थीं। वे बहुत दुखी और परेशान नज़र आ रही थीं। मैंने ख़ैरियत पूछी तो कहने लगीं, "तेरी बहन की शादी में काफ़ी देर हो चुकी है। मुझे कुछ लोगों ने बताया है कि इस ग़ैर-मामूली देरी की वजह यह है कि उसपर जादू किया गया है। कोई कहता है कि उसपर कोई जिन्न हावी है, जो उसकी शादी नहीं होने देता। इसलिए बेटी आप मेरे साथ चलें ताकि लोग जिस आमिल (तान्त्रिक) का पता बताते हैं, हम उसके पास जाएँ और वह हमारी मदद करे ताकि तेरी बहन की शादी जल्द हो जाए।" मेरी अम्मी ने यह बात की तो मुझे बहुत दुःख हुआ। फ़ौरन ही मेरे होठों पर क़ुरआन मजीद की यह आयत आ गई—

> "और अगर अल्लाह तुम्हें किसी तरह का नुक़्सान पहुँचाए तो उसके सिवा कोई नहीं, जो तुम्हें उस नुक़्सान से बचा सके और अगर वह तुम्हें किसी भलाई से फ़ायदा पहुँचाना चाहे तो वह हर चीज़ पर क़ुदरत रखता है।" (क़ुरआन, सूरा-6 अनआम, आयत-17)

मेरी अम्मी गुस्से में थीं, वे कहने लगीं "मैं अपनी बेटी को नुक़्सान से बचाने जा रही हूँ। इसमें क्या हरज है? मैं किसी को नुक़्सान नहीं पहुँचा रही, किसी का नुक़्सान नहीं कर रही। लेकिन तुम अपनी बहन की मदद नहीं करना चाहती, तुम उसके फ़ायदे से ख़ुश नहीं हो।" इसपर हम दोनों माँ-बेटी में झगड़ा होने लगा। मैंने यह समझा कि मैं हक़ पर हूँ, मेरी माँ नाहक़ पर। मुझे सच्चाई की हिमायत करनी है। लेकिन अफ़सोस और बड़े दुख की बात है कि मैं शैतान की उकसाहट पर सच्चाई की हिमायत ग़लत तरीक़े से करने लगी। मैंने अपनी माँ का ख़याल न किया और हक़ की हिमायत के ज़ोश

में अपनी आवाज़ अम्मी की आवाज़ से ऊँची कर ली। फ़ौरन ही मुझे ख़याल आया कि हमने दर्से-क़ुरआन की मजलिस में क्या तय किया था। मुझे आयत याद आ गई। मैंने अपनी आवाज़ बिलकुल धीमी कर ली। मुझे अब सुकून महसूस होने लगा। जज़्बात की सख़्ती और गर्मी ख़त्म हो गई। अम्मी का एहतिराम दिल-दिमाग़ में छा गया। मैंने आगे बढ़कर अपनी अम्मी का हाथ चूम लिया। गुस्ताख़ी पर माफ़ी माँगी और उन्हें राज़ी करने की भरपूर कोशिश करने लगी।

अब अम्मी भी ख़ामोश और सुकून से थीं। कुछ देर के बाद उन्होंने मुझसे पूछा, "अच्छा तू मेरे साथ कब आएगी? वह आमिल (तान्त्रिक) बड़ा मशहूर है। दूर-दूर तक वह मशहूर हो चुका है। मुझे उम्मीद है कि वह बन्दा तेरी बहन की शादी के सिलसिले में हमारी मदद करेगा। मैं उसको इसका मुआवज़ा दूँगी।" मैंने बड़ी मुहब्बत और प्यार से कहा, लेकिन एक और साहब भी हैं जो आपकी मदद भी करेंगे, आप से कोई फ़ीस भी नहीं माँगेंगे। उनका अमल भी यक़ीनी है। उनके काम की पूरी-पूरी गारन्टी है। बल्कि जब तक आपका यह काम हो नहीं जाता वे ख़ुद अपने तौर पर आपको सुकून और इत्मीनान मुहैया करेंगे।

यह सुनकर मेरी अम्मी 'सुबहानल्लाह' बोलीं और कहा, "मेरी सहेलियों और जाननेवाली औरतों ने मुझे ऐसे आलिम के बारे में तो कुछ नहीं बताया। लेकिन अगर तुझे उसपर पूरा भरोसा है, यक़ीन है तो कोई बात नहीं! हम उसी के पास चलेंगे। इसमें कोई मुश्किल नहीं।" मैंने कहा, "अम्मी जान! उस आलिम का क्या कहना! उसकी सलाहियत और योग्यता तो बहुत ज़्यादा और बेहद है। बल्कि उसका तो यह हाल है कि जब वह किसी काम के करने का इरादा कर लेता है और कह देता है कि 'हो जा' तो वह काम फ़ौरन हो जाता है। वह आपसे माल भी नहीं लेगा, क्योंकि वह ख़ुद मालदार है। उसमें लालच और किसी तरह का लोभ नहीं। वह तो महादानी है। ख़ुद लोगों को देता है। प्यारी अम्मी! आप उसी से मिलिए और उससे ही दरख़्वास्त कीजिए।"

मेरी अम्मी मेरी ये बातें सुनकर बहुत ख़ुश हुईं। कहने लगीं, "अल्लाह

की क़सम! मैं उस आमिल (तान्त्रिक) के बारे में तुम्हारी बातें सुनकर बहुत ख़ुश हूँ। मगर बेटी! "अब हमें देर नहीं करनी चाहिए। तुम उससे मिलने का वक़्त ले लो, तो हम उसके पास जाएँ। इस बात का ख़याल रखना कि मुलाक़ात का वक़्त जल्दी मिल जाए।" मैंने कहा, "ठीक है, हम देर नहीं करते। हम उसके पास चलते हैं। देखें—वह तो हमारे पास ही आ गया है। अम्मी ने हैरान और परेशान होकर दाएँ-बाएँ देखा। मैंने फ़ौरन क़िब्ला की तरफ़ रुख़ कर लिया और गिड़गिड़ा-गिड़गिड़ाकर, रो-रोकर ख़ुदा से दुआ और फ़रियाद करती रही। अल्लाह से मदद माँगती रही, उसके आगे हाथ फैलाकर सवाल करती रही। मेरी अम्मी फूट-फूटकर रो रही थीं। वे सजदे में गिर पड़ी थीं। तौबा और माफ़ी माँगने में लगी हुई थीं। अल्लाह से माँग रही थीं। जब माँगनेवाला इस तरह माँगता है तो उसकी माँग पूरी की जाती है। वह महादानी और दाता कब किसी की झोली ख़ाली जाने देता है।"

जब यह बहन अपना ईमान बढ़ा देनेवाला क़िस्सा सुना चुकीं तो हर आँख आँसू से भरी हुई थी।

माँ-बाप में बदलाव

जब यह बहन अपना ईमान बढ़ा देनेवाला वाक़िआ सुना चुकीं तो मजलिस से एक आवाज़ उभरी, "क्या मैं कुछ कह सकती हूँ। क्या आप लोग मेरा वाक़िआ सुनना पसन्द करेंगी?" हम सबकी नज़रें आवाज़ की तरफ़ उठीं तो एक नवउम्र लड़की खड़ी थी। उसकी उम्र अभी बीस साल भी न हुई थी। उसने अपना वाक़िआ कुछ इस तरह सुनाया—

"मैं अपने माँ-बाप की इकलौती सन्तान हूँ। मेरा कोई और बहन-भाई नहीं। इसलिए मेरे माँ-बाप मेरा बहुत ख़याल करते हैं। बहुत ज़्यादा प्यार करते हैं। उन्होंने मुझे बड़े लाड-प्यार से पाला-पोसा है और मेरी हर बात मानी है। ज़िन्दगी बड़े मज़े से गुज़र रही थी। मेरे अब्बा जो कमाकर लाते हम हलाल-हराम का फ़र्क़ किए बग़ैर खाते। ज़िन्दगी इसी डगर पर चल रही थी कि अल्लाह ने मुझे आप जैसी अच्छी औरतों की मजलिस में शिरकत करने की तौफ़ीक़ दी।

इस तरह मुझे एक नई और मिठास भरी चीज़ को जानने का मौक़ा मिला। यह प्यारी और मधुर चीज़ अल्लाह की किताब क़ुरआन है इसकी मिठास और लज़्ज़त का क्या कहना! मेरी इससे बड़ी ख़ुशनसीबी और क्या हो सकती है कि मैं अपने-आपको क़ुरआन की आयत के सुपुर्द कर दूँ, इस पर अमल करूँ और लोगों को मेरे ज़रिए यह मालूम हो कि क़ुरआन मजीद पर अमल का तजरिबा कैसे होता है।

यह ख़ुशनसीबी तो बहुत बड़ी है, मगर हमारे घर में एक कश-मकश शुरू हो गई है। मेरे और मेरे माँ-बाप के बीच एक झगड़े की-सी सूरत पैदा हो गई। वे चाहते थे कि मैं उनकी मर्ज़ी पर चलूँ और वह काम करूँ जो वे अपने ख़याल के मुताबिक़ मेरे दुनियावी फ़ायदे के लिए चाहते थे। हलाल-हराम और जाइज़-नाजाइज़ का फ़र्क़ न करूँ। वे मुझे मजबूर करना चाहते थे कि मैं उनके साथ क्लब जाया करूँ, वहाँ दोस्त बनाऊँ। वहाँ जाकर दोस्तों के साथ खेलूँ, वरज़िशें करूँ, और दूसरे तरह-तरह के खेलों में हिस्सा लूँ। मैं क्लब जाने के लिए उनकी पसन्द का लिबास पहनूँ ताकि सबकी नज़रों में जचूँ, सब मुझे पसन्द करें। क्लब के खेलों में लाज़िमन शिरकत करूँ, ताकि वहाँ नौजवान मुझे देखें और पसन्द करें। उनकी ख़ाहिश थी कि मेरे जिस्म का ज़्यादातर हिस्सा बेलिबास हो। वे मुझे मजबूर करते थे कि मैं थिएटर देखूँ, ड्रामे देखूँ चाहे वे कितने ही बेहूदा और गन्दे क्यों न हों।

माँ-बाप की माँगें और उनकी हठधर्मी इस दर्से-क़ुरआन की मजलिस से बिलकुल टकराती हैं। मैंने अगर आपकी इस मुबारक मजलिस में शिरकत न की होती तो शायद मैं अपने माँ-बाप की ज़िद पर उनकी माँगें मान लेती। लेकिन मेरी बड़ी ख़ुशक़िस्मती थी कि मुझे इस पवित्र मजलिस में शामिल होने का मौक़ा मिला। शुरू-शुरू में तो मैं माँ-बाप के सामने चिल्ला-चिल्लाकर बोलती थी। मैं उनके साथ क्लब और थिएटर में जाने से इनकार कर देती और अपने कमरे में घुसकर अन्दर से दरवाज़ा बन्द कर लेती। मैं जब भी उनसे मिलती बहुत ही कड़वाहट के साथ, रूखे-फीके अन्दाज़ में मिलती। मैं समझती थी कि मेरा अपने माँ-बाप के साथ इस तरह कड़वाहट से पेश आना सबसे बड़ी ख़ुदा की फ़रमाँबरदारी और सबसे बड़ा जिहाद है। मगर जब

आपकी तरफ़ से "और उन्हें उफ़ तक न कहो और न उन्हें झिड़ककर जवाब दो।" पर अमल करना तय हुआ तो सूरते-हाल बिलकुल बदल गई। त्योरी चढ़ाने के बजाए मैं मुस्कुराने लगी, दरवाज़ा बन्द करने के बजाए मैं उनके साथ बैठने लगी। मैं प्यार और आदर के साथ बात करती, उनकी मदद करती। मैं उनका शुक्रिया अदा करती कि उन्होंने मेरे लिए इतनी तकलीफ़ें बरदाश्त की हैं और इतना माल ख़र्च किया है। मैं तो ख़ुदा के हुक्म की पाबन्दी कर रही थी। मैंने धीरे-धीरे उन्हें अपनी नई सहेलियों से परिचित करवाया। मैंने उन्हें बताया कि ऐसा करें तो अल्लाह ख़ुश होता है। फ़ुलाँ काम करें तो अल्लाह राज़ी होता है, अल्लाह का फ़ुलाँ चीज़ के बारे में यह हुक्म है, अल्लाह ने फ़ुलाँ-फ़ुलाँ काम से रोका है।

मैंने देखा कि मेरी अम्मी काफ़ी बदल गई हैं। वे मुझसे क़ुरआन मजीद और इस्लाम के बारे में ज़्यादा जानकारी लेने में दिलचस्पी ले रही हैं। वे अपने पिछले ख़यालों और कामों पर शर्मिन्दा हैं। यह शर्मिन्दगी उनके चेहरे से झलकती है। मैं आप सबको यह बताकर हैरान करना चाहूँगी कि मेरी अम्मी मेरे साथ बैठी हैं।"

माँ ने उठकर अपनी बेटी को गले लगाया और वे उसके चेहरे को लगातार चूमने लगीं। हम सबने यह देखा तो अल्लाह की क़ुदरत पर हैरान थीं कि वह किस तरह दिलों को बदल देता है। अपने बन्दों पर कितना ज़्यादा मेहरबान और रहम करनेवाला है।

एक बहन का अजीब तजरिबा

यह ईमान बढ़ा देनेवाला मन्ज़र अभी ख़त्म नहीं हुआ था कि एक महिला खड़ी हुईं। उन्होंने हसरत भरी नज़रें माँ-बेटी पर डालीं और फिर इस तरह बोलना शुरू किया, "सुबहानल्लाह, यह सब कुछ कैसे हो गया! मेरी अम्मी तो मेरी कोई बात नहीं मानतीं। मैंने उन्हें मनाने और क़ायल करने की भरपूर कोशिश की है, मगर सब बेकार रहा।"

हमने उस बहन को बताया कि इसके लिए सब्र और बरदाश्त चाहिए। हमें मेहनत करनी चाहिए। साबित-क़दमी से काम लेना चाहिए। आपको

आयतों पर अमल करने के साथ-साथ दुआ से भी काम लेना चाहिए। इसलिए कि दिल तो अल्लाह के क़ब्ज़े में हैं। वह जिस तरफ़ चाहे दिलों को फेर देता है। आपका काम अमल करना, दुआ करना और अल्लाह की रहमत से कभी भी निराश न होना है। इसके बाद दर्स में शामिल होनेवाली सभी बहनों ने वादा किया कि सब रात की तनहाइयों में इस बहन की माँ के लिए ख़ुदा से दुआ करेंगी।

क़ुरआन का दर्स ख़त्म होने पर हमने यह तय किया कि अभी इस आयत पर ही अमल रहेगा। इसके साथ इस आयत के और अतिरिक्त शब्द शामिल हुए "बल्कि उनसे एहतिराम के साथ बात करो" (क़ुरआन, सूरा-17 बनी-इसराईल, आयत-23)। अब हम इस आयत के साथ पूरा हफ़्ता गुज़ारेंगे। हम इस आयत को दोहराते रहेंगे यहाँ तक कि यह आयत हमारे दिलों में रच-बस जाए। फिर हमारे बदन का अंग-अंग इस पर अमल करेगा। हम अपने हवास (इन्द्रियों) को भी इस आयत पर अमल के लिए काम में लाएँगे और आइन्दा मुलाक़ात में इस आयत के तजरिबे को बयान करेंगे।

बात तो ज़ाहिर में बहुत आसान मालूम होती है, लेकिन हर इनसान की कुछ ख़ास आदतें होती हैं, जिनपर उसकी परवरिश हुई होती है। उन आदतों को छोड़ना बहुत ही कठिन होता है। माँ-बाप के साथ बात करने और आम इनसान के साथ बात करने में बहुत फ़र्क़ है। कोई तो अपने माँ-बाप के साथ झिड़ककर बात करता है। उनकी हर बात को नकार देता है। लापरवाही से जवाब देता है। कोई अपने माँ-बाप के साथ आम चलन के मुताबिक़ बात करता है। जबकि कोई इनसान अपने माँ-बाप के साथ सख़्ती से पेश आता है और उसे इसका एहसास भी नहीं होता। कोई ऐसा भी है, जिसे यह बात याद नहीं कि उसने अपनी पूरी ज़िन्दगी में कभी एक बार भी अपने माँ-बाप का हाथ चूमा हो। नीचे कुछ तजरिबे बयान किए जाते हैं, जिससे बात वाज़ेह हो जाएगी।

माँ-बाप के साथ मुहब्बत ज़ाहिर करना

जब मैं अल्लाह का यह फ़रमान दोहराया करती थी, "बल्कि उनसे

आदर-सम्मान के साथ बात करो" तो मैं समझती थी कि यह तो सिर्फ़ कुछ चुने हुए शब्द दोहरा देने की बात है। माँ-बाप के सामने कुछ नपे-तुले जुमले कह दिए जाएँ तो उनका आदर हो जाता है। लेकिन यह मेरा सिर्फ़ गुमान साबित हुआ। इसका सच्चाई से कोई सम्बन्ध न था। मैं एक बार अपनी प्यारी अम्मी के पास गई, पहले से कुछ वाक्य कहने के लिए सोच लिए थे। ख़याल यह था कि ये वाक्य दोहरा दूँगी। मैंने अम्मी के सामने जाकर ये रटे हुए जुमले अदा करने चाहे मगर मेरी ज़बान बन्द हो गई। मुझे बहुत दुःख हुआ कि मैं अपनी अम्मी के सामने कुछ जुमले भी न कह पाई और पहली कोशिश में ही नाकाम हो गई। फिर मैंने नए सिरे से अपने अन्दर हिम्मत जुटाई और चाहा कि अपने बुज़ुर्ग बाप के सामने अपने अदब व एहतिराम का इज़हार कर पाऊँ, उनको यह यक़ीन दिला दूँ कि मुझे उनसे कितना प्यार है, लेकिन इस बार भी जुमले धरे-के-धरे रह गए।

इस बार मैंने अपने-आप से कहा, अल्लाह चाहेगा तो नाकाम नहीं होऊँगी, बात तो मामूली-सी है। मुझे क्या हो गया है? मेरे अन्दर से आवाज़ आई कि जब तू ये जुमले अदा करेगी तो तेरे माँ-बाप हैरान हो जाएँगे। हो सकता है कि तू हँस पड़े और अपने बहन-भाइयों के मज़ाक का निशाना बने। इसपर मैंने अल्लाह से दुआ की कि ऐ अल्लाह! मुझे अपनी आयत पर अमल करने का हौसला अता कर। फिर मुझे एक ख़याल आया। मैं बाज़ार गई, जहाँ फूल बेचनेवालों की दुकानें हैं। मैंने वहाँ से अपनी अम्मी और अब्बू जान के लिए फूल ख़रीदे। घर आकर मैंने पहले अपनी अम्मी को फूल पेश किए और साथ ही ये शब्द कहे, "मेरी प्यारी अम्मी! ये फूल आपके लिए हैं।" इसपर मेरी माँ मुस्कुराईं। मैं उनकी इस मुस्कुराहट को कभी भूल न सकूँगी। मरते दम तक याद रखूँगी। वह मुझे कह रही थीं–"क्या मैं तुम्हारे नज़दीक ऐसी हूँ?" मैंने जवाब दिया, "मेरी प्यारी अम्मी! आप मुझे सारी दुनिया से ज़्यादा प्यारी हैं। आप मुझे सारे जहाँ से ज़्यादा प्रिय हैं। आप मेरे नज़दीक इस कायनात में सबसे ज़्यादा क़ीमती हैं। आपके बिना मेरे लिए यह संसार एक रेगिस्तान है।"

मैंने ये शब्द कह दिए और अपनी अम्मी का रद्दे-अमल (प्रतिक्रिया)

जानने का इन्तिज़ार नहीं किया। मैं सीधी अब्बू के पास चली गई और उन्हें फूल पेश करते हुए कहा–"मेरी तरफ़ से आपके लिए कुछ फूल हैं! अल्लाह अच्छा बदला दे। मैं आपके लिए बहुत दुआएँ करती हूँ।" अब्बू जी ने मुझसे कहा, "भला हो, ख़ैरियत है? आज तो आप बहुत ख़ुश हैं, क्या बात है?" मैंने जवाब दिया, "जी हाँ। मैं आप दोनों से बहुत ख़ुश हूँ।"

मैंने फ़ौरन अपने कमरे का रुख़ किया। मेरा दिल तेज़ी से धड़क रहा था। मैंने अपने-आपसे कहा, "बात तो बहुत आसान थी। अब मैं कितनी ख़ुशनसीब हूँ। मेरे माँ-बाप ने मेरे मुहब्बत के इज़हार को क़बूल कर लिया है। अब मैं माँ-बाप के हाथों को चूमती हूँ। मेरी ज़िन्दगी अब सार्थक हो चुकी है। मुझे ज़िन्दगी का इससे पहले कभी इतना मज़ा नहीं आया था। मैं आप सबसे यही दरख़ास्त करती हूँ कि क़ुरआन मजीद के इस हुक्म पर अमल कीजिए और दोनों जहान की कामयाबी हासिल कीजिए।"

एक भाई के माँ-बाप के साथ अच्छे बोल

इसके बाद एक बहन ने कहा–"जिस बहन ने अभी-अभी अपना वाक़िआ बयान किया है वह बहुत ख़ुशनसीब है। मैंने तो अपने माँ-बाप के सामने इतने अच्छे जुमले अदा नहीं किए। हाँ, मेरा एक भाई है। वह मेरा इन्तिज़ार करता रहता है। मैं जैसे ही दर्से-क़ुरआन सुनकर घर पहुँचती हूँ वह फ़ौरन मेरे पास आता है और मालूम करता है कि आज के दर्स में अमल करने के लिए कौन-सी आयत चुनी गई है। मैं उस आयत के मानी और मतलब बयान करती। आयत के उतरने के वक़्त के हालात बताती। चुनाँचे उस दिन उसने मुझसे अमल के लिए यह आयत ले ली, "बल्कि उनसे (माँ-बाप से) आदर-सम्मान के साथ बात करो" यह आयत उसकी ज़बान में रच-बस गई और उसके अमल का कारण बनी। इस आयत के बाद माँ-बाप के साथ उसका आचरण और बोलचाल बिलकुल बदल गई। वह अपनी बातचीत और किरदार में उनके लिए बहुत ही नर्म और अदबवाला हो गया है। मेरे माँ-बाप उसके लिए हर वक़्त दुआएँ करते रहते हैं। मैं कुछ ही दिन पहले अम्मी को यह कहते हुए सुन चुकी हूँ कि शायद अल्लाह मुझे यह नेक

और फ़रमाँबरदार बेटा जनने की वजह से जन्नत में दाख़िल करेगा। मैं समझ नहीं पा रही कि मैं अब क्या करूँ? मेरा भाई मुझसे बाजी मार ले गया है।"

इस पर एक बहन ने उसकी हिम्मत बँधाते हुए मशवरा दिया कि आप बार-बार कोशिश करें। हम सबको क़ुरआन मजीद पर अमल करने के लिए मेहनत और कोशिश से काम लेना चाहिए। क़ुरआन मजीद के मुताबिक़ अमल करना ही सबसे ज़्यादा बेहतर है।

विरासत

विरासत को हक़दारों में तक़्सीम करना ख़ुदा के क़ानूनों में से एक क़ानून है। इसे अल्लाह ने ख़ुद ही मुक़र्रर किया है। विरासत के बँटवारे के उसूलों और क़ायदों का निर्धारण अल्लाह ने कर दिया है। इसे किसी इनसान की मर्ज़ी और चाहने-न-चाहने पर नहीं छोड़ा गया है। उसने अपनी बड़ी हिक्मत और इनसाफ़ से काम लेते हुए विरासत के बारे में व्यापक आदेश दे दिए हैं। निसाब और हदें तय कर दी हैं। हक़दार भी तय कर दिए हैं।

हमने अपने क़ुरआन मजीद के दर्स में मीरासवाली आयतों के मानी-मतलब को ख़ूब खोल-खोलकर वाज़ेह किया ताकि हम सब इन आयतों के मुताबिक़ चलें और अपने ऊपर उनको लागू करें। दर्स के बाद आपस की सहमति से यह तय पाया कि मीरास की उन तमाम आयतों पर अमल किया जाए, जिनकी शुरुआत इस आयत से होती है—

"तुम्हारी औलाद के बारे में अल्लाह तुम्हें हिदायत करता है, मर्द का हिस्सा दो औरतों के बराबर है।"

(क़ुरआन, सूरा-4 निसा, आयत-11)

ज़ेवर और गहनों का बँटवारा

एक महिला मेरे पास आईं और उन्होंने मुझसे बताया, "मेरी माँ की मौत हो गई। उनके वारिस हम दो बहन-भाई थे। मैंने अपनी अम्मी का सारा सोना ले लिया, जैसा कि हमारे देश में चलन है। ज़मीन बेटे ले लेते हैं, बहनों को नहीं देते ताकि कोई ग़ैर हमारी आबाई (बाप-दादा की) ज़मीन का हिस्सेदार न बन सके। बेटियाँ सोना और गहने ले लेती हैं ताकि कोई ग़ैर औरत उन गहनों को न पहन सके और मरनेवाली की बेटियाँ ही उसे

इस्तेमाल करें। मेरी अम्मी को वफ़ात (मृत्यु) पाए कई साल हो गए हैं। सोना अभी तक मेरे पास ही है। भाई ने उसमें से न कुछ लिया है और न ही मैंने उसे दिया है और न ही मेरे भाई ने मुझसे कभी उसकी माँग की है। अब मैं मीरासवाली आयतों पर अमल करना चाहती हूँ। आप मुझे बताइए कि क्या करूँ? मेरी माँ और मेरी भाभी के बीच तनाव-सा रहता था। इसलिए मैं अपनी भाभी को देखना भी नहीं चाहती। फिर मैं उसे अपनी मरहूमा माँ के ज़ेवर पहने कैसे देख सकती हूँ कि जिसने मेरी माँ को सताया और उससे सम्बन्ध भी तोड़े।''

मैंने कहा, ''मेरी प्यारी बहन! मीरास तो अस्ल में अल्लाह की मिलकियत है, अल्लाह ने हमें इसमें नायब बनाया है। जब भी किसी मुसलमान की वफ़ात (मृत्यु) होती है तो अल्लाह के इरादे और उसके हुक्म के मुताबिक़ ही इन आयतों की रौशनी में उसकी मीरास हक़दारों में बाँट दी जाती है। इसलिए इस उसूल के मुताबिक़ ये सोने के ज़ेवर-गहने आपकी मिलकियत नहीं हैं, न आपका हक़ है। ये गहने अल्लाह की सम्पत्ति है। अल्लाह ने यह बता दिया है कि इसके हक़दार कौन हैं। अतः अल्लाह की मन्शा और मुराद यानी उसकी किताब क़ुरआन मजीद की रहनुमाई के मुताबिक़ ही ये गहने बटेंगे तभी अल्लाह राज़ी होगा। जो आदमी अल्लाह का हक़ अदा नहीं करता, उसे अल्लाह की तरफ़ से सख़्त सज़ा मिलेगी।''

सवाल करनेवाली बहन ने अपने चेहरे को हथेलियों की पकड़ में लेते हुए कहा—''ख़ुदा की पनाह! मेरा मक़सद अल्लाह की हदों को तोड़कर आगे बढ़ जाना नहीं है। मैं तो यह बताना चाहती थी कि हमारे यहाँ रिवाज और चलन क्या-क्या हैं? इन्हीं रिवाजों और रस्मों पर कई पुश्तों से अमल होता चला आ रहा है।''

मैंने कहा, ''इसी लिए तो हमने क़ुरआन की आयतों पर चलने का पक्का इरादा किया है ताकि अल्लाह के हुक्म से हटकर सारे तरीक़ों को छोड़ दें। इस तरह के रस्मो-रिवाज तो सिर्फ़ मन की ख़ाहिशें हैं। लोग इनकी पैरवी करते हैं, जबकि अल्लाह ने इन रस्मों और रिवाजों के हक़ में कोई आयत नहीं उतारी। प्यारी बहन! आप अस्ल मालिक से मदद लीजिए। उसके

हिकमत भरे हुक्मों के आगे झुक जाइए। अल्लाह के बताए हुए उसूलों के मुताबिक़ पूरी मीरास का बँटवारा कर दीजिए। हर हक़दार को अल्लाह के क़ानून के मुताबिक़ उसका हिस्सा दीजिए। आपके भाई के पास आपका कोई हक़ है तो माँग लीजिए, तक़ाज़ा कीजिए। अल्लाह के हुक्म और क़ानून को लागू कीजिए। जब हर हक़दार अपना हक़ ले-ले, तो उसके बाद अगर कोई दिल से चाहे तो अपना हक़ छोड़ सकता है। कोई चीज़ अपने किसी दिल पसन्द आदमी को दे सकता है। इसके लिए पूरी तरह रज़ामन्दी ज़रूरी है। इसमें शर्म, लिहाज़, आम चलन और ख़ाहिशों की पैरवी का दख़ल नहीं होना चाहिए।"

सवाल पूछनेवाली बहन ने कहा कि अगर अल्लाह ने चाहा तो मैं ज़रूर अल्लाह की आयतों के मुताबिक़ चलूँगी।

कुछ दिनों के बाद यही बहन मेरे घर आई। ख़ुशी और प्रसन्नता से उसका चेहरा चमक रहा था। आते ही कहने लगीं, "प्यारी बहन! अल्लाह की आयतों ने मेरे सीने के बोझ को बिलकुल हल्का कर दिया है। जब मैं आपसे मुलाक़ात के बाद घर पहुँची तो मुझे ऐसा महसूस हो रहा था कि मैं चोर हूँ और मैंने, ख़ुदा माफ़ करे, अल्लाह का माल चुराया है। अल्लाह का माल, जिसमें वह अपनी हिक्मत और इरादे से जिस तरह चाहता है ख़र्च करता है। मैंने अल्लाह की मिलकियत में से वह कुछ चुराकर अपने पास रख लिया है, जिसकी मैं शरीअत और क़ानूनी तौर पर हक़दार न थी। मैंने अस्ली मालिक से इजाज़त लिए बग़ैर माल पर क़ब्ज़ा कर लिया है। मुझे रह-रहकर यह ख़याल आता रहा कि यह माल अल्लाह का था, अल्लाह ने मेरी माँ को इसका मालिक बनाया था। माँ की वफ़ात हो गई तो इस माल का मालिक फिर अल्लाह बन गया। चाहिए तो यह था कि इस माल को अल्लाह के बताए हुए हुक्म और क़ानून के मुताबिक़ हक़दारों में बँटवारा कर दिया जाता। माँ की वफ़ात के साथ ही उनकी मिलकियत का हक़ ख़त्म हो गया था। मैंने अल्लाह के माल पर क़ब्ज़ा जमाकर चोरी की। मुझे यह एहसास बहुत ज़्यादा रहने लगा।"

मैंने कहा, "घबराइए नहीं। यह घाटे का एहसास बहुत क़ीमती है। मानो

आप अपने किए पर शर्मिन्दा और पछतावा कर रही हैं और अल्लाह की आयतों पर अमल के लिए तैयार हैं।"

बहन! आपने बिलकुल सही कहा। यह जुर्म का एहसास हक़ीक़त में एक क़ीमती पूँजी है। यह एहसास ही मुझे मजबूर कर रहा था। इसी लिए मैं अपने भाई के पास गई, अपने साथ अम्मी का सारा सोना और गहने लेती गई। मैंने जाकर भाई से कहा, अब समय आ चुका है कि सारे फ़ैसले ख़ुदा के हुक्म के मुताबिक़ हों। हमारे और आप लोगों के बीच सारे के सारे झगड़ों का फ़ैसला अब क़ुरआन मजीद के मार्गदर्शन में होगा। हम सबको इन आयतों पर अमल करने का अच्छा बदला मिलेगा। अब हम सोने और गहनों को बाटेंगे। लेकिन यह बँटवारा हमारी ख़ाहिशों और रस्मो-रिवाज के मुताबिक़ न होगा, बल्कि अल्लाह के इरादे और क़ानून के मुताबिक़ होगा।

मेरे भाई ने शर्म-लिहाज़ और अख़लाक़ का इज़हार करते हुए कहा—"मैं आपके हक़ में अपने सारे हक़ों से बिलकुल अलग होता हूँ।" मैंने जवाब दिया, "भाई जान! अभी नहीं। पहले आप अपना पूरा हिस्सा ले लें। फिर अपनी मर्ज़ी से जो कुछ देंगे, मैं क़बूल कर लूँगी। आप अभी से कुछ तय न करें। दो दिन तक आप अपना हिस्सा अपने पास रखें। दो दिन के बाद आप जो चाहें फ़ैसला करें। मुझे कोई आपत्ति न होगी।"

दो दिनों के बाद भाई साहब मेरे पास आए। उनके पास कुछ गहने थे। उन्होंने ज़्यादातर गहने अपने पास रख लिए थे। भाई साहब बोले, "मेरी तरफ़ से यह आपके लिए उपहार है।" मैं क़सम खाकर कहती हूँ कि इन थोड़े से गहनों को उपहार के रूप में पाकर इतनी ज़्यादा ख़ुशी हुई, जितनी मुझे तमाम गहने लेकर भी न मिली थी। अल्लाह की आयतों ने मुझपर बहुत करम और रहम किया है। मैं क़ुरआन मजीद उतारनेवाले की बहुत ही शुक्रगुज़ार हूँ और दर्से-क़ुरआन का आयोजन करनेवालों की बहुत-बहुत आभारी हूँ।

उस बहन की बातचीत से मैं बहुत ही प्रभावित हुई। औरतों को सोने, चाँदी और गहनों से बहुत ही लगाव होता है, लेकिन इस बहन ने हिम्मत से काम लेकर अपनी सारी ख़ाहिशों और चाहतों को एक तरफ़ रखकर,

रस्मो-रिवाज को छोड़कर, अल्लाह के मज़बूत क़िले में पनाह ली। इस हिम्मत भरे हौसले के साथ आगे क़दम बढ़ाने से उसके ईमान और यक़ीन में बहुत ज़्यादा बढ़ोत्तरी हुई।

एक और तजरिबा

मैं अपनी एक सहेली के घर गई ताकि उसे उसकी बेटी की शादी की मुबारकबाद दे सकूँ। मुलाक़ात के दौरान मेरी मेज़बान सहेली ने कहा—"अल्लाह का शुक्र है, जो आपको यहाँ ले आया है। मेरे और मेरी अम्मी के बीच कुछ मतभेद हैं। हम दोनों चाहती हैं कि आप हमारे इस झगड़े का फ़ैसला करें। आपका फ़ैसला हम दोनों माँ-बेटी सच्चे दिल से क़बूल कर लेंगी।" उसकी अम्मी भी वहीं बैठी थीं। इस एक बेटी के सिवा उनकी कोई औलाद न थी और न ही इस बेटी के सिवा दुनिया में उनका कोई और क़रीबी था। इसी लिए वे अपनी बेटी के पास रह रही थीं। उससे अलग न रह सकती थीं और न उन्होंने कभी अपनी बेटी से अलग रहने का सोचा था। मैंने माँ की तरफ़ देखा तो मुझे उनके चेहरे पर हैरत और परेशानी नज़र आई।

मेज़बान सहेली ने कहा, "बाजी जैसा कि आप जानती हैं कि मैं अपनी माँ की इकलौती औलाद हूँ। मैं और अम्मी मानो एक जान हैं। मेरे एक मामू हैं, जो कभी अपनी बहन से मिलने के लिए नहीं आते, न ही इनकी ख़ैरियत और राज़ी-ख़ुशी पूछते हैं। मेरी माँ की मौत के बाद लाज़िमी तौर पर उन्हें भी मीरास में से हिस्सा मिलेगा। हालाँकि उन्होंने मेरी अम्मी का कोई हक़ भी अदा नहीं किया। मैं अम्मी से कहती रहती हूँ कि वे एक दस्तावेज़ लिख दें, जिसके आधार पर उनकी सारी मीरास की मैं ही वारिस बनूँ। मेरे मामू वारिस न बन सकें और अम्मी के माल और सामान से फ़ायदा न उठा सकें। मेरी अम्मी कहती हैं कि मैं भी यही चाहती हूँ, लेकिन अल्लाह से डरती हूँ। इसलिए हमें आपकी राय और मशवरे की ज़रूरत है।"

मैंने उसकी माँ की तरफ़ आदर के साथ देखा और कहा—"मैं आपकी राय खुद आपसे सुनना चाहती हूँ।" उन्होंने कहा—"मैं अल्लाह से डरती हूँ।

ज़िन्दगी और उम्र उसके हाथ में है। मैं यह वसीयत कैसे लिख दूँ। अगर बदक़िस्मती से अचानक मेरी बेटी मुझसे पहले ख़ुदा को प्यारी हो जाए तो मेरा दामाद और उसके बच्चे मुझे जायदाद से महरूम न कर देंगे? इस तरह मेरी ज़िन्दगी ही में वे मुझे मेरे माल से महरूम कर देंगे और मेरा सारा माल-दौलत उनकी मिलकियत बन जाएगी।''

बेटी ने जवाब दिया—''अम्मी! आप चाहती हैं कि मैं आपकी ज़िन्दगी में मर जाऊँ? और आप मेरे बाद ज़िन्दा रहें?'' माँ ने कहा—''बेटी! ज़िन्दगी के बारे में सिर्फ़ अल्लाह ही जानता है कि किसको कितना ज़िन्दा रहना है, किसको पहले मौत आती है और किसको बाद में।''

बेटी हर तरह से सेहतमन्द थी। माँ बूढ़ी थी, मगर उसका चेहरा ईमान से चमक रहा था। मैंने माँ के बजाए उसकी बेटी से कहा—''मेरी प्यारी बहन, ज़िन्दगी और मौत के फ़ैसले सात आसमानों की ऊँचाइयों पर बहुत पहले हो चुके हैं। कायनात के बनानेवाले ने ये फ़ैसले कर दिए हैं। आपकी माँ जब अल्लाह के डर की बात करती हैं तो उन्हें ऐसा करने का हक़ है। मीरास के बँटवारे का सम्बन्ध अल्लाह के क़ानूनों में से है। किसी भी जवान मर्द या औरत को इसमें दख़ल देने की इजाज़त नहीं है, चाहे वे अपने-आपको कितना ही अक्लमन्द और ज़हीन क्यों न समझते हों। आपकी माँ अगर अपने पालनहार रब के सामने पेश होने के लिए अपने-आपको तैयार कर रही हैं, तो इसमें आपका क्या नुक़सान है और आपको क्या एतिराज़ है? आपकी माँ सही कहती हैं कि उनकी मौत के बाद उनका माल उनका नहीं रहेगा बल्कि अल्लाह का हो जाएगा, अल्लाह का हक़ होगा और वही इसका मालिक होगा। इस माल के बँटवारे का हक़ भी अल्लाह ही को है, वह जैसा चाहे बँटवारा करे।

बाक़ी रहा आपका अपनी माँ से यह माँग करना कि वे सारी जायदाद आपके नाम लिख दें, यह सरासर अल्लाह के हुक्मों का उल्लंघन है। मामू की बेरुख़ी को आपने उन्हें जायदाद से महरूम करने और ख़ुद उसपर क़ब्ज़ा करने का एक बहाना बना रखा है। यह बहाना आपके ज़ेहन की पैदावार है। यहूदियों ने भी ख़ुदा के क़ानून से बचने के लिए इसी तरह के बहाने बना

रखे थे। इसी लिए उन्हें ख़ुदा की तरफ़ से सख़्त अज़ाब दिया गया था। क्या आपने अल्लाह का फ़रमान नहीं सुना–

> "अगर मरनेवाले की वारिस दो से ज़्यादा लड़कियाँ हों तो उन्हें छोड़ी हुई जायदाद का दो तिहाई दिया जाए और अगर एक ही लड़की वारिस हो तो आधा तरका उसका है।"
>
> (क़ुरआन, सूरा-4 निसा, आयत-11)

आप इस आयत को बार-बार पढ़िए और फिर खुद अपने-आप से पूछिए कि अल्लाह ने आयतें अपने रसूल (सल्ल॰) पर क्यों उतारी हैं? फिर यह भी सोचिए कि अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) ने ये आयतें हम तक पहुँचाने के लिए कितनी तकलीफ़ें बरदाश्त की हैं। क्या आप (सल्ल॰) ने ये सारी मेहनतें, मशक़्क़तें और ये सारी दौड़-धूप सिर्फ़ इसलिए की है कि ये आयतें किताब के अन्दर बन्द पड़ी रहें और किताब को ख़ूबसूरत जिल्द और कशीदाकारी किए हुए मोटे से सजे हुए ग़िलाफ़ में लपेटकर रख दिया जाए? मेरी बहन! ख़्वाहिशों की बेड़ियों ने आपकी हरकत रोक रखी है, इसलिए आप आयतों के मुताबिक़ चलने में असमर्थ हैं। आप सोचें और बार-बार सोचें कि अल्लाह ने अपनी आयतें बन्द रखने के लिए उतारी हैं या इसलिए उतारी हैं कि दुनिया को सच्चाई, इनसाफ़, अदालत और नूर से भर दे। आप बार-बार अल्लाह के इस हुक्म को दोहराएँ, बार-बार पढ़ें–

> "और अगर एक ही लड़की वारिस हो तो आधा तरका उसका है।" (क़ुरआन, सूरा-4 निसा, आयत-11)

आधा तो आपका है लेकिन बाक़ी आधे में आपका कोई अधिकार नहीं है। क्योंकि यह आधा अल्लाह की मिलकियत है। यह उसकी हिक्मत और इनसाफ़ से भरपूर क़ानून के मुताबिक़ बाँटा जाएगा। आप अल्लाह पर पूरा भरोसा करें, उसपर यक़ीन करें। आप उस मुहब्बत को याद करें, जो अल्लाह से आपको है। आप अपने ख़याल में लाएँ, उस नमाज़ को, जो आप अल्लाह की बन्दगी करते हुए अदा करती हैं। अपने रोज़ों, सदक़ा-ख़ैरात को याद करें, जिन्हें आप अल्लाह के हुक्म की पैरवी में और उसकी मुहब्बत में रखती और

देती हैं। मीरास के बारे में अल्लाह का हुक्म नमाज़, रोज़े और सदक़ा-ख़ैरात के हुक्म से अलग नहीं है। जिस तरह आप अल्लाह के लिए उसके बाक़ी हुक्मों पर अमल करती हैं उसी तरह आपको मीरास के बँटवारे के बारे में भी उसके हुक्म को मानना चाहिए। मैं समझती हूँ कि आपको ऐसी महान औरत की बेटी होने पर गर्व करना चाहिए जो इस्लामी शरीअत के हुक्मों पर अमल करने के लिए अपनी ख़िदमत-गुज़ार प्यारी इकलौती बेटी की भी परवाह नहीं करती।"

ये बातें हो चुकीं तो मैंने वापसी के लिए इजाज़त माँगी। मैं उन दोनों के लिए दुआ करती रही कि अल्लाह उनमें सहमति पैदा करे और माँ-बेटी दोनों को ख़ुदा के हुक्म पर चलने की आसानी नसीब फ़रमाए।

क़ुरआन मजीद के दर्स के दिन माँ-बेटी दोनों आईं। बेटी ने हँसते हुए बताया कि मैं सोच-विचार के बाद इस नतीजे पर पहुँची हूँ कि मेरे ख़याल शैतानी वसवसों और उकसाहटों के सिवा कुछ न थे। मैं अल्लाह के फ़ैसले पर राज़ी हूँ। मेरे दिल में अपने मामू के ख़िलाफ़ अब कुछ भी नफ़रत नहीं। मेरा दिल अल्लाह के फ़ज़्ल से बिलकुल साफ़ है।

मीरास के बारे में अल्लाह के हुक्म के सामने सिर झुका देने के बाद अभी एक साल भी पूरा नहीं हुआ था कि यह बेटी अल्लाह को प्यारी हो गई। माँ अब तक मौजूद है, ज़िन्दा है और अपनी रोज़ी खा रही है। अल्लाह का शुक्र है कि हमारी इस बहन को अल्लाह के हुक्म पर चलने की तौफ़ीक़ (ख़ुशनसीबी) मिली, इससे पहले कि उसकी क़ब्र पर मिट्टी पड़ती।

ठीक वक़्त पर बँटवारा

एक बहन के शौहर की मौत हो गई। उसकी औलाद में से कुछ शादीशुदा थे, बाक़ी छोटे थे और उस बेवा (विधवा) की देख-रेख में थे। शौहर की मौत के बाद विधवा ने मरनेवाले की सारी जायदाद अपने पास रख ली, बँटवारा न किया और जिस तरह शौहर की ज़िन्दगी में घर का निज़ाम चल रहा था उसी डगर पर चलता रहा। बेवा का कहना था कि उसके छोटे बच्चों की शिक्षा-दीक्षा के लिए माल की ज़रूरत है। उसने जिस तरह

अपने बड़े बच्चों की तालीम और तरबियत की है, उसी तरह वह अपने छोटे बच्चों की शिक्षा-दीक्षा का इन्तिज़ाम करेगी। शादीशुदा बच्चों ने माँ की बात से इत्तिफ़ाक़ किया। यह अलग बात है कि उन्होंने उनकी ख़ुशी की ख़ातिर ऐसा न किया बल्कि शर्म, लिहाज़ और मुरव्वत में आकर किया। मानो कि किसी मजबूरी और दिल में न चाहते हुए भी अपनी माँ की राय मानी। वे दिल से रज़ामन्द न थे। शौहर ने एक बड़ी दुकान तरके (मीरास) में छोड़ी थी, जो बहुत कामयाबी से चल रही थी और उससे अच्छी-ख़ासी आमदनी होती थी, मगर जब बेवा ने सारे इन्तिज़ाम और काम-धाम ख़ुद सम्भाला तो धीरे-धीरे तिजारत मन्दी का शिकार होने लगी। दुकान की आमदनी धीरे-धीरे कम होती चली गई। अगर सूरते-हाल यूँ ही जारी रहती तो पूरा घर प्रभावित होता। अपनी माली हालत बिगड़ती देखकर बेवा बहन ने मस्जिद का रुख़ किया। क़ुरआन का दर्स सुनने लगी ताकि दर्से-क़ुरआन की बरकत से अल्लाह उसे और उसकी औलाद को आनेवाले अन्धकारमय भविष्य से सुरक्षित रखे।

जब हमने क़ुरआन मजीद के एक दर्स में अमल करने के लिए मीरास की आयतें चुनीं तो बेवा बहन ने कहा—"मैं समझती हूँ कि हमारी तिजारत को जिस घाटे का सामना करना पड़ा है उसकी वजह मेरा वह रवैया है, जो मैंने अल्लाह के खुले और वाज़ेह हुक्मों के ख़िलाफ़ अपनाया है। मैंने अपनी मर्ज़ी चलाई। किसी से कोई मशवरा नहीं लिया।"

उस बेवा बहन ने दर्से-क़ुरआन की मजलिस में नदामत और शर्मिन्दगी का इज़हार करने के बाद घर जाकर अपने सभी छोटे-बड़े बच्चों को इकट्ठा किया और अल्लाह की हिदायतों के मुताबिक़ अपनी सारी जायदाद का बँटवारा कर दिया। इसके बाद उसने अपने हिस्से और अपने छोटे-बच्चों के हिस्से की जायदाद में कारोबार शुरू कर दिया। कुछ ही समय के बाद कारोबार फलने-फूलने लगा। यह सब अल्लाह की आयत पर अमल करने का नतीजा था। बाक़ी रहा वह अज्र और सवाब जो आख़िरत में मिलेगा तो उसका कौन हिसाब लगा सकता है?

हमारा फ़र्ज़ है कि रस्मो-रिवाज के बजाए अल्लाह के हुक्मों पर अमल

करें। अल्लाह और उसके रसूल (सल्ल॰) की पैरवी करें। ख़ुदग़र्ज़ी और ख़्वाहिशों के अन्धेरों से निकलकर, क़ुरआन मजीद की रौशनी में आ जाएँ। हमें अपने सारे कामों और आमाल को क़ुरआन और सुन्नत (पैग़म्बर सल्ल॰ के तरीक़े) के सामने पेश करना होगा और अपनी झूठी आदतों को छोड़ देना होगा। इस तरह हम एक ऐसा समाज बना देने में कामयाब हो जाएँगे, जिसमें दुनिया को क़ुरआन मजीद चलता-फिरता नज़र आएगा। जब ऐसा होगा तो हम ही इस ज़मीन के वारिस होंगे। अल्लाह का हमसे यह वादा है। उस वक़्त ज़मीन अपने बनानेवाले के नूर से जगमगा उठेगी। ज़मीन नूर, रहमत और प्यार-मुहब्बत से भर जाएगी।

नफ़सियाती (मनोवैज्ञानिक) बिगाड़ का शिकार नौजवान

मस्जिद के दर्से-क़ुरआन में शामिल होनेवाली बहनों में से कुछ बहनें बढ़-चढ़कर हिस्सा लेती थीं। एक बहन तो बहुत हँसमुख थीं। हर एक से प्यार और ख़ुशमिज़ाजी से मिलतीं और मुस्कुरा-मुस्कुराकर बातें करती थीं। बातें भी इतनी मीठी और दिलचस्प जैसे मुँह से फूल झड़ रहे हों। एक दिन देखा तो मुस्कुराहट ग़ायब, बड़ी दुखी और परेशान। न बातों में मिठास, न मिलने-मिलाने में वह तपाक। अगले दर्स में आई तो कई जिस्मानी बीमारियों की शिकायत करने लगीं। मैं चाहती थी कि अकेले में उनसे मिलूँ कि शायद उनके किसी काम आऊँ और उनकी कोई मदद कर सकूँ। मुझे अकेले में मिलने के लिए ज़्यादा तकलीफ़ न उठानी पड़ी। जल्द ही इसका मौक़ा मिल गया। वह भी मुलाक़ात के लिए मुन्तज़िर और इसके लिए तैयार थीं। मेरे पूछने पर बोलीं—

"ख़ुदा की क़सम, मैं बहुत दुखी हूँ, परेशान हूँ। ऐसा मालूम होता है, जैसे तेज़ आँधी का बवन्डर मुझे उठाकर घुमा रहा है। मुझे नहीं मालूम कि मैं कहाँ हूँ? मेरी ज़िन्दगी बड़े सलीक़े और अच्छे ढंग से चल रही थी। मैं अल्लाह के फ़ज़्ल से अपने बच्चों की तरबियत में व्यस्त थी। क़ुरआन और हदीस की रहनुमाई में बच्चों की तरबियत हो रही थी। मैंने शौहर का चुनाव अपनी मर्ज़ी से किया था। वे एक नेक, बाअमल और इल्मवाले आदमी हैं। वे इल्म, हिक्मत और ख़ुदा के ख़ौफ़ के सिलसिले में मेरे मददगार हैं। मैं जैसे शौहर की चाहत रखती थी, वे वैसे ही निकले, बल्कि उससे भी बेहतर।

मेरे बच्चे मुझसे ज़्यादा दीनदार निकले बच्चे भी और बच्चियाँ भी। मेरा एक बेटा मस्जिद में जाकर जमाअत के साथ नमाज़ पढ़ता था। बेहतरीन अख़लाक़ का मालिक था। शरीफ़, सन्जीदा और कम बातें करनेवाला। मगर

अचानक न जाने उसे क्या हुआ कि उसकी ख़ामोशी ख़त्म हो गई। अब वह बिजली की तरह कड़ककर बोलता है, अपने बहन-भाइयों के साथ चिल्ला-चिल्लाकर सख़्त लहजे में बात करता है। यहाँ तक कि वह अपने बाप के साथ भी बदतमीज़ी कर लेता है। नमाज़ें पढ़ता है मगर फ़र्ज़ की हद तक। सुन्नत और नफ़्ल नमाज़ें छोड़ देता है। पहले वह पूरे घर में सबको प्रिय था। अब सब उससे दूर ही रहना चाहते हैं। उसके साथ बातचीत करने से भी बचते हैं।

अब वह हर वक़्त अपने कमरे में बैठा रहता है। कहीं इधर-उधर नहीं जाता, अगर मैं ज़िद करके उसे कमरे से निकलने पर मजबूर करूँ या बहन-भाइयों के साथ आकर बैठने पर ज़ोर दूँ तो उसका रवैया ऐसा डरावना और तकलीफ़ देनेवाला होता है कि मुझे शर्मिन्दगी होने लगती है। सोचती हूँ, काश! मैंने उसे कमरे की तन्हाई से बाहर निकलने पर मजबूर न किया होता। वह मानसिक मरीज़ बन चुका है। अपने आपको मज़लूम समझता है। अपने आसपास के सारे लोगों को ज़ालिम समझता है। उसका हाल यह है कि मैं जब भी अल्लाह की ख़ुशी के लिए कोई काम करने लगती हूँ तो वह मेरे रास्ते में बाधा बनकर खड़ा हो जाता है। आजकल मेरा ज़ेहन हर वक़्त उसी के बारे में सोचता रहता है। मैं उसके बारे में सोच-सोचकर थक चुकी हूँ। वह मेरे जिगर का टुकड़ा है। मैंने उसकी परवरिश, देख-रेख और पालन-पोषण में अपनी बेहतरीन सलाहियतें लगाई हैं। मैंने उसके लिए कितनी रातें जाग-जागकर गुज़ारी थीं, मगर मेरी सारी मेहनत और दौड़-धूप बेकार गई। मतलब यह कि उसके भाई-बहन नाराज़ हैं। कोई उसके साथ बातचीत करने को भी तैयार नहीं। आप मेरी हालत का ख़ुद अन्दाज़ा कीजिए मैं जो लोगों में मेल-जोल कराती रहती थी, दूसरे लोगों के मामलों को ठीक करने के लिए कोशिश में लगी रहती थी, अपने ही घर के सुधार में असमर्थ हूँ। मेरा प्यारा लाडला मेरी बात नहीं मानता।''

उस बहन की यह दर्द-भरी दास्तान सुनकर मैंने कहा, ''मेरी प्यारी बहन! यह सिर्फ़ अकेला आपका ही मसला नहीं है। बहुत-से दीनदार घराने इसी प्रकार के मसलों और मानसिक परेशानियों से गुज़र रहे हैं। हर शरीअत के

पाबन्द घराने में कोई ऐसा लड़का या लड़की बिगड़कर घरवालों के लिए जान का वबाल बन जाती है। उस नौजवान लड़के या लड़की के विचार, बातें और काम सबसे अलग होते हैं। ज़्यादातर ऐसी हालत उम्र के उस हिस्से में होती है, जिसे किशोरावस्था कहा जाता है। यानी जब लड़कपन और नौजवानी का संगम होता है। उम्र के इस नाज़ुक हिस्से में नौजवान बहुत सारी सलाहियतों से भरा होता है। इस उम्र में उसके वुजूद में ताक़त (शक्ति) विस्फोटक हो जाती है। वह किसी ज्वालामुखी की तरह फट रहा होता है। नौजवान अपने अन्दर आज़ादी और शक्ति का एहसास करता है। नौजवानी की शुरुआत के इस दौर में 'नहीं' का शब्द उसकी विशेषता बन जाता है।

क़ुरआन मजीद ने बहुत से नौजवानों के सच्चे क़िस्से और हालात क़ियामत तक के इनसानों के मार्गदर्शन के लिए सुरक्षित कर दिए हैं। उन नौजवानों की ताक़तें बातिल (असत्य) के इनकार में अपनी चरम-सीमा पर थीं। हज़रत इबराहीम (अलैहि०), हज़रत यूसुफ़ (अलैहि०), कहफ़वाले और खाइयोंवाले सब नौजवान ही थे। उन्होंने बातिल निज़ाम के ख़िलाफ़ आज़ादी का झण्डा बुलन्द किया। उन्होंने 'नहीं' का इस्तेमाल किया लेकिन बातिल (असत्य) के ख़िलाफ़। उन लोगों ने अपनी बातों और अपने कामों से बातिल को नकारा और हक़ को स्वीकार किया। इसके बरख़िलाफ़ हज़रत नूह (अलैहि०) के बेटे ने हक़ से बग़ावत की, मानो हक़ के ख़िलाफ़ 'नहीं' का इस्तेमाल किया और सिर झुकाने से इनकार कर दिया।

बात सिर्फ़ समझने की है। बहुत-से माँ-बाप घबरा जाते हैं। वह उम्र के इस दौर की नज़ाकत को समझने की कोशिश नहीं करते। वे हैरान होते हैं कि बच्चों ने नाफ़रमानी, सरकशी, विरोध और तकलीफ़ पहुँचाने का रवैया क्यों अपना लिया है? वे अपनी औलाद की 'नहीं' से बेचैन हो जाते हैं। माँ-बाप अपनी औलाद को नर्मी या सख़्ती से समझाते हैं। बच्चे बेरुख़ी और अक्खड़पन से पेश आते हैं। ज़्यादातर माँ-बाप की कोशिशें फ़ायदेमन्द होने के बजाए नुक़्सान देनेवाली साबित होती हैं।"

परेशान बहन बोल पड़ी, "अल्लाह की क़सम, हमारे साथ यही कुछ हुआ। आपके बयान से तो ऐसा मालूम होता है कि मानो आप हमारे साथ-

साथ थीं।"

मैंने कहा, "आपके बच्चे का केस इतना बिगड़ चुका है कि अब उसका सुधार करना हमारे बस में नहीं रहा। अब तो इसका एक ही हल है कि अल्लाह की तरफ़ रुजू किया जाए। उसका बताया हुआ हल इस्तेमाल किया जाए। ख़ुदा ने हमारी रहनुमाई कर दी है। हमारा फ़र्ज़ है कि हम उस रहनुमाई का हाथ थामें और अपने सारे मसले हल कर लें।"

"बहन, मैं आपसे वादा करती हूँ कि मैं उस मार्गदर्शक का हाथ कभी न छोड़ूँगी। आप मुझे सिर्फ़ वह आयत बता दीजिए, जिसपर मुझे अमल करना है, जिसके मुताबिक़ मुझे चलना है।"

मैंने कहा, ख़ुदा का फ़रमान है—

"जो कोई अल्लाह से डरते हुए काम करेगा अल्लाह, उसके लिए मुश्किलों से निकलने का कोई रास्ता पैदा कर देगा।"

(क़ुरआन, सूरा-65 तलाक़, आयत-2)

जैसा कि आप देख रही हैं ख़ुदा के रास्ते के सिवा, सब रास्ते बन्द हो चुके हैं। आपके सामने सिर्फ़ अल्लाह का ख़ौफ़ (डर) अपनाने का रास्ता खुला है। माफ़ करना, मेरा मक़सद हरगिज़ यह नहीं है कि आप अल्लाह से डरती नहीं बल्कि मतलब यह है....

उसने मेरी बात काट दी और बोली, "मैं अच्छी तरह समझती हूँ, जो कुछ आप कहना चाहती हैं। मैं हर हालत में ख़ुदा के डर का दामन पकड़े रहूँगी। किसी भी हालत में मैं तक़वा नहीं छोड़ूँगी। तक़वा मेरे अन्दर, मेरे कामों में, मेरी बातों और मेरी सोच में हमेशा रहेगा।"

अपने बेटे के बारे में परेशान बहन ने तक़वा अपनाने का पक्का वादा करने के बाद इजाज़त माँगी। ख़ुदा हाफ़िज़ कहने के लिए अपना हाथ मेरी तरफ़ बढ़ाया। उस वक़्त उसकी ज़बान पर ये शब्द जारी थे—"जो भी अल्लाह से डरते हुए काम करेगा वह उसके लिए मुश्किलों से निकलने का कोई रास्ता पैदा कर देगा।" मेरे रब (पालनहार प्रभु) ने सच कहा है। अल्लाह के वादे के सच्चा होने में कोई शक नहीं। अब मुझे अल्लाह के वादे

की सच्चाई का अपने ऊपर तजरिबा करना है।

मैंने उस परेशान हाल बहन को 'अल्लाह हाफ़िज़' कहा, उसके लिए दुआ की, सच्चे दिल से उसकी कामयाबी और सफलता की दुआ की। अब जब भी मुलाक़ात होती तो वह ज़रूर इस आयत को दोहराती, मुझसे दुआ के लिए दरख़ास्त करती, बल्कि हर मिलनेवाली बहन से यह कहती कि वह उसकी साबित क़दमी के लिए दुआ करे। पहले तो उसकी सोच का केन्द्र उसका लड़का था। अपने बेटे की बातें और काम वह लोगों से बताती और कहती कि उसके बेटे के लिए दुआ करें कि अल्लाह उसे हिदायत दे। लेकिन अब उसकी सोच का केन्द्र यह होता है कि वह कैसे तक़्वा अपनाए। आख़िरकार वह तक़्वा अपनाकर अपने बेटे को सही रास्ते पर लाने में कामयाब हो गई। उसकी दास्तान उसी बहन से सुनिए। मस्जिद में दर्से-क़ुरआन की मजलिस में उसने आपबीती सुनाते हुए कहा—

"मेरी प्यारी बहनो! मैंने अपने अन्दर बदलाव लाने की हर मुमकिन कोशिश की। अपने सारे कामों और मामलों को तक़्वा के साँचे में ढालने के लिए बहुत कुछ किया। मैं अपने बेटे को शैतान के जाल से बचाना चाहती थी। इसलिए फ़ैसला किया कि फ़ज्र की नमाज़ से पहले तहज्जुद (रात की ख़ास नमाज़) क्यों न पढ़ लिया करूँ। शुरू में फ़ज्र से पहले दो रकअत तहज्जुद की नमाज़ पढ़ लेती। फिर धीरे-धीरे आठ रकअत तक पढ़ने लगी। तहज्जुद की नमाज़ अदा करने से ऐसा सुकून मिला, जैसे मुझे दुनिया की जन्नत और उसके ख़ज़ाने मिल गए हों। मैंने फ़ज्र की नमाज़ में लम्बी क़िरअत करने का निश्चय किया तो इसके लिए क़ुरआन मजीद की कुछ और अधिक सूरतें याद करनी पड़ीं। याद करने से मुझे बहुत ज़्यादा सुकून और चैन मिला। इसका अन्दाज़ा सिर्फ़ उसी को हो सकता है जो क़ुरआन मजीद की आयतें ज़बानी याद (हिफ़्ज़) करता हो। इसके साथ ही यह जज़्बा पैदा हुआ कि लोगों के साथ मेरे सभी मामले साफ़ हों। ख़ासतौर पर अपनी औलाद के साथ मेरा रवैया ठीक और सुकून से भरा हुआ हो।

मेरी यह भी कोशिश रही कि अपने पालनहार ख़ुदा को ख़ुश करने के लिए अपने शौहर को ख़ुश करूँ। मैं शौहर की ख़िदमत और फ़रमाँबरदारी

करते वक़्त यह एहसास करती कि मेरा मक़सद ख़ुदा की ख़ुशनूदी हासिल करना है। मुझे बहुत इत्मीनान हासिल होता। यक़ीन था कि मेरा रब मुझे इसका अच्छा बदला देगा। मैं जो काम भी करती, नेक नियत से करती। इसके साथ-साथ मैं लगातार अपने बेटे के बदल जाने की दुआ करती रहती थी।

इस ख़ुलूस से इबादत, मामले और दुआएँ करने के नतीजे में मेरी रूहानी ताक़त बहुत बुलन्द हो गई। कभी तो मुझे ऐसा महसूस होता जैसे मैं विशाल वातावरण में उड़ रही हूँ, बुलन्दियों में उड़ रही हूँ। मैंने पड़ोसनों और सहेलियों के साथ अपने सम्बन्धों पर भी फिर से नज़र डाली। इसी तरह मैंने अपने रिश्तेदारों के साथ भी सम्बन्ध सुधारे क्योंकि मुझे यह हदीस याद आ गई—

> "मैंने रहम पैदा किया और अपने नाम पर उसका नाम रखा। जिसने रिश्तेदारों के साथ अच्छा बरताव किया मैं उसे मिलूँगा और जिसने रिश्तेदारों से रिश्ता तोड़ा मैं भी उससे सम्बन्ध तोड़ लूँगा।"
>
> (हदीस क़ुदसी)

मुझे यह हदीस याद आई तो मैंने तुरन्त कपड़े बदले, अपने एक चचा के घर चल पड़ी। उनके फ़्लैट में पहुँचने के लिए मैंने मामूल के ख़िलाफ़ लिफ़्ट इस्तेमाल न की, बल्कि सीढ़ियों के ज़रिए ऊपर चढ़ने लगी। हर सीढ़ी पर पाँव रखते हुए यह दुआ करती थी कि ऐ अल्लाह! मैं तेरे हुक्म की पैरवी में क़रीबी रिश्तेदारों से ताल्लुक़ात जोड़ रही हूँ, तू भी मुझे अपने साथ जोड़। मैं सीढ़ियों से वापस उतरूँ तो सम्बन्ध अच्छी तरह जुड़े हुए हों। दुआएँ करते-करते मैं अपने चचा के घर के दरवाज़े पर जा पहुँची। जब दरवाज़ा खुला तो मुझे ऐसा लगा जैसे अल्लाह ने मेरे लिए रहमत का दरवाज़ा खोल दिया है। मैं हँसती-मुस्कुराती और सलाम करती उनके पास पहुँची। वापस आई तो घर आते हुए मुझे पूरा सुकून-चैन हासिल था। ऐसा मालूम होता था जैसे सीने से बहुत बड़ा बोझ उतर गया है।

जब भी मैं अल्लाह को ख़ुश करने के लिए कोई नेक काम करती हूँ तो अपने रब की निकटता महसूस करती हूँ और मुझे इतना सुकून मिलता है, जैसे मैंने एक हज़ार रकअत नफ़्ल नमाज़ें पढ़ी हों।

मुझे इस तजरिबे ने इस क़ाबिल कर दिया है कि मैं पारम्परिक और

विरासती ईमान और सच्चे यक़ीन व ईमान के बीच फ़र्क़ महसूस करती हूँ। मुझे इस आयत—"जो कोई अल्लाह से डरते हुए काम करेगा ख़ुदा उसके लिए कठिनाइयों से निकलने का रास्ता पैदा कर देगा" पर अमल करने का पूरा-पूरा मौक़ा मिला है बहुत जल्द ही मेरी हालत बदल गई, मेरा दुःख ख़त्म हो गया। जो ग़म था ख़ुशी में बदल गया।

मैंने अपने बेटे के साथ अमल के तरीक़े में सब्र और बरदाश्त से काम लिया। मैंने अपने बेटे के लिए बहुत दुआएँ कीं। मैं अल्लाह के सामने सजदे में उसके लिए बहुत दुआएँ करती थी। जब भी नमाज़ पढ़ती, तिलावत करती, ज़िक्र करती तो अपने बेटे के लिए दुआएँ करती रही। इसमें कई साल बीत गए। यहाँ तक कि अल्लाह ने मेरा बेटा मुझे वापस कर दिया। उसने अपनी तन्हाई ख़त्म कर दी। सबसे कटकर एक कोने में बैठा रहना ख़त्म कर दिया। बदतमीज़ी छोड़ दी। उसने अपने माँ-बाप और बहन-भाइयों के साथ जब अपना बेअदबी भरा रवैया छोड़ दिया तो घरवालों ने भी उसे नए सिरे से क़बूल कर लिया।"

जब यह बहन अपने बेअदब बेटे की बेराहरवी छोड़ देने और दोबारा मुहब्बत और फ़रमाँबरदारी का रवैया अपना लेने की ईमानभरी दास्तान सुना रही थी तो उसकी आँखों से आँसू बह रहे थे। दर्से-क़ुरआन की मजलिस में शामिल सभी बहनों की आँखें भी आँसुओं से भरी हुई थीं। सभी बहनों ने इसे मुबारकबाद दी।

देखिए एक आयत पर सब्र और लगन से अमल करने का नतीजा कितना अच्छा निकला। अगर हम अपनी मुश्किलों और परेशानियों का हल क़ुरआन मजीद के ज़रिए करें तो हमारी सारी कठिनाइयाँ, हमारे तमाम मसले हल हो जाएँ। क़ुरआन मजीद के बरकतवाला होने का यही मतलब है कि उसकी आयतों के हुक्म और मनाही पर, आयतों की हिक्मत और इल्म पर अमल किया जाए, उसके बयान किए हुए क़िस्सों से सबक़ हासिल किया जाए तो इससे व्यक्तिगत और सामूहिक दोनों सतह पर बरकतें और ख़ुशनसीबियाँ हासिल होती हैं। मुस्लिम समाज अपनी मंज़िल, जन्नत की तरफ़ आगे बढ़ता रहता है।

मज़ारों पर दुआएँ

मुझे एक गाँव की तरफ़ से दावत मिली कि मैं वहाँ की औरतों को सम्बोधित (ख़िताब) करूँ और उन्हें इस्लाम की हक़ीक़तों से आगाह करूँ। यह गाँव अब शहरी क्षेत्र में शामिल हो चुका है। बल्कि इसे राजधानी का हिस्सा कहा जाए तो भी कोई हरज नहीं। शहर का हिस्सा बन जाने के बावजूद यह गाँव है क्योंकि इसके बाशिन्दों के अक़ीदे और विचार मेरे देश के दक्षिणी क्षेत्र के बहुत-से देहात से मिलते-जुलते हैं। मानो यह गाँव अपनी बनावट के लिहाज़ से तो शहर का हिस्सा है लेकिन अक़ीदों और विचारों के लिहाज़ से देश के किसी पिछड़े हुए गाँव की तरह है। मुझे यह दावत मिली तो ख़ुशी हुई। अल्लाह मुझे उस गाँव की औरतों से परिचित होने का एक अच्छा मौक़ा दे रहा था। मैं समझती हूँ कि औरत घर का आईना होती है। आप किसी औरत के ज़रिए उसके घरवालों की हक़ीक़त को बहुत क़रीब से जान सकते हैं। इसी तरह किसी गाँव की बहुत-सी औरतों को देखकर, उस गाँव के बाशिन्दों के बारे में एक राय क़ायम की जा सकती है।

मुझे इज्तिमा की जगह को तलाश करने में किसी परेशानी का सामना न करना पड़ा। यह मस्जिद के क़रीब एक मशहूर घर था। गाँव की औरतें जमा थीं। मैंने सलाम और दुआ के बाद मजलिस में मौजूद औरतों पर निगाह डाली तो वहाँ एक बड़ी तादाद को मौजूद पाया। वे सब ग़ैर-मामूली तौर पर ख़ुश थीं। उन औरतों के क़रीब ही तरह-तरह के बर्तन पड़े थे। खाने-पीने के बर्तनों का ढेर देखकर मैं बहुत हैरान हुई। मैंने बर्तनों के बारे में पूछा तो मुझे बताया गया कि फ़ुलाँ बुज़ुर्ग का आज जन्म-दिन है। वे आपके दाएँ तरफ़ दफ़न हैं। मैंने तेज़ी से दाएँ तरफ़ देखा तो एक मज़ार नज़र आया। मैंने उन बहनों से नर्मी से पूछा, "इस दिन आप लोग क्या

करते हैं?" औरतें बोलीं—"हम तो जी, इस दिन का पूरे साल बेताबी से इन्तिज़ार करते हैं। जानवर क़ुरबान करते हैं। इस दिन के लिए कुछ ख़ास क़िस्म के खाने तैयार किए जाते हैं। हम इस मज़ार में दफ़न बुज़ुर्ग से दरख़ास्त करते हैं कि वे हमारे लिए दुआ करें।"

यह सुनकर मुझे बहुत दुख हुआ। क्या यह खुला हुआ शिर्क नहीं है? मैंने जब उनको हक़ीक़त से आगाह किया तो एक औरत बोली—"हम इन बुज़ुर्ग की इबादत (उपासना) नहीं करते, हम तो अल्लाह से दरख़ास्त करते हैं कि वह हमें इस नेक बुज़ुर्ग की क़ुर्बत अता करे, इसलिए कि ये एक मुबारक और बरकतवाले बुज़ुर्ग हैं और इनके मज़ार पर माँगी जानेवाली हर दुआ क़बूल होती है।"

यह औरत बड़े ही फ़ख़्र से इस तरह वज़ाहत कर रही थी, जैसे मेरी जिहालत (अज्ञानता) को दूर कर रही हो। मैंने बहस, तकरार, तर्क-वितर्क और मुनाज़िरे से बचते हुए ख़ामोशी अपना ली और क़ुरआन का दर्स शुरू कर दिया। मुझे यहाँ दर्स देने के लिए ही दावत दी गई थी। दर्स के शुरू में ही इस आयत ने मुझे अपनी तरफ़ खींचा, इसलिए मैंने इसकी तशरीह और तफ़्सीर करना ही बेहतर समझा और यह भी बताना चाहा कि इस आयत पर अमल किस तरह करना होगा? आयत यह थी—

> "लिहाज़ा तुम अल्लाह ही की बन्दगी करो, दीन को उसके लिए ख़ालिस करते हुए।" (क़ुरआन, सूरा-39 ज़ुमर, आयत-2)

मैंने मुनासिब समझा कि गाँव के माहौल से यह मिसाल पेश करूँ। किसी खेती करनेवाले किसान ख़ानदान को एक बैल ख़रीदने की ज़रूरत थी। घर की मालिकिन ने हिम्मत की और थोड़ी-थोड़ी रक़म बचाकर रखती रही, यहाँ तक कि उसके पास इतनी रक़म जमा हो गई, जिससे एक बैल ख़रीदा जा सके। हिम्मतवाली उस किसान औरत ने वह रक़म अपने शौहर को दी। शौहर एक बड़े ज़मीनदार के पास गया और उसके यहाँ से मनपसन्द बैल ख़रीद लाया। बैल घर में आया तो घरवालों की ख़ुशी का कोई ठिकाना न था। बीवी ने बैल देखा तो बहुत ख़ुश हुई। बच्चे ख़ुशी से फूले न समा रहे

थे। घर का हर आदमी बहुत ज़्यादा ख़ुश था। उन्होंने बैल की ख़िदमत शुरू कर दी। घास डाली, चारा डाला, पानी पिलाया। फिर वे ख़ुशी-ख़ुशी उसे रहट पर ले गए, ताकि बैल के ज़रिए से कुएँ से पानी निकाले और खेतों की सिंचाई हो।

रहट में बैल के जोतने का ख़ुशनुमा मंज़र देखने के लिए पड़ोसी भी आए थे। अब किसान ने आगे बढ़कर बैल को रहट से पानी निकालने के लिए जोतना चाहा तो बैल ने किसान को सींगों से मारने की कोशिश की। होशियार किसान बैल की टक्कर से बच गया। अब जो कोई भी बैल के क़रीब जाता, बैल उसे सींगों से धकेलने के लिए तैयार रहता। बैल बहुत गुस्से में था। आख़िरकार दिलेर पड़ोसी किसान हिम्मत करके आगे बढ़ा और बैल को पकड़कर अपने डेरे की तरफ़ ले जाने लगा। बैल उसके साथ जा रहा था और कुछ भी आना-कानी नहीं कर रहा था। पड़ोसी किसान ने उसे अपने रहट में जोत दिया तो वह बैल बड़े मज़े से घूमने लगा। पहले दिन तो यही हुआ। दूसरे दिन फिर ऐसा ही हुआ। बैल खाता-पीता तो अपने मालिक के पास था, मगर उसे सुकून पड़ोसी के खेत और उसके रहट से पानी निकालने में मिलता था। मैं आप बहनों से यह पूछना चाहती हूँ कि ऐसे बैल के बारे में जो खाता-पीता अपने मालिक के पास हो मगर उसे सुकून दूसरे के पास काम करने से मिलता हो, तो मालिक का रद्दे-अमल (प्रतिक्रिया) क्या होगा? अपने मालिक की ज़मीन से घास खाता हो मगर वह ख़िदमत अपने मालिक के बजाए किसी और की करता हो। आप ख़ुद बताइए कि ऐसे बैल का मालिक उसके साथ क्या बरताव करे?''

एक बहन ने जवाब दिया, ''बहुत अजीब बात है। ऐसा बैल तो इस लायक़ है कि उसे बेच दिया जाए या ज़िब्ह कर दिया जाए।''

मैंने मुस्कुराते हुए गाँव की औरतों से कहा, अल्लाह कितना मेहरबान है। कितना करमवाला है कि वह न हमें ज़िब्ह करता है, न बेचता है बल्कि अपनी पैरवी और फ़रमाँबरदारी की दावत देता है। हम रिज़्क़ अल्लाह का खाते हैं, लेकिन अपने जानवरों को दूसरों के नाम पर ज़िब्ह करते हैं। हम ऐसे समारोह और जश्न मनाते हैं, जिनकी अल्लाह ने कोई दलील नहीं उतारी।

बल्कि हममें से कुछ ऐसे लोग भी हैं, जो यह अक़ीदा रखते हैं कि अल्लाह के सिवा दूसरे भी नफ़ा-नुक़्सान पहुँचानेवाले हैं। यह अक़ीदा रखकर हम उन्हीं को अपनी मुहताजी दूर करने के लिए पुकारते हैं।

एक बहन ने खड़े होकर कहा, "मगर हम तो अपने इन बुज़ुर्ग की इबादत नहीं करते।" मैंने बुज़ुर्ग के मज़ार की तरफ़ इशारा करते हुए कहा, "ये बुज़ुर्ग जो यहाँ अपनी क़ब्र में आराम कर रहे हैं, ये तो आप की दुआओं के मुहताज हैं। आपको चाहिए कि अल्लाह को, जो जीवन्त और हमेशा से है, पुकारें। उससे दुआ करें कि वह इन बुज़ुर्ग पर भी रहम फ़रमाए और आप सब पर भी रहम करे। बात यह है कि मय्यत बेबस होती है। अगर ज़िन्दा इनसान के पास कुछ भी इख़्तियार हो तो वह कभी न मरे, न मिट्टी के नीचे दफ़न हो।"

यह सुनकर एक औरत बेचैन होकर उठी, वह बहुत गुस्से में थी, कहने लगी, "प्यारी बाजी, हम अल्लाह के लिए आपसे मुहब्बत करती हैं। आप हमें बहुत पसन्द हैं, मगर अन्देशा यह है कि कहीं हमारे ये बुज़ुर्ग आपको मार न डालें।"

मैंने सारी औरतों की तरफ़ देखा और कहा, "आपकी यह बहन समझती है कि एक वफ़ात (मृत्यु) पाए हुए आदमी के पास इतनी ताक़त है कि वह ज़िन्दा को मार डाले। इस बातचीत के बाद मैंने दर्सवाली आयत की तशरीह (व्याख्या) और तफ़्सीर करना शुरू कर दी। फिर मैंने हाज़िर बहनों को बताया कि इस आयत पर नबी (सल्ल॰) के नमूने की रौशनी में किस तरह अमल किया जा सकता है। हमारे लिए नमूना सिर्फ़ अल्लाह के रसूल (सल्ल॰) हैं, न कि हमारे बाप-दादा।

अब मैंने तमाम बहनों से दरख़ास्त की कि वे अपनी-अपनी ज़िन्दगी की वह बड़ी से बड़ी घटना याद करें जब वे किसी तकलीफ़ या बीमारी में ग्रस्त हो गई हों और फिर वे मुझे सोचकर बताएँ कि उन्होंने सबसे पहले किसको पुकारा, किसे याद किया। अल्लाह का फ़रमान है—

"और मुसाफ़िर समझ लेते हैं कि तूफ़ान में घिर गए, उस वक़्त

सब अपने दिल को अल्लाह ही के लिए ख़ालिस करके उससे दुआएँ माँगते हैं।'' (क़ुरआन, सूरा-10 यूनुस, आयत-22)

कई औरतें एक साथ बोलीं, ''हम सबसे पहले अल्लाह को पुकारती हैं। फिर हम खाने-पीने की कुछ चीज़ें लेकर बुज़ुर्ग के मज़ार पर हाज़िर होती हैं और ये चीज़ें यहाँ लोगों में बाँट देती हैं। हम मज़ार के पास आकर दुआएँ करती हैं।''

मैंने जवाब दिया, ''मैं इसी बात को साफ़-साफ़ वाज़ेह करना चाहती हूँ। खुलूस और इख़लास की माँग तो यह है कि आप हमेशा अल्लाह ही से माँगें। अल्लाह के सिवा किसी और से न माँगें। दुआ करते हुए आपके दिलो-दिमाग़ में अल्लाह के सिवा और कोई न हो। अल्लाह ही से माँगें, जो एक अकेला है और जिसका कोई साझीदार नहीं। वह हर चीज़ पर क़ुदरत रखनेवाला और हमेशा रहनेवाला है। वह अपनी मदद के लिए किसी का मुहताज नहीं बल्कि हर एक की मदद करनेवाला वही है। जो बहन भी इस आयत 'तुम अल्लाह ही की बन्दगी करो दीन को उसी के लिए ख़ालिस करते हुए।' (क़ुरआन, सूरा-39 ज़ुमर, आयत-2) पर अमल करने का पूरा इरादा करना चाहे, तो इस तरह महसूस करे, जैसे अल्लाह के सिवा उसका कोई ठिकाना नहीं।

गाँव के दर्से-क़ुरआन से फ़ुरसत पाकर मैं घर आई। अपने मामूल के दर्से-क़ुरआन के लिए जब मैं मस्जिद पहुँची तो यह देखकर मेरी हैरत की इन्तिहा न रही कि उस गाँव की औरतों की एक बड़ी तादाद वहाँ मौजूद थी। मुझे हैरत के साथ-साथ ख़ुशी भी हुई। मैंने उनका मुहब्बत के साथ स्वागत किया। अब वह हमारी मजलिस में हमेशा शरीक रहनेवालों में से थीं। अमल के लिए जो आयत मिलती हमारे साथ वे भी उसमें शामिल होतीं और ईमान बढ़ानेवाले अपने तजरिबों से हमें आगाह करतीं। ये बहनें अपने गाँव की दूसरी औरतों से भी राबिते में रहतीं। उनकी तालीम का इन्तिज़ाम करतीं। उन्होंने अपनी सख़्त मेहनत से औरतों की आँखों पर पड़ी ग़फ़लत की पट्टी उतार दी और उनके दिमाग़ों पर चढ़े हुए परदे उतार दिए। मैंने गाँव में जाकर जिस पवित्र आयत की तफ़्सीर (व्याख्या) बयान की थी और उसके

मुताबिक़ चलने की तरग़ीब (प्रेरणा) दी थी, धीरे-धीरे गाँव की सारी बहनों पर उसका असर हुआ।

उस गाँव में अब भी थोड़ी-सी बहनें ऐसी हैं जो ग़फ़लत में हैं। बुज़ुर्ग के मज़ार पर बुज़ुर्ग की ख़ुशनूदी के लिए दी जानेवाली जानवरों की क़ुरबानियाँ अब ख़त्म हो चुकी हैं। मैं अपनी उन बहनों को ग़फ़लत में पड़ी हुई समझती हूँ। उन्हें शिर्क करनेवाली नहीं कहती। क़ब्रों पर कभी-कभार सबक़ हासिल करने के लिए जाना बुरा नहीं। वहाँ रुककर क़ब्रवालों के लिए दुआ करना भी मना नहीं। हाँ, औरतों का बाक़ायदा बड़े एहतिमाम के साथ और बन-सँवरकर क़ब्रों पर जाना इस्लाम की नज़र में अच्छा नहीं। इसी तरह क़ब्रों में दफ़न अल्लाह के नेक बन्दों और बुज़ुर्गों को हाजत पूरी करनेवाला, मुश्किलें दूर करनेवाला और फ़रियाद सुननेवाला समझना और हर तरह की क़ुदरत का मालिक समझना भी इस्लामी तालीम को न जानने का नतीजा है।

क़ुरआन के दर्स में शामिल एक बहन ने तमाम बहनों से ख़िताब (सम्बोधित) करते हुए कहा–

"मैंने जबसे दर्से-क़ुरआन देनेवाली हमारी बहन सुमैया रमज़ान साहिबा से इस आयत की तशरीह (व्याख्या) सुनी है, यानी 'तुम अल्लाह ही की बन्दगी करो, दीन को उसी के लिए ख़ालिस करते हुए', मेरे ग़फ़लत के परदे उतर गए हैं। मैंने इस आयत को अपनी पहचान बना लिया है। मैं हर काम से पहले इस आयत को पढ़ती हूँ।"

सदक़ा मुसीबत को टाल देता है

मैं एक दिन एक बीमार बहन की बीमारपुर्सी के लिए गई। उसे इतना सख़्त दर्द होता था कि टलने का नाम ही न लेता था। मैंने उसे तसल्ली दी और उसे अल्लाह की तरफ़ लौ लगाने की दावत दी। मैंने उससे दरख़ास्त की कि वह मुसीबत को हटाने के लिए सदक़ा (दान) दे। बीमार बहन ने कहा, "मैंने बहुत सदक़े दिए हैं और किसी को भी नहीं छोड़ा। मैंने अल्लाह के लिए सदक़ा दिया। अपने गाँव के इमाम साहब को सदक़ा दिया। बल्कि मैंने अपने देश के सारे मशहूर औलिया के लिए सदक़े भेजे हैं, लेकिन कोई

फ़ायदा नहीं हुआ।" उसकी बातों से मुझे मुसीबत की जड़ मिल गई। मैं समझ गई कि ख़राबी कहाँ है? यह औरत ग़फ़लत का शिकार है। मैंने उसे उस ग़फ़लत से निकालने का पक्का इरादा कर लिया।

मैंने कहा, "सदक़े तो सिर्फ़ अल्लाह ही के लिए होते हैं और जो सदक़े अल्लाह के सिवा किसी दूसरे के लिए होते हैं, अल्लाह उन्हें क़बूल नहीं करता। आप ख़ालिस अल्लाह को पुकारें, उसके साथ किसी को ज़र्रा बराबर भी शामिल न करें। सिर्फ़ अकेला वही आपको शिफ़ा (रोग-मुक्ति) देने की पूरी क़ुदरत रखता है।

मैं अल्लाह के नाम पर आपसे दरख़ास्त करती हूँ कि आप अल्लाह के इस फ़रमान के मुताबिक़ चलें, "तुम अल्लाह ही की बन्दगी करो, दीन को उसके लिए ख़ालिस करते हुए।" यानी सिर्फ़ अल्लाह ही से माँगें, किसी और से माँगने से पूरी तरह बचें। इसके साथ-साथ दवा और इलाज भी जारी रखें। सारे उपाय अपनाएँ। अल्लाह के सामने तौबा करें। अपनी नादानी और ग़फ़लत पर अल्लाह से माफ़ी माँगें। हर वक़्त उसी से माँगें, दुआएँ माँगते वक़्त रोएँ और गिड़गिड़ाएँ। कोई आपको अल्लाह से न फेरने पाए।"

उस बीमार बहन ने वादा किया कि वह मेरी बातों पर अमल करेगी। मैं जब भी उससे मिलने जाती, हर मुलाक़ात पर उसे याद दिलाती कि हमारे बीच क्या तय पा चुका है। वह भी क़बूल करती कि वह पूरी तरह अपने वादे पर क़ायम है। मैं रात की तन्हाइयों में उसके लिए बहुत ज़्यादा दुआएँ करती कि अल्लाह उसकी ग़फ़लत से भी उसे निकाले और हर तरह के दर्दों से भी नजात व छुटकारा दे। यह बहन धीरे-धीरे अच्छी होने लगी। अल्लाह से उसका सम्बन्ध मज़बूत से मज़बूत होता गया। उसे तजरिबे से मालूम हो गया कि अल्लाह कितना क़रीब है, कितना फ़रियाद सुननेवाला है, कितना दुआओं को क़बूल करनेवाला है। जितना उसका यक़ीन बढ़ता गया उतनी ही उसको जल्द शिफ़ा मिली। वह अपने बीते हुए वक़्तों पर शर्मिन्दा है और उसकी भरपाई के लिए बराबर अल्लाह से अपनी ग़लतियों की माफ़ी माँगती रहती है।

ज़रूरतें अल्लाह पूरी करता है

एक महिला हमारे क़ुरआन की मजलिस में आती हैं उन्होंने एक क़ाबिले-रश्क काम अन्जाम दिया। उनकी ख़ुशनसीबी का क्या कहना! अल्लाह ने हमारी इस बहन के ज़रिए कई औरतों को इस्लाम की सही शिक्षाओं से परिचित करा दिया है और अब वे सब क़ुरआन मजीद की रौशनी में ज़िन्दगी का सफ़र तय कर रही हैं।

इस ख़ुशनसीब बहन की मुलाक़ात इत्तिफ़ाक़ से रास्ता चलते औरतों के एक ग्रुप से हुई। ये औरतें देश के एक बड़े शहर जाना चाहती थीं। उन्हें मालूम हुआ था कि वहाँ एक औरत रहती है, जिसका दावा है कि वह हर काम कर सकती है। बिगड़ी तक़दीर बना सकती है, बीमारों को सेहत, मरीज़ों को शिफ़ा, बेऔलादों को औलादवाली और बाँझ को हामिला बना सकती है। देश के दूर-दूर के इलाक़ों से औरतें उसके यहाँ हाज़िर होती हैं, बल्कि कुछ अरब देशों से भी औरतें उसकी शोहरत सुनकर वहाँ पहुँचती हैं। औरतें सैकड़ों की तादाद में सारी रात उसके घर के सामने ज़मीन पर बैठी रहती हैं, ताकि सुबह उससे जल्द मिल सकें। ये औरतें उसी गाँव की रहनेवाली थीं, जिस गाँव में मैं दर्से-क़ुरआन के लिए गई थी। इस महिला ने अपने गाँव की उन औरतों से कहा, जो अपने घरों से निकलकर सफ़र करने पर तैयार थीं कि क्या आप लोग उस वादे और इक़रार को भूल गई हैं या जान-बूझकर भुला दिया है, जो हमने अपने गाँव में उस दिन किया था, जब शहर से मुहतरमा सुमैया रमज़ान क़ुरआन का दर्स देने के लिए आई थीं। हम सबने, "तुम अल्लाह ही की बन्दगी करो, दीन को उसी के लिए ख़ालिस करते हुए।" इस आयत के मुताबिक़ चलने का इक़रार किया था।

एक औरत ने कहा, "हम जो कुछ करने जा रही हैं वह इस पवित्र आयत के ख़िलाफ़ तो नहीं। हम जिस नेक औरत के पास जा रही हैं, वह तो सिर्फ़ एक ज़रिआ है, करनेवाला तो अल्लाह ही है। सच्चा कर्ता-धर्ता तो वही है।"

मैंने कहा, क्या वह औरत ग़ैब की दावेदार नहीं है? क्या उसका यह दावा नहीं है कि वह बीमार को शिफ़ा (रोग-मुक्ति) देने की क़ुदरत रखती है। नौजवान लड़कियों की शादी करा सकती है। बाँझ को गर्भवती बना सकती है? अल्लाह के लिए बन्दगी को ख़ालिस करते हुए, क्या अल्लाह के सिवा किसी और की तरफ़ रुजू (पलटना) करना ठीक हो सकता है? इधर हमें सिर्फ़ एक अल्लाह की क़ुदरत पर पूरा भरोसा है और उधर हम इनसानों के पास मुरादें पाने के लिए चल पड़ते हैं। वह औरत लम्बे-चौड़े दावे करती है मगर उसके पास इतना इल्म नहीं कि वह किसी काम के लायक़ होती। वह डॉक्टर या हकीम तो है नहीं कि उसके हाथ में अल्लाह ने शिफ़ा दी हो। बाक़ी रहा कुँवारियों की शादी कराना तो यह सिर्फ़ एक अल्लाह ही का काम है। फिर आप एक लम्बा सफ़र तय करने के बाद वहाँ जाएँगी। सफ़र की तकलीफ़ें बरदाश्त करेंगी। आप लोगों का ख़याल बल्कि अक़ीदा है कि वह औरत आपको लाभ पहुँचाने पर क़ुदरत रखती है। आप वहाँ जाकर उससे अपनी ज़रूरतें पूरी करने को कहेंगी। फिर उसे माल भी देंगी। यह सब इस बात का सुबूत है कि आप सबको उस औरत की ग़ैर-मामूली क़ुदरत और ताक़त पर यक़ीन है। हालाँकि अल्लाह के सिवा किसी और के बारे में इस तरह का अक़ीदा रखना तौहीद के बिलकुल ख़िलाफ़ है। हमें चाहिए कि हम सिर्फ़ अल्लाह ही का दरवाज़ा खटखटाएँ। साथ-साथ साधन और उपाय भी काम में लाएँ। ऐसा करने से हमें कुछ नुक़सान न होगा। बल्कि हमें सफ़र किए बिना और माल ख़र्च किए बिना पूरा-पूरा फ़ायदा होगा। अल्लाह ही से उम्मीद रखना, उसी के सामने हाथ फैलाकर दुआ करते रहना ही हमारा काम है।

जिस औरत की शादी को हुए कई साल हो चुके थे और वह अब तक औलाद की नेमत से महरूम थी, मैंने उसकी तरफ़ देखा और कहा, मैं एक डॉक्टर को जानती हूँ। वह बहुत ज़्यादा तजरिबेकार है और आपको जो मर्ज़ है, उसकी वह माहिर है। मैं आपको उसके पास ले जाऊँगी। लेकिन इसके लिए आपको अपने दीनी फ़र्ज़ों की अदाएगी का ख़ास एहतिमाम करना होगा। नफ़्ली इबादतें ज़्यादा करनी होंगी। सारे नेक काम सिर्फ़ अल्लाह को

राज़ी और ख़ुश करने के लिए करने होंगे। आपको रात की तन्हाई में फ़ज्र की नमाज़ से पहले कुछ रकअतें अदा करनी होंगी। इसके साथ ही आपका यह पक्का यक़ीन होना चाहिए कि अल्लाह ही हर चीज़ पर क़ुदरत रखता है। डॉक्टर साहब से मिलने के लिए मैं पहले से वक़्त तय करवा लूँगी। अब हमें अल्लाह का नाम लेकर अपने काम को शुरू कर देना चाहिए।

बेऔलाद औरत बोली, "सुबहानल्लाह, मुझे बहुत दुःख है कि मैं आयते-करीमा से ग़ाफ़िल रही और उस वादे को भुला दिया, जो हमने अपने गाँव में दर्से-क़ुरआन की मजलिस में किया था। अगर अल्लाह ने चाहा तो अब इस आयत पर ख़ासतौर से अमल करूँगी। मुझे अल्लाह की ज़ात पर पूरा-पूरा भरोसा है।

अब मैंने उस माँ की तरफ़ ध्यान दिया, जो अपनी बेटी की शादी के लिए बेचैन थी। मैंने उसे याद दिलाया कि आख़िर उसकी भी तो शादी हुई थी। क्या वह शादी को इतना मुश्किल काम समझने लगी है कि अल्लाह को छोड़कर किसी और के पास जाने लगी है। उस माँ ने कहा, "फिटकारे हुए शैतान ने मुझे बहका दिया। अल्लाह मुझे शैतान इबलीस की बुरी चालों से बचाए। शुक्र है कि आपसे मुलाक़ात हो गई। अब मैं ज़िन्दगी भर उस औरत के पास नहीं जाऊँगी। अब सिर्फ़ अल्लाह के सामने गिड़गिड़ाऊँगी। उसी से दुआएँ माँगूँगी।" मैंने उस माँ से कहा, आप अगर चाहती हैं कि आपकी बेटी की जल्द शादी हो जाए तो आप और आपका शौहर दोनों ज़्यादा से ज़्यादा नेकी और भलाई के काम करें। परहेज़गारी अपनाएँ। जो कोई अल्लाह का डर और परहेज़गारी अपनाता है, अल्लाह उसके लिए मुश्किल से निकलने का कोई न कोई रास्ता पैदा कर देता है। आप सब अल्लाह से माँगें।

शहर की ओर जानेवाली औरतों में एक बीमार भी थी, जिसको बहुत तेज़ दर्द होता था। उस बीमार औरत से मैंने कहा, क़ुरआन मजीद की इस आयत पर आपने ग़ौर नहीं किया, जिसमें अल्लाह ने हज़रत इब्राहीम (अलैहि०) का यह बोल नक़्ल किया है—

"और जब बीमार होता हूँ तो वही मुझे शिफ़ा देता है।"

(क़ुरआन, सूरा-26 शुअरा, आयत-80)

दर्द से पीड़ित औरत ने जवाब दिया, "खुदा की क़सम! मुझे इतना दर्द होता है कि मुझ डूबती हुई को तिनके का सहारा भी बहुत है।"

मैंने कहा, चाहे उस तिनके में आपकी हलाकत ही क्यों न हो?

आपका ताल्लुक़ सिर्फ़ अल्लाह से होना चाहिए। वही आपको शिफ़ा देने पर क़ुदरत रखता है। आप सिर्फ़ अल्लाह से माँगें सच्चे मन और अच्छी नियत से ख़ुदा के इस हुक्म पर अमल करें कि "एक अल्लाह की बन्दगी करो, दीन को उसी के लिए ख़ालिस करते हुए।"

फिर हम सबने एक राय होकर यह तय किया कि हम सब रात की एक ख़ास घड़ी में, अपने-अपने घर में, अल्लाह के सामने खड़ी होंगी। अल्लाह से मिलेंगी, जो एक और अकेला है और जिसका कोई साझी नहीं। उसी से दरख़ास्त, दुआ और प्रार्थना करेंगी।

मैं हर रात अल्लाह के सामने गिड़गिड़ाकर, रो-रोकर ये दुआएँ करती थी कि अल्लाह हम सबको क़ुरआन की इस आयत—"अल्लाह ही की बन्दगी करो, दीन को उसी के लिए ख़ालिस करते हुए" पर अमल करने की तौफ़ीक़ दे, सब बहनों को उनकी मुरादें मिलें। उधर अल्लाह की रहमत हमारे इन्तिज़ार में थी और अब मैं दर्से-क़ुरआन की मजलिस में हाज़िर सभी बहनों को यह बताना चाहती हूँ कि जो औरत बेऔलाद थी, माँ बनने से महरूम थी, आज वह यहाँ मेरे पास बैठी है। उसके साथ उसका बच्चा भी है। जिस लड़की की शादी नहीं हो रही थी, वह भी आज यहाँ मेरे पास बैठी है। मैं इसे दुल्हन ही कहूँगी। इसकी शादी हुए कुछ महीने गुज़रे हैं। यह देखिए यह बहन जो बीमार थी, दर्द से इनका बुरा हाल था, अब अल्लाह के फ़ज़्ल से बिलकुल सेहतमन्द है। अल्लाह ने अपनी क़ुदरत से इसे शिफ़ा दी है। मस्जिद में बैठी सारी बहनों ने उन औरतों की तरफ़ देखा, जिनकी तरफ़ मैंने इशारा किया था।

अब हर औरत पूरे यक़ीन और भरोसे के साथ अल्लाह से अपनी मुरादें माँग रही थी।

जिन्न-प्रेत निकालना

अपनी मेहमान का मैंने पूरे जोश के साथ स्वागत किया। मगर वह परेशानहाल, सुस्त और ग़मगीन थी। मुझे बिलकुल याद नहीं कि मैं उससे पहले कब मिली हूँ। बात सिर्फ़ इतनी है कि उसने मुझसे मेरे घर आकर मिलने को कहा तो मैंने उसे फ़ौरन बुला लिया। अभी मैं यह इरादा ही कर रही थी कि उसके दुःखी दिल और मुरझाई हुई हालत की वजह पूछूँ कि मेहमान बहन ने कहा, "अल्लाह आपको माफ़ करे, आज से कुछ माह पहले आप लेक्चर देने के फ़ौरन बाद दर्स देने की जगह से उठ खड़ी हुई थीं। अगर उस दिन आपको जल्दी न होती, आप मेरी बात सुन लेतीं, अगर उस दिन मुझे आपसे मिलने का मौक़ा मिल जाता, अगर मैं आपसे मशवरा कर लेती तो वह कुछ न होता जो हुआ है।"

मैंने उसको दिलासा देते हुए कहा, "मेरी प्यारी बहन! शब्द 'अगर' तो शैतानी उकसाहट होता है, जो होना था वह हो गया। आज की बात करें। नए दिन, नई उम्मीद की बात करें, सख़्ती के बाद नरमी आती है, तकलीफ़ के बाद आराम मिला करता है, मुश्किल के बाद आसानी है।" मेहमान बहन यह सुनकर रोने लगी। मैंने उसको तसल्ली दी, उसके आँसू पोंछे, उसे एक गिलास शिकन्जी पिलाई। मैं बराबर उसकी दिलजूई करती रही यहाँ तक कि वह पुरसुकून और शान्त हो गई और उसने अपने ऊपर बीती ग़म की दास्तान सुनानी शुरू की—

"उस दिन मैं आपसे मिलना चाहती थी, अपने बारे में आपसे मशवरा करना चाहती थी। मेरी बेटी बीमार थी बहुत ज़्यादा बीमार। मेरे घरवालों ने मुझसे कहा कि मैं उसे एक मशहूर "पीर" के पास ले जाऊँ। वह पीर

जालसाज़ था। मैंने अपनी मजबूरी, नासमझी, कमइल्मी, कम तजरिबेकारी और किसी इल्मवाले के मशवरे और नसीहत के न मिल सकने की वजह से घरवालों की बात मान ली। हम अपनी बेटी को उसी जाली पीर (तान्त्रिक) के पास ले गए। उस पीर ने अजीब बात कही, "तेरी बेटी बीमार है और इसकी बीमारी की वजह तू खुद है, तू जो इसकी माँ है। एक जिन्न तेरे वुजूद के अन्दर दाख़िल है, जो तेरी बेटी को बीमार किए हुए है। अगर तू अपनी बेटी को शिफ़ा और सेहत दिलाना चाहती है, इसे सेहतमन्द देखना चाहती है तो फिर तेरे वजूद से वह जिन्न निकालना पड़ेगा।"

यह बात सुनकर मैंने फ़ौरन कहा, "वह धोखेबाज़ है, फ्रॉड करनेवाला है, दज्जाल है।" मेहमान बहन ने मुस्कुराकर कहा, "काश! मैं ये शब्द उस दिन आपके मुँह से सुन लेती, जिस दिन मैं आपसे मशवरा करना चाहती थी। मगर बहुत दुःख है कि ये शब्द न मैंने आपसे सुने, न किसी और से। उस जाली पीर की बात हम सबने मान ली। मेरे घरवालों और मैंने उस आमिल पीर के साथ यह तय कर लिया कि वह फ़ुलाँ दिन हमारे घर आएगा ताकि वह मेरे वुजूद से जिन्न निकालने की कार्रवाई करे। वह तय वक़्त और दिन पर आ पहुँचा। उसने आते ही बहुत-सी हिदायतें दीं। उसने बताया कि वह बच्ची की माँ के साथ अकेला कमरे में दाख़िल होगा। क्योंकि यह जिन्न बहुत ही ताक़तवर है, इसलिए बिलकुल मुमकिन है कि वह अपने आस-पास लोगों को देखकर भड़क जाए और किसी को नुक़्सान पहुँचा दे। उसने यह भी बताया कि आमिल पीर और जिन्न के बीच सख़्त लड़ाई होने का अन्देशा है, इसलिए अगर आप लोग मरीज़ बच्ची की माँ की चीख़ें सुनें तो घबराएँ नहीं, यह अस्ल में जिन्न की चीख़ें होंगी। उस वक़्त कोई अन्दर आने या बाधा डालने की कोशिश बिलकुल न करे, हो सकता है कि आप लोगों की दख़लअन्दाज़ी से माँ को कोई नुक़्सान पहुँच जाए, उसकी ज़िन्दगी को ख़तरा पेश आ जाए। यह भी मुमकिन है कि जिन्न दख़ल देनेवाले ही को पकड़ ले।

मेरे सीधे-साधे घरवालों ने उस आमिल पीर की हर बात मान ली और उसे पूरी-पूरी फ़रमाँबरदारी का यक़ीन दिलाया। उन्होंने मेरे साथ तन्हाई में दाख़िल होने के लिए इजाज़त दे दी। उसे यह भी कह दिया कि दरवाज़ा

अन्दर से बन्द कर लें। मैं उस वक़्त डरी-डरी और परेशान थी कि देखूँ मेरे साथ क्या होता है? बहुत जल्द ही मेरा डर और मेरी परेशानी सख़्त घबराहट में बदल गई, जब मुझे उस तान्त्रिक आमिल के हक़ीक़ी इरादों का पता चला। वह अस्ल में चाहता था कि तन्हाई का फ़ायदा उठाए लेकिन मैंने ज़बरदस्त विरोध किया और अपनी पूरी ताक़त से उसे ज़ोर का धक्का दिया। दरवाज़ा खोला और मैं रोती हुई बाहर निकल आई। मेरा हिजाब कशमकश में उतर गया। अगर मैं बाहर भागने में देर करती तो मेरे कपड़े भी फट जाते। क़ुदरती तौर पर मेरे घरवालों ने इसे पीर और जिन्न के बीच लड़ाई ही समझा। मैंने भी बेहतर यही समझा कि अपने घरवालों को अस्ल हक़ीक़त से आगाह न करूँ ताकि मेरा शौहर मेरे बारे में किसी तरह की बदगुमानी और शंका में न पड़े।

उस बहादुर महिला की यह बात सुनकर मैंने बहुत दुःख ज़ाहिर करते हुए उसे बताया, "आपके साथ जो कुछ हुआ है यह एक कहानी है, जो बीसियों साल से दोहराई जा रही है। यह कहानी होती बहुत है मगर सामने बहुत थोड़ी आती है। आप अल्लाह का शुक्र अदा कीजिए कि सही सलामत रहीं और उस मक्कार, दग़ाबाज़ आमिल पीर की असली नियत को समझ गईं। आपने दिलेरी से काम लिया है। आप आइन्दा दर्से-क़ुरआन में शामिल होने ज़रूर आएँ। मैं मस्जिद में आपका इन्तिज़ार करूँगी।"

मैंने उन तान्त्रिकों, जाली पीरों और धोखेबाज़ों के ख़िलाफ़ खुल्लम-खुल्ला लड़ने के ऐलान का फ़ैसला कर लिया था। मैं इस ख़तरनाक और घातक अन्धे अक़ीदे के ख़िलाफ़ एक ज़बरदस्त मुहिम चलाने जा रही थी। आइन्दा दर्से-क़ुरआन का विषय "जिन्नों की दुनिया" था। वह नामालूम दुनिया, जिसके बारे में हम इनसान बहुत कम जानते हैं। बल्कि जो कुछ क़ुरआन और हदीस में आया है, उसे भी सही-सही नहीं समझ पाए। क़ुरआन और हदीस में जिन्नों के बारे में, जो कुछ बयान हुआ है वही सच और हक़ है, उसके सिवा ज़्यादातर अन्दाज़े, अटकलें और ख़ुराफ़ात हैं।

जिन्नों के विषय पर दर्से-क़ुरआन हुआ तो मौजूद बहनों ने बहुत हैरान होकर बड़े ध्यान से सुना। बहुत दिलचस्पी दिखाई। वे दर्स सुनने में इतनी

मग्न थीं कि किसी के हरकत करने की आवाज़ तक नहीं आ रही थी। दर्से-क़ुरआन ख़त्म होने के बाद मामूल के मुताबिक़ जो आयतें अमल के लिए चुनी गईं वे सूरा-7 आराफ़ की आयत-27 और सूरा-34 सबा की आयत-14 थीं। इन दोनों आयतों से ये दो हक़ीक़तें बिलकुल वाज़ेह थीं।

1. जिन्न हमें देखते हैं मगर हम उन्हें नहीं देख सकते।

2. जिन्न ग़ैब (परोक्ष) का इल्म नहीं रखते।

"ऐ आदम की सन्तान, ऐसा न हो कि शैतान तुम्हें फिर उसी तरह फ़ित्ने में डाल दे, जिस तरह उसने तुम्हारे माँ-बाप को जन्नत से निकलवाया था और उनके लिबास उनपर से उतरवा दिए थे, ताकि उनकी शर्मगाहें (गुप्त अंग) एक-दूसरे के सामने खोले। वह और उसके साथी तुम्हें ऐसी जगह से देख रहे हैं जहाँ से तुम उन्हें नहीं देख सकते। इन शैतानों को हमने उन लोगों का सरपरस्त बना दिया है, जो ईमान नहीं लाते।"

(क़ुरआन, सूरा-7 आराफ़, आयत-27)

"फिर जब सुलैमान पर हमने मौत का फ़ैसला लागू किया तो जिन्नों को उसकी मौत का पता देनेवाली कोई चीज़ उस 'घुन' के सिवा न थी, जो उसकी लाठी को खा रहा था। इस तरह जब सुलैमान गिर पड़ा तो जिन्नों पर यह बात खुल गई कि अगर वे ग़ैब के जाननेवाले होते तो इस अपमान भरे अज़ाब में ग्रस्त न होते।"

(क़ुरआन, सूरा-34 सबा, आयत-14)

मैंने कहा कि अब की बार हमको न सिर्फ़ अपने अंगों, होशो-हवास से इन दोनों आयतों से वाज़ेह होनेवाली हक़ीक़त पर अमल करना है, बल्कि अपने समाज के तमाम लोगों को भी इससे ख़बरदार करना है, ताकि इल्म और सूझ-बूझ की रौशनी फैलने से अंधी अक़ीदत और ख़ुराफ़ात के अन्धेरे छँट जाएँ और दज्जालों, तान्त्रिकों, जाली पीरों और काम-वासना रखनेवालों के लिए काम करना नामुमकिन हो जाए। यह भी तय पाया कि आइन्दा दर्से-क़ुरआन में बहनें अपने-अपने तजरिबे बयान करेंगी।

जिस दिन क़ुरआन का दर्स (प्रवचन) होना था, उससे पहली रात मेरे टेलीफ़ोन की घन्टी बजी। रिसीवर उठाया तो मालूम हुआ कि एक बहन अपना तजरिबा बयान करना चाहती है। वह दर्स के वक़्त का भी इन्तिज़ार न कर सकी। चुनाँचे उसने बताया—

"आपका दर्से-क़ुरआन सुनते ही मैं मस्जिद से निकली तो अपनी एक सहेली के घर का रुख़ किया। उस सहेली की आदत थी कि वह हमें जिन्नों और देवियों के बारे में झूठे क़िस्से-कहानियाँ सुनाती थी। हम अपनी नासमझी से उसकी बातों और कहानियों को सच समझते रहे। वह कहती थी कि वह जिन्नों को देखती है, उनसे बातें भी करती है और उनके साथ उसके कई सम्बन्ध हैं, बल्कि उसके एक भाई ने भी एक जिन्नी से शादी कर रखी है। वह हमें उस जिन्न के बारे में बताती कि वह सफ़ेद कपड़े पहनकर उसके पास बैठा रहता है। उसने हमें एक और जिन्न के बारे में बताया कि उसकी टाँगें बकरे की तरह हैं। मैं जब उससे ये कहानियाँ सुनकर घर आती थी तो बहुत ज़्यादा डरी हुई होती थी। मुझे अपने आस-पास से डर महसूस होता था। यहाँ तक कि मैं अपने ख़याल से भी सहम जाती थी। मेरी दूसरी सहेलियों का भी यही हाल था। हम सब क़ुरआन और हदीस की तालीम से अनजान और बेख़बर होने की वजह से उसकी बातों को सही समझते थे। मगर जब आपने पिछले दर्से-क़ुरआन में यह बताया कि इनसान जिन्नों को नहीं देख सकते और जिन्नों को ग़ैब का इल्म नहीं है तो मुझे ऐसा महसूस हुआ, जैसे रौशनी की एक किरण मेरे वुजूद में समा गई है और जिहालत का अँधेरा दूर हो गया है। इसके साथ ही मुझे अपने अब्बू जान की बात याद आ गई, जो वे अक्सर कहा करते थे कि इल्म (ज्ञान) नूर है।

आपका दर्से-क़ुरआन सुनने के फ़ौरन बाद, मैं सीधे अपनी उस सहेली के पास गई। इस बार मैं डर, दहशत और रौब में आकर उसके घर नहीं जा रही थी। अब तो मैं यक़ीन, इल्म और पूरे भरोसे के साथ जा रही थी। मुलाक़ात होने पर मैंने बिना रुके कहा, मुझे इस बात का पूरा यक़ीन हो चुका है कि हम जिन्नों को नहीं देख सकते। आप जो कहती हैं कि आप जिन्न देखती हैं ये सिर्फ़ आपके ख़याल हैं। इन ख़यालों का हक़ीक़त से कोई

सम्बन्ध नहीं है। मैंने उसे क़ुरआन मजीद की आयत सुनाई और कहा कि वे आइन्दा इस तरह की बातें न किया करें और न ऐसे ख़यालों और ख़ुराफ़ातों को बयान किया करें। फिर मैंने उससे कहा, आप ख़ुद अपने-आप से सवाल करें कि आप सच्ची हैं कि अल्लाह की किताब?" उसने तुरन्त जवाब दिया, "अल्लाह की किताब क़ुरआन से बढ़कर किसकी बात सच्ची हो सकती है। किसी की भी नहीं। फिर भी मैं कई चीज़ें देखती हूँ।"

मैं फ़ौरन भाँप गई कि इसको वक़्त-बेवक़्त बेहोशी या मिर्गी के दौरे पड़ते रहते हैं। यह ख़याल आते ही मैंने बड़े प्यार-मुहब्बत से उससे कहा, "ऐ मेरी प्यारी बहन! आपको नफ़सियात (मनोविज्ञान) के किसी माहिर डॉक्टर से ज़रूर और जल्द मिलना चाहिए। देर न करें, कहीं आप की हालत और ज़्यादा ख़राब न हो जाए। मुझे उम्मीद है कि अगर अल्लाह ने चाहा तो नफ़सियात के इलाज से आप बहुत जल्द सेहतमन्द हो जाएँगी। मेरे ज़िद करने पर वह इस शर्त पर इलाज कराने के लिए राज़ी हो गई कि मैं किसी के सामने इसको बयान न करूँ कि लोग उसे "मानसिक मरीज़" समझने लगें। मैंने उसकी शर्त मान ली और अपनी तरफ़ से यह पाबन्दी लगा दी कि वह अब पहले की तरह ख़ुराफ़ात बयान करने से बचेंगी। उसने वादा कर लिया।"

अगली सुबह कोई बीस साल की एक लड़की पहले से मुलाक़ात का वक़्त तय किए बिना मुझ से मिलने आ गई। उसने शरमाते हुए कहा, "मैं आपके सामने अपना एक राज़ (भेद) रखना चाहती हूँ। इस राज़ ने मुझे बेचैन और बेक़रार किया हुआ है और मेरा सुकून-चैन तबाह कर रखा है। मैं आपके पास रहनुमाई के लिए हाज़िर हुई हूँ। मैं नहीं जानती कि अल्लाह मेरा गुनाह माफ़ करेगा या नहीं? मैंने अपने माँ-बाप के ख़िलाफ़ एक बड़े गुनाह यानी गुस्ताख़ी का गुनाह किया है। मैं अपने माँ-बाप की इकलौती औलाद हूँ। ज़्यादा लाड-प्यार ने मुझे माँ-बाप का गुस्ताख़ बना दिया है। मैं उनके सामने चीख़ती-चिल्लाती बल्कि उन्हें डाँटती भी थी। मैं उनकी नाफ़रमानी करती, मुझे जो भी काम कहते, मैं उसके ख़िलाफ़ करती। मैं घर के काम-काज में अपनी माँ का कभी हाथ न बँटाती, बल्कि माँ के साथ हमेशा सख़्ती से पेश

आती। मैं अपने अब्बा का मज़ाक़ उड़ाती। जब घर में लोग मिलने आए होते तो भी मैं अपने अब्बा का मज़ाक़ उड़ाती। मुझे उनकी बड़ी उम्र का भी ख़याल न आता, न उनकी शराफ़त का लिहाज़ करती। मेरा उनके साथ यह रवैया था मगर मेरे माँ-बाप मुझसे बेहद प्यार करते थे। उनके प्यार में कभी भी कमी न आई। एक दिन अब्बा घर आए तो उनके साथ मैंने एक अजनबी आदमी को देखा। अस्ल में मेरे अब्बा चाहते थे कि चाहे जितना भी ख़र्च हो जाए, कोई परवाह नहीं मगर बेटी का जिन्न निकल जाए। यह अजनबी साहब मेरे वुजूद से, जिन्न को अलग करने के लिए तशरीफ़ लाए थे।

मैं दिल-ही-दिल में मुस्कुराई और उस जिन्नवाले ड्रामे का हिस्सा बनने का फ़ैसला कर लिया। जिन्न निकालनेवाले साहब के सामने बैठने से मैंने इनकार न किया। उसने मेरे क़रीब बैठकर अजीब और अनजाने से जुमले बोलने शुरू कर दिए। वह बीच-बीच में क़ुरआन मजीद की आयतों के कुछ हिस्से भी मिला देता था। वह क़ुरआन की आयतों को भी सही तरीक़े से नहीं पढ़ सकता था। मैंने दिल-ही-दिल में सबका मज़ाक़ उड़ाने का फ़ैसला कर लिया। कुछ मिनटों के बाद ही मैंने अपना अन्दाज़ बदल लिया। जब वह घबराया तो एक बार तो मेरी हँसी छूटने लगी। लेकिन मैंने अपने-आप पर क़ाबू पा लिया। क्योंकि एकदम खिलखिलाकर हँसने से सारा खेल चौपट हो जाता।

अपने आप पर क़ाबू पाने के बाद मैंने अपनी आवाज़ और ज़्यादा सख़्त और कठोर कर ली। मैंने कुछ बिना मतलब और बेकार से शब्द बोलना शुरू कर दिए। यह देखकर मेरी अम्मी ग़म में रोने लगीं। पहले तो वह मुझे बेअदब समझती थीं। अब उन्होंने मुझे "जिन्नी असरवाली" समझना शुरू कर दिया। मेरे अब्बा ने मुहब्बत में बेक़रार होकर मुझे अपने क़रीब करना चाहा, मगर मेरी नज़र उस वक़्त "जिन्नों के बाबा" की छड़ी पर पड़ी। वह इस छड़ी से बीमारों को पीटता था, और यह जानता था कि वह किसी इनसान को नहीं बल्कि जिन्न को पीट रहा है। इस छड़ी की मार से कितने मर्द-औरतें, नौजवान लड़कियाँ और लड़के बुरी तरह मुतास्सिर (प्रभावित) हुए

थे और मानसिक मरीज़ बन चुके थे।

तो जैसे ही मेरी नज़र छड़ी पर पड़ी, मैंने उसके हाथ से छड़ी छीन ली। अब मैंने सबकी पिटाई की। जिन्न निकालनेवाला बाबा और माँ-बाप भी सभी मेरे निशाने पर थे। वे चीख़ते-चिल्लाते और रोते थे। मगर मेरा दिल पत्थर की तरह हो चुका था। इस घटना के बाद माँ-बाप बहुत परेशान थे और पहले से बढ़कर मेरी हर माँग मानते थे।

अल्लाह को मेरे माँ-बाप की हालत पर रहम आया। उसने मुझे आप लोगों के दर्से-क़ुरआन में शामिल होने की तौफ़ीक़ दी। मैं बहुत तेज़ी से बदल गई। माँ-बाप के साथ बेअदबी, नाफ़रमानी, हठधर्मी वग़ैरा सब छोड़ दी। मैंने दर्स में बताई आयतों के मुताबिक़ अपने आपको ढालना शुरू किया। आपने पिछले हफ़्ते जिन्नों के बारे में जो कुछ बताया, उसने मेरी आँखें खोल दीं। मैं अपने माँ-बाप के साथ जो गुस्ताख़ी करती रही हूँ, उसे तो शायद अल्लाह माफ़ कर दे। लेकिन मैंने उन्हें जो छड़ी से पीटा है, उसे माफ़ न करेगा। मुझसे यह सबसे बड़ा गुनाह हो गया है। मैं बहुत परेशान हूँ। आप अल्लाह के लिए मेरी मदद कीजिए। क्या अल्लाह मेरे इतने बड़े जुर्म को माफ़ कर देगा?"

मैंने उसे प्यार से नसीहत की, "आप सच्चे दिल से तौबा करें। माँ-बाप के साथ अच्छे से अच्छा बर्ताव करें। उनकी ख़ूब ख़िदमत करें।" उस लड़की ने और बताया, "मेरे माँ-बाप ने जब मेरी बदली हुई हालत देखी तो इसे आमिल (तान्त्रिक) का चमत्कार समझ लिया। वे दोनों उसके पास शुक्र के तौर पर रुपए और उपहार लेकर जा रहे थे। मैंने उन्हें बताया कि मुझे अल्लाह के क़ुरआन ने ठीक किया है। वह जाली पीर तो फ़्रॉड और चालबाज़ था। मैंने अपने माँ-बाप से कहा कि वे अल्लाह का शुक्र अदा करें और यह रक़म किसी मुहताज हक़दार को दे दें।

क़ुरआन मजीद की आयतों पर अमल करने से इन्शा-अल्लाह अँधी अक़ीदत, जिहालत और जादू का मायाजाल सब छट जाएँगे और—

"ज़मीन अपने रब के नूर (दिव्य प्रकाश) से जगमगा उठेगी।"

(क़ुरआन, सूरा-39 जुमर, आयत-69)

ग़ैब का इल्म अल्लाह के सिवा किसी को नहीं

यह बात पहले बयान हो चुकी है कि हमारे यहाँ दर्से-क़ुरआन आम चलन के तरीक़े से बिलकुल अलग होता है। पहले दर्सवाली आयतों का तफ़्सीली परिचय पेश किया जाता है, यानी उसकी तफ़्सीर (व्याख्या) बयान की जाती है। अगर उन आयतों का ताल्लुक़ शरीअत के क़ानून से हो तो उन्हें पेश किया जाता है। उतरने के मौक़ों और वजहों पर बात की जाती है। फिर दर्सवाली आयतें अगर आसानी से याद हो सकें तो उन्हें हिफ़्ज़ करने की कोशिश की जाती है, तिलावत के अहकाम और आदाब (तरीक़े) सिखाए जाते हैं। फिर सबसे आख़िर में यह बताया जाता है कि उन आयतों पर कैसे अमल करना है? आइन्दा दर्स में अमल करने के दौरान पेश आनेवाले तजरिबे सुने जाते हैं। कभी-कभी क़ुरआन में गहरी नज़र रखनेवाले आलिमों की ख़िदमत भी ली जाती है। इल्म से लगाव और समझ-बूझ रखनेवाली औरतें और लड़कियाँ आपसी प्यार और मुहब्बत के माहौल में क़ुरआनी दस्तरख़ान से सैराब होती हैं।

हमने तजवीद के साथ क़िरअत करने का इल्म रखनेवाले आलिम से दरख़ास्त की कि वे हमारे दर्स में आकर इस इल्म के उसूल और क़ायदों की तालीम दें, ताकि तिलावत बिलकुल ठीक हो सके। क़ारी साहब तशरीफ़ लाने लगे। सभी शामिल होनेवाली बहनें बड़ी ख़ुश थीं। वे तजवीद के इल्म के क़ायदों और उसूलों के मुताबिक़ क़ुरआन मजीद बेहतर तौर पर पढ़ने के क़ाबिल हो रही थीं। दिन-प्रतिदिन उनके इल्म में इज़ाफ़ा हो रहा था। उनकी ज़बानें और गले तजवीद के उसूल और क़ायदों के मुताबिक़ हरकत कर रहे थे।

क़ारी साहब अपने फ़न के माहिर थे, मगर उनमें एक ख़राबी यह थी कि वे दर्स के दौरान इधर-उधर की बातें करने लगते थे। वे मज़ारों की अहमियत और मज़ारवालों की पाकबाज़ी को बढ़ा-चढ़ाकर बयान करते थे। दर्स में शामिल होनेवाली बहनें उनके इस बढ़ा-चढ़ाकर बयान करने को नापसन्द करती थीं। क्योंकि उन्हें क़ब्रो-ज़ियारत के अहकाम और आदाब अच्छी तरह मालूम थे। फिर भी बहनों की नापसन्द अभी तक उकताहट और बेज़ारी के दर्जे में न पहुँची थी। क्योंकि उन्हें तजवीद सिखानेवाले से फ़ायदा उठाना ज़्यादा प्रिय था। इसलिए वे उनकी इन बातों को बड़े सब्र के साथ सुनतीं। यह सिलसिला ऐसे ही चलता रहा। यहाँ तक कि एक दिन क़ारी साहब ने एक ऐसी बात कह दी कि मौजूद बहनों की बरदाश्त का पैमाना लबरेज़ हो गया और नौबत बहस-मुबाहिसे और तकरार तक पहुँची।

क़ारी साहब एक पीर साहब के अक़ीदतमन्द थे। वे पहले भी उनके बारे में ज़िक्र करते रहते थे। मगर उस दिन उन्होंने अपने शेख़ (पीर) की तारीफ़ और बड़ाई में ज़मीन-आसमान के क़लाबे मिला दिए। यहाँ तक कह दिया कि मेरे पीर साहब तो ग़ैब का इल्म भी जानते हैं। क़ारी साहब ने बताया कि एक बार निकाह के बाद हज़रत ने दुल्हा और दुल्हन की पैदाइश की तारीख़ पूछी। फिर आपने एक काग़ज़ पर अपने क़लम से कुछ लिखा। कुछ हिसाब किया और दूल्हे को एक तरफ़ ले जाकर कहा, "आपकी इस शादी का अंजाम नाकामी है। आप जल्द ही दुल्हन को तलाक़ दे देंगे।" दूल्हे ने हज़रत पीर साहब को हिक़ारत की नज़र से देखा और उनके कहने की कुछ परवाह न की। अभी कुछ ही महीने गुज़रे थे कि उस दूल्हे ने अपनी दुल्हन को तलाक़ दे दी। अब इस दूल्हे ने दोबारा शादी का इरादा किया तो हज़रत की ख़िदमत में हाज़िर हुआ और दरख़ास्त की कि हज़रत कुछ हिसाब-किताब करके यह बताएँ कि दूसरी शादी और दुल्हन का अंजाम क्या होगा।

क़ारी साहब जब यह क़िस्सा बयान कर चुके तो मैंने मौजूद बहनों की तरफ़ देखा। ऐसा मालूम होता था कि वे बहुत ज़्यादा दुखी और परेशान हों। मैंने 'तजवीद' सिखानेवाले आलिम पर नज़र डाली तो वे ख़ुशी से फूले नहीं समा रहे थे। वे अपनी स्पष्ट कामयाबी और मुँह बन्द कर देनेवाली दलील

पर बड़े ख़ुश थे। उन्होंने मानो यह साबित कर दिया था कि उनके हज़रत पीर साहब को ग़ैब का इल्म हासिल है। इधर मुझे यह महसूस हो रहा था कि मस्जिद के सुतून (पिलर) काँप रहे हैं और क़िरअत के उस्ताद के इस दावे के खण्डन में अल्लाह की किताब की आयतें पढ़ने के लिए बेचैन हैं। वे मानो ज़बानेहाल से क़ुरआन के इस क़ारी के मनगढ़ंत और झूठे बयान के ख़िलाफ़ विरोध ज़ाहिर कर रहे हैं। मैंने बुलन्द आवाज़ में यह आयत पढ़ी—

> "वह (अल्लाह) ग़ैब का जाननेवाला है। वह अपने ग़ैब पर किसी को सूचित नहीं करता।"
>
> (क़ुरआन, सूरा-72 अल-जिन्न, आयत-26)

तजवीद की तालीम देनेवाले क़ारी ने बहुत ही गुस्से में मेरी तरफ़ देखा। उसने चैलेंज करनेवाले अन्दाज़ में चिल्लाकर कहा, "पूरी आयत पढ़ो" इस पर मैंने आगे की आयत पढ़ी—

> "सिवाए उस रसूल के जिसे उसने ग़ैब का इल्म देने के लिए पसन्द कर लिया हो, तो उसके आगे और पीछे हिफ़ाज़त करनेवाला लगा देता है। ताकि वह जान ले कि उन्होंने अपने रब के पैग़ाम पहुँचा दिए और वह उनके पूरे माहौल को घेरे हुए है और एक-एक चीज़ को उसने गिन रखा है।"
>
> (क़ुरआन, सूरा-72 अल-जिन्न, आयत-27,28)

इस पर क़ारी साहब ने बड़ी नफ़रत से कहा, "तुमने देखा?"

मैंने बड़े भरोसे और इत्मीनान से जवाब दिया, "याद रखिए, आपके पीर साहब हों या कोई और ज्योतिषी, आमिल, तान्त्रिक, क़िस्मत का हाल बतानेवाले, गिनती लिखकर हिसाब-किताब करनेवाले इनमें से कोई भी यह दावा नहीं कर सकता कि वह अल्लाह के पसन्दीदा और चुने हुए रसूल हैं कि अल्लाह अपने ग़ैब के इल्म में से कुछ उन्हें दे देता है। जो क़िस्सा आपने बयान किया है अगर वह सच्चा भी हो तो वह आपके पीर साहब के ग़ैब का इल्म रखने का सुबूत नहीं, बल्कि सिर्फ़ एक अनुमान है। अनुमान कभी

सही हो जाता है और कभी ग़लत साबित हो जाता है। लोगों की क़िस्मत के बारे में इस तरह की बातें तुक्के और झूठ के सिवा कुछ नहीं होतीं।''

यह सुनकर उस आदमी को सख़्त गुस्सा आया। गुस्से से उसका बदन काँप रहा था। उसने इन्तिहाई बुलन्द आवाज़ में चीख़कर कहा, ''मैं आपको यह इजाज़त नहीं दे सकता कि आप मेरे पीर और रहनुमा की शान में बेअदबी करें और मेरे सामने उनकी तौहीन करें।'' अब क़ारी साहब गुस्से से बेताब होकर मुँह से आग निकाल रहे थे।

मस्जिद के एहतिराम को ध्यान में रखकर मैंने ख़ामोश रहने को ही तरजीह दी। क़ारी साहब ने कहा कि मुझे इजाज़त दीजिए, मुझे इस वक़्त कहीं और काम के लिए जाना है। किसी से वादा कर रखा है, देर न हो जाए।

तजवीद के उस्ताद के चले जाने के बाद मुझे नहरवान का वह क़िस्सा याद आ गया, जो हदीस की किताब 'सहीह मुस्लिम' में लिखा है। अबू-तालिब के बेटे और मुसलमानों के ख़लीफ़ा हज़रत अली (रज़ि॰) ने अपनी ख़िलाफ़त के ज़माने में फ़ौज को रवाना होने का हुक्म दिया, तो मुसाफ़िर-बिन-औफ़ ने कहा, ''ऐ मोमिनों के अमीर! आप इस समय रवाना न हों बल्कि दिन की तीन घड़ियाँ गुज़र जाएँ तो उस वक़्त रवाना हों।'' हज़रत अली (रज़ि॰) ने पूछा, क्यों? जवाब दिया, ''आप अगर इस वक़्त चलेंगे तो आपको और आपके साथियों को तक्लीफ़ और मुसीबत का सामना करना पड़ेगा, और सख़्त नुक़्सान पहुँचेगा और अगर आप मेरे बताए हुए समय पर रवाना होंगे तो आपकी जीत होगी और आपकी आरज़ू और तमन्ना पूरी होगी।'' यह सुनकर हज़रत अली (रज़ि॰) ने कहा, ''हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) ज्योतिषी नहीं थे और न ही आप (सल्ल॰) के बाद हममें से कोई नजूमी (ज्योतिषी) है, जिस किसी ने तुम्हारी बात को सच जाना, मैं उसे उन लोगों में गिनूँगा, जो अल्लाह को छोड़कर औरों को कारसाज़ और मालिक समझ लेते हैं। ऐ अल्लाह! तेरी पेशनगोई के सिवा कोई पेशनगोई नहीं, और तेरी भलाई के सिवा कोई भलाई नहीं।'' फिर आपने मुसाफ़िर-बिन-औफ़ से कहा, ''हम तुझे झूठा समझते हैं, तेरे मशवरे के ख़िलाफ़ चलते

हैं और हम इसी वक़्त रवाना होंगे, जिस वक़्त चलने से तू हमें रुकने को कह रहा है।" इसके बाद हज़रत अली (रज़ि॰) ने अपने फ़ौजियों से फ़रमाया, "ऐ लोगो! ज्योतिष का इल्म मत सीखो, हाँ, सिर्फ़ इतना सीखो, जिससे तुम ज़मीन और समुद्र के अन्धेरों में रास्ता तलाश कर सको। याद रखो कि ज्योतिषी जादूगर के समान है और जादूगर हक़ के इनकारी की तरह जहन्नम की आग में होगा। ऐ मुसाफ़िर-बिन-औफ़! अल्लाह की क़सम अगर मुझे यह ख़बर मिली कि तू सितारों में दिलचस्पी ले रहा है और फिर ज्योतिषियों की तरह काम कर रहा है तो मैं तुझे क़ैद में रखूँगा जब तक तू ज़िन्दा है और मैं ज़िन्दा हूँ। मैं अपने अधिकारों से काम लेकर तुझे मिलनेवाली हर उस चीज़ से महरूम रखूँगा, जो यहाँ से तुझे मिलती है।"

यह बात कहने के बाद हज़रत अली (रज़ि॰) ने उसी वक़्त कूच किया, जिस वक़्त कूच न करने का आपको मशवरा दिया गया था। दुश्मनों से मुक़ाबला किया और उन्हें तहस-नहस कर दिया। लड़ाई के बाद आपने अपने फ़ौजियों से कहा, "ऐ लोगो! अल्लाह पर पूरा भरोसा करो। अल्लाह दूसरों के मुक़ाबले में तुम्हारे लिए काफ़ी है।"

(अल-क़ुर्तबी जिल्द-29, पृष्ठ-28)

मुझे यह बात पहले से मालूम थी कि हमारे तजवीद के उस्ताद के कोई औलाद नहीं है। उसकी बीवी का बराबर इलाज चल रहा है। मैंने सोचा कि अगर क़ारी साहब के पीर को ग़ैब का इल्म है तो उन्होंने उसे इस औरत से शादी करने से क्यों नहीं रोका?

मैं अपनी सोच से बाहर आई। उपस्थित बहनों को देखा, वे बहुत हैरत और दुविधा में थीं। एक तरफ़ उनका ग़ैब के इल्म के बारे में क़ुरआन और हदीस पर आधारित इल्म था, दूसरी तरफ़ तजवीद के उस्ताद का तजरिबा और दावा था। मैंने इस दुविधा को ख़त्म करने का फ़ौरन फ़ैसला किया। उनसे बातचीत शुरू की। पहले मैंने उन्हें बताया कि मैं क्या सोच रही थी। मैंने उनसे सवाल किया कि अल्लाह के इस फ़रमान के बारे में आपकी क्या राय है?

"ऐ नबी! उनसे कहो कि मैं अपने लिए किसी नफ़े और नुक़्सान का इख़्तियार नहीं रखता, अल्लाह ही जो कुछ चाहता है वह होता है। और अगर मुझे ग़ैब का इल्म होता तो मैं बहुत-से फ़ायदे अपने लिए कर लेता और मुझे कभी कोई नुक़्सान न पहुँचता।" (क़ुरआन, सूरा-7 आराफ़, आयत-188)

सभी बहनों ने एक ज़बान होकर जवाब दिया, "अल्लाह ने बिलकुल सच फ़रमाया है।"

एक औरत ने कहा, "कुछ ग़ैब के इल्म के दावेदार कहते हैं कि उन्हें ग़ैब का इल्म जिन्नों के ज़रिए हासिल होता है।" मैंने इसके खंडन में यह आयत पढ़ी—

"फिर जब सुलैमान पर हमने मौत का फ़ैसला लागू किया तो जिन्नों को उसकी मौत का पता देनेवाली कोई चीज़ उस घुन के सिवा न थी, जो उसकी लाठी को खा रहा था। इस तरह जब सुलैमान गिर पड़ा तो जिन्नों पर यह बात खुल गई कि अगर वे ग़ैब के जाननेवाले होते तो अपमान के इस अज़ाब में न पड़ते।" (क़ुरआन, सूरा-34 ज़ुमर, आयत-14)

मैंने कहा कि जिन्न ग़ैब जानने का दावा करते थे, मगर अल्लाह ने उनका झूठ खोल दिया और उन्हें रुसवा कर दिया। मगर बड़े दुख की बात है कि मुसलमानों में से कुछ लोग अब तक जिन्नों और धोखेबाज़ों के उन दावों को सच समझते हैं, और अल्लाह के कलाम से आँखें बन्द कर लेते हैं। देखिए हज़रत नूह (अलैहि॰) अल्लाह के नबी और रसूल हैं। इसके बावजूद वह अल्लाह की वह्य के अलावा किसी भी तरह से ग़ैब की बातें जानने के दावे से इनकार करते हैं—

"और मैं तुमसे नहीं कहता कि मेरे पास अल्लाह के ख़ज़ाने हैं, न यह कहता हूँ कि मैं ग़ैब का इल्म रखता हूँ, न यह मेरा दावा है कि मैं फ़रिश्ता हूँ।" (क़ुरआन, सूरा-11 हूद, आयत-31)

मैंने मौजूद बहनों के चेहरों पर सुकून व चैन महसूस किया, इसलिए कि

अल्लाह की आयतें इतनी साफ़ और बिलकुल वाज़ेह हैं कि शक की कोई गुन्जाइश नहीं।

क़िरअत और तजवीद के उस्ताद क़ारी साहब जब अगले दर्से-क़ुरआन में तशरीफ़ लाए और दर्स के बीच मामूल के मुताबिक़ जब कहावतें, घटनाएँ और क़िस्से बयान करने शुरू किए तो किसी ने भी उनकी बातों को ध्यान से न सुना। औरतों को अगर उस्ताद के अदब का ख़याल न होता तो शायद क़ारी साहब को अपमान का सामना करना पड़ता। क़ारी साहब जब चले गए तो सारी बहनों ने सख़्त बेज़ारी का इज़हार किया और दरख़ास्त की कि उन्हें इस बात का पाबन्द कर दिया जाए कि आगे वे इस तरह से क़ुरआन मजीद के ख़िलाफ़ क़िस्से-कहानियाँ बयान न करें और न ही अपने ग़लत और ग़ैर-इस्लामी नज़रियों का प्रचार करें। मैंने इस मौक़े से फ़ायदा उठाकर यह ऐलान कर दिया कि आइन्दा हमारे अमल के लिए यह आयत होगी—

> "वही ग़ैब का जाननेवाला है, वो अपने ग़ैब पर किसी को सूचित नहीं करता।" (क़ुरआन, सूरा-72 जिन्न, आयत-26)

सभी मौजूद बहनों ने मेरी बात का भरपूर समर्थन किया। एक बहन ने कहा, "हो सकता है ये क़ारी साहब और इस तरह के दूसरे लोग अपने दावों को सच समझते हों।" एक दूसरी बहन बोली, "मैंने सुना है कि कुछ लोग यह ख़याल करते हैं कि वे फ़रिश्तों को देखते और उनसे बातचीत करते हैं। कई तो इस हद तक हिम्मत दिखाते हैं कि अल्लाह के अर्श (सिंहासन) को देखने की कल्पना करते हैं।"

सभी की सभी हाज़िर बहनों ने तजवीद के उस्ताद के विचारों से सामूहिक रूप से बेज़ारी ज़ाहिर करते हुए फ़ैसला किया कि हम आगे से क़ारी साहब की सेवाएँ नहीं लेंगी। निस्सन्देह वे अपने फ़न के माहिर हैं मगर इल्म किसी ख़ास आदमी या तबक़े तक सीमित नहीं है। इसी लिए आइन्दा दर्से-क़ुरआन में क़िरअत और तजवीद सिखाने के लिए एक ऐसी बहन तशरीफ़ लाईं जो इस फ़न में भी माहिर थीं।

औलाद के लिए दुआ

अल्लाह की मेहरबानी और फ़ज़्ल से मुझे कई कॉलेजों और अलग-अलग ज़बानें सिखानेवाली संस्थाओं में क़ुरआन मजीद की आयतों को अमली शक्ल देने के विषय पर लेक्चर और क़ुरआन के दर्स देने का मौक़ा मिला। छात्राओं और शिक्षिकाओं की एक अच्छी-ख़ासी तादाद ने सकारात्मक प्रतिक्रिया और ख़याल ज़ाहिर किया। उन दर्से-क़ुरआन की बरकतों से छात्राओं और शिक्षिकाओं के बीच क़रीबी सम्बन्ध बने। तालीमी मसरूफ़ियात (व्यस्तताएँ) भी इस दिली सम्बन्ध में बाधा न बन सकीं। यहाँ तक कि जब छात्राएँ अपनी शिक्षा पूरी करके अमली ज़िन्दगी में आईं तो भी ये सम्बन्ध बाक़ी रहे। कई एक ने शादी के बाद भी इन सम्बन्धों को बरक़रार रखा।

मेरी एक छात्रा को शादी के बाद एक बहुत बड़े मानसिक दबाव का सामना करना पड़ा। शादी हुए पाँच साल बीत चुके थे। लेकिन वह अब तक औलाद की नेमत से महरूम थी। उसका शौहर अपने माँ-बाप का इकलौता था। इसलिए उसके ससुर और सास और दूसरे क़रीबी रिश्तेदार हमेशा औलाद का ज़िक्र बड़े अरमानों से करते थे। ऐसा लगता था जैसे उनके चेहरों पर यह माँग लिखी हुई हो कि उनकी बहू के यहाँ औलाद होनी ही चाहिए। औलाद का न होना उसका सबसे बड़ा दुःख था। यही उसकी चिन्ता का केन्द्र था। एक दिन तो उसके सास-ससुर ने ज़बान से सीधे तौर पर कह दिया कि अगर उसके यहाँ औलाद न हुई तो उनकी नस्ल न चलेगी और वे हमेशा के लिए गुमनामी में जा पड़ेंगे। दोनों ने अपनी बहू से 'मुशाहिरह' की माँग की।

उसे शुरू-शुरू में तो कुछ समझ में न आया कि उसे क्या करना है? 'मुशाहिरह' क्या चीज़ है? यह अमल हलाल है या हराम? आख़िरकार वह

मेरे पास आई तो मैंने उसे बताया कि यह 'मुशाहिरह' एक तरह का टोना-टोटका है। इसके कई तरीक़े हैं। आम लोग समझते हैं कि जब ख़ास हालात में कोई औरत बाँझ हो जाती है तो इसका मतलब यह होता है कि उससे कोई बाँझ औरत मिलने के लिए आई थी, जिसकी नुहूसत से वह भी बच्चे जनने की सलाहियत से महरूम हो गई है। बाँझपन दूर करने का एक टोटका यह है कि शौहर और बीवी को एक ख़ास तरह की सब्ज़ियाँ और तरकारियाँ दी जाती हैं। इसका एक तरीक़ा यह भी है कि एक ख़ास हालत पर, जिसे अन्धविश्वासी लोग तय करते हैं, शौहर अपनी बाँझ बीवी के पास जाता है। मतलब यह कि इस तरह के तरीक़े अपनाने को अरब के आम लोग 'मुशाहिरह' कहते हैं। अल्लाह ने इन बातों की ताईद और समर्थन में कोई दलील नहीं उतारी है। मैंने उस बहन को बताया कि आपसे जिस चीज़ की माँग की जा रही है वह सिर्फ़ एक ख़ुराफ़ात है। यह सब झूठ और नाहक़ है। शैतान इसे लोगों के सामने ख़ुशनुमा बनाकर पेश करता है। बड़े दुःख की बात है कि इस तरह की ख़ुराफ़ात आम लोगों के अक़ीदों का हिस्सा बन चुकी हैं।

मेरी यह बात सुनकर औलाद की तमन्ना रखनेवाली मेरी यह छात्रा रोने लगी और कुछ सँभली तो कहा, "आप जानती हैं कि मुझे माँ बनने की बड़ी तीव्र ख़ाहिश है। अगर मैं उन लोगों की बात मान लूँ तो भी मेरा कुछ नुक़्सान न होगा। अब तो मेरी यह हालत है कि जैसे मैं रात के वक़्त क़ब्रिस्तान में चल रही हूँ या...!" मैंने उसकी बात काटकर उसे उम्मीद और तसल्ली देते हुए कहा, "आप यह मत कहें कि आपका नुक़्सान न होगा। आपका तो सबसे बड़ा नुक़्सान यह होगा कि आप हक़ पर जमे रहने को छोड़कर बातिल और झूठ के सामने झुक जाएँगी। नजात की उम्मीद पर हलाकत का रास्ता अपनाना कहाँ की अक़्लमन्दी है? मेरी प्यारी बेटी! उम्मीद सिर्फ़ एक अल्लाह ही से रखो। सिर्फ़ और सिर्फ़ अल्लाह ही इस बात की क़ुदरत रखता है कि वह आपकी तमन्ना पूरी करे। ख़ुदा के सिवा औरों से यह उम्मीद रखना सरासर नादानी और ख़ुदा पर भरोसा न रखने की निशानी है।

फिर आप जो कुछ अपने घरवालों के कहने पर करने जा रही हैं, यह इलाज भी तो नहीं है, बल्कि यह आज़माइश है। इस आज़माइश के ज़रिए अल्लाह आपके हक़ पर होने के ईमान को जाँचना चाहता है। आपके इख़लास को देखना चाहता है कि आप सिर्फ़ अल्लाह से दुआएँ करती हैं या नहीं। अल्लाह इसका जाइज़ा लेना चाहता है। यह भी याद रखिए कि अल्लाह ग़ैब (परोक्ष) का जाननेवाला है, दिलों के भेद जानता है, इस इम्तिहान, आज़माइश और जाँच का मक़्सद और मन्शा यह है कि आपकी ख़ूबियों और ख़ामियों को आपपर वाज़ेह कर दिया जाए ताकि आपको अपनी अस्ल हैसियत मालूम हो—

"वही ज़िन्दा है। उसके सिवा कोई माबूद (पूज्य-प्रभु) नहीं। उसको तुम पुकारो अपने दीन को उसके लिए ख़ालिस करके। सारी तारीफ़ (प्रशंसा) सारे जहानों के रब अल्लाह के लिए है।"
(क़ुरआन, सूरा-23 मोमिनून, आयत-65)

आपको क़ुरआन मजीद और नबी (सल्ल॰) के तरीक़े के मुताबिक़ अक़ीदा रखना है और उसी के मुताबिक़ चलना है। ख़ुदा को ही पुकारना है। ख़ुदा का फ़रमान है—

"तुम्हारा रब कहता है कि मुझे पुकारो, मैं तुम्हारी दुआएँ क़बूल करूँगा।" (क़ुरआन, सूरा-23 मोमिनून, आयत-60)

सिर्फ़ अल्लाह ही दुआएँ सुनता है और उन्हें क़बूल करता है। मेरी बेटी! इन आयतों के मुताबिक़ चलो, इन्हें याद रखो, इनके मानी और मतलब को हमेशा नज़रों के सामने रखो यहाँ तक कि इन आयतों का सही मतलब और मक़सद तुम्हारे दिलो-दिमाग़ में रच-बस जाए। ये आयतें तुम्हारी ज़बान पर हमेशा जारी रहें। फिर तुम उस मक़ाम पर पहुँच जाओ और ऐसे यक़ीन से भरपूर हो जाओ कि अल्लाह ही तुम्हारी आरज़ू पूरी कर सकने पर क़ुदरत रखता है। उसकी क़ुदरत हमारी कल्पना और सोच से परे है।

इसके बाद मैंने उसे और समझाते हुए कहा कि शायद आप हमारी दर्से-क़ुरआन की मजलिस में तय किए हुए तरीक़ों को भुला चुकी हैं। हमने

यह तय किया था कि हम अल्लाह की किताब और नबी (सल्ल॰) की सुन्नत के मुताबिक़ अपनी जिन्दगी गुज़ारेंगे। क़ुरआन और सुन्नत पर हमारा अमल हक़ीक़ी और ज़िन्दा होगा। क़ुरआन मजीद को समझना और फिर उसपर अमल करना, यही तो हमारे दर्से-क़ुरआन की सबसे अलग ख़ूबी है। अब हमारा फ़र्ज़ है कि हमारे दर्से-क़ुरआन की मजलिस की सारी बहनें दुआ के सिलसिले में क़ुरआन की आयतों पर अमल करें। आप भी इसी दुआ के तरीक़े को अपनाएँ। टोने-टोटके आपको नुक़्सान देनेवाले हैं। दुनिया और आख़िरत की बेहतरी और फ़ायदा सिर्फ़ क़ुरआनी आयतों पर अमल करने में रखा गया है। आप ख़ुदा के इस फ़रमान के मुताबिक़ चलें—

"सब्र और नमाज़ से मदद लो, बेशक नमाज़ एक सख़्त मुश्किल काम है। मगर उन बन्दों के लिए मुश्किल नहीं है, जो अल्लाह से डरते हैं।" (क़ुरआन, सूरा-2 बक़रा, आयत-145)

"ऐ लोगो जो ईमान लाए हो सब्र और नमाज़ से मदद लो अल्लाह सब्र करनेवालों के साथ है।"

(क़ुरआन, सूरा-2 बक़रा, आयत-153)

आपको अल्लाह के नबी (सल्ल॰) के इस कथन पर भी अमल करना होगा—

"सजदे की हालत में बन्दा अपने पालनहार रब के सबसे ज़्यादा क़रीब होता है, तो फिर दुआ ज़्यादा किया करो।"

(हदीस : मुस्लिम)

इसलिए जब आप सजदा करें तो निहायत आजिज़ी, इन्किसार (विनम्रता) के साथ और गिड़गिड़ाकर दुआ करें। उसने क़बूल करने का वादा कर रखा है। आप इधर-उधर जाने के बजाए अपने मालिक (स्वामी) के सामने हाज़िर हों। किसी और के दर पर जाने के बजाए अपने घर में रहकर अपने ख़ुदा से मिलें। रात की आख़िरी तिहाई में जागकर अल्लाह से उसकी बड़ाई के साथ दुआएँ करें।

"हमारा पालनहार रब हर रात दुनिया के आसमान पर उतर

कर विराजमान होता है। जब रात का एक तिहाई हिस्सा बाक़ी रह जाता है तो उस वक़्त वह फ़रमाता है, कौन है जो मुझे पुकारे कि मैं उसकी पुकार को क़बूल करूँ? कौन है मुझसे माँगनेवाला कि मैं उसकी माँग को पूरा करूँ? कौन है ज़ो मुझसे माफ़ी चाहे ताकि मैं उसे माफ़ कर दूँ।" (हदीस : बुख़ारी)

मेरी प्यारी बेटी! आप इन मुबारक घड़ियों में कहाँ होती हैं? अगर हक़ीक़त में आप चाहती हैं कि अल्लाह आपकी आरज़ू पूरी करे तो फिर अपने दिल से शंकाओं और चिंताओं के काँटे निकालकर फेंक दीजिए। आपको अल्लाह की क़ुदरत पर ज़र्रा बराबर भी शक न होना चाहिए। आप जिस औलाद के लिए तरस रही हैं, अल्लाह के लिए अता (प्रदान) करना कुछ मुश्किल नहीं। आपको चाहिए कि नबी (सल्ल॰) की हिदायत के मुताबिक़ इस्तिग़फ़ार और तस्बीह ज़्यादा से ज़्यादा करें। यानी अपनी ग़लतियों पर ख़ुदा से माफ़ी चाहें और उसका महिमागान करें। अपने शौहर, अपने माँ-बाप, अपने क़रीबी नाते-रिश्तेदारों और पड़ोसियों के साथ और ज़्यादा अच्छा बरताव करें। याद रखिए कि अल्लाह आपके बहुत ही क़रीब है। आप उसके साथ रहें। अल्लाह के अलावा किसी और की तरफ़ झुकाव न करें। ख़ुदा के इस फ़रमान को हमेशा अपने सामने रखें–

"और ऐ नबी! मेरे बन्दे अगर तुमसे मेरे बारे में पूछें, तो उन्हें बता दो कि मैं उनसे क़रीब ही हूँ। पुकारनेवाला जब मुझे पुकारता है, मैं उसकी पुकार सुनता और जवाब देता हूँ। इसलिए उन्हें चाहिए कि मेरी पुकार का जवाब दें और मुझ पर ईमान लाएँ। (यह बात तुम उन्हें सुना दो) शायद कि वे सीधा रास्ता पा लें।"

(क़ुरआन, सूरा-2 बक़रा, आयत-186)

ये हैं अल्लाह के फ़रमान और ये हैं अल्लाह के पैग़म्बर (सल्ल॰) की हिदायतें। इन्हीं में दुनिया और आख़िरत (परलोक) की भलाई और कामयाबी है। अब आप बताइए कि आप कब अल्लाह की पेशकश को क़बूल कर रही हैं, और उसपर कब से अमल करना शुरू कर रही हैं?

परेशान हाल लड़की वादा करके चली गई। दिन बीतते गए। दो माह से ज़्यादा का वक़्त गुज़र चुका था कि टेलीफ़ोन की कॉल आई। मैंने सुना तो वही लड़की थी। लेकिन अब की बार उसकी आवाज़ में ख़ुशी और चैन था, जोश था। वह कह रही थी, "जब अल्लाह अज़ीम किसी मुहताज, हक़ीर बन्दे पर करम करता है तो उसे बड़ी आसानी और सहूलत के साथ वह कुछ दे देता है, जिसके हासिल करने से यह बन्दा असमर्थ और टूट चुका होता है। वह उसके पाने के लिए माल और वक़्त बरबाद कर चुका होता है। अल्लाह उसकी मुराद इतनी आसानी से पूरी कर देता है कि इनसान हैरान रह जाता है कि यह बन्दा अल्लाह की क़ुदरत के सामने कितना बेबस और लाचार है।"

मैंने पूछा, "आप किसके बारे में बात कर रही हैं?"

उसने बताया, "मैं हमल (गर्भ) से हूँ। जी हाँ, अल्लाह ने मुझे दुख के बाद सुख दिया है, ग़म और रंज के बाद ख़ुशी और आनन्द से नवाज़ा है। लेबॉरेट्री रिपोर्ट मेरे सामने है, जो सकारात्मक (Positive) है।"

मैंने कहा, "जी हाँ, यह सब अल्लाह की मेहरबानी और इनाम है। मालूम होता है कि आपने अपना वादा पूरा किया और पूरे ख़ुलूस से अल्लाह के सामने गिड़गिड़ाकर दुआ की।"

लड़की बोली, "मैं बीते पाँच सालों में नामी-गिरामी मशहूर डॉक्टरों के पास जा चुकी हूँ। मर्द डॉक्टरों और लेडी डॉक्टरों के पास। मैं अपने पालनहार रब से इन पाँच बरसों में दुआ करती रही हूँ मगर यह दुआ रस्मी थी। हमने दुआओं के अल्फ़ाज़ (शब्द) रटे हुए हैं। मिसाल के तौर पर हमारा रब देता है, हमारा रब आसानियाँ पैदा करता है, हमारा ख़ुदा बड़ा करम करनेवाला है वग़ैरा-वग़ैरा। इस तरह के दुआवाले जुमले मेरे मुँह से निकलते थे, मगर इन जुमलों का कोई असर मेरे दिलो-दिमाग़ पर नहीं पड़ता था। मेरा जिस्म, मेरी रूह (आत्मा), मेरी अक़्ल इन जुमलों का कोई असर महसूस नहीं करती थी। ज़बान पर तो दुआएँ रहतीं, मगर मेरा दिल दुनिया में ही खोया रहता था। दिल और ज़बान में मेल न था।

जब अल्लाह, निहायत रहमवाले की रहमत ने मुझे ढाँप लिया तो ज़बान से पहले मेरे दिल ने क़ुरआनी आयतों के असर को महसूस करना शुरू किया। मुझे तो ऐसा मालूम होता है कि मानो मैंने यह आयत पहली बार सुनी है—

"तुम्हारा रब कहता है कि मुझे पुकारो, मैं तुम्हारी दुआएँ क़बूल करूँगा।" (क़ुरआन, सूरा-40 मोमिन, आयत-60)

मुझे ऐसा लगता था कि जैसे मेरे बदन का रुवाँ-रुवाँ हर पल अल्लाह को पुकारता है। मुझे उस वक़्त महसूस हुआ कि कानों से क़ुरआन सुनने और क़ुरआन समझने, महसूस करने और उसपर अमल करने में कितना फ़र्क़ है। अल्लाह पाक ने अपनी बड़ी बरकतवाली आयतें उतारकर मुझपर कितना बड़ा करम किया है।

मैं पाबन्दी के साथ तहज्जुद की नमाज़ पढ़ने लगी। यह नमाज़ एक घना और छायादार बाग़ है। तहज्जुद की मुबारक घड़ियों में ही मुझे अल्लाह के वुजूद, उसकी क़ुरबत, उसकी ताक़त, उसकी हमागीरी (सर्वव्यापकता) और हर चीज़ पर उसके छाए होने का एहसास हुआ। यह एहसास जितना तहज्जुद के वक़्त मज़बूत होता था, किसी और वक़्त नहीं। मुझे पूरा-पूरा सुकून और चैन मिल गया। मैं जब आसमानों और ज़मीनों के पालनहार के सामने, पूरब और पश्चिम के मालिक के सामने, हर चीज़ पर क़ुदरत और हुकूमत करनेवाले अकेले ख़ुदा के सामने खड़ी होती थी, तो मुझे अपने पूरे वुजूद में सुकून और इत्मीनान की लहर-सी दौड़ती हुई महसूस होती थी।

उधर अल्लाह पाक ने अपनी मेहरबानी से मेरे लिए एक 'निशानी' देने का इरादा फ़रमा लिया। मुझे कुछ ऐसा ही एहसास हुआ। हम अपनी सास से मिलने गए तो उन्होंने कहा कि मैंने एक अजीबो-ग़रीब ख़ाब देखा है। मैंने ख़ाब में देखा कि मेरे सामने एक शाल पड़ी है। एक आवाज़ आई कि यह शाल मिना को दे देना क्योंकि उसने 'टोने-टोटके' से इनकार किया है।

मैंने अपनी सास के मुँह से जब यह ख़ाब सुना तो मुझे अपने पूरे जिस्म में ख़ुशी का एहसास हुआ। यह मानो मेरे लिए मेरी सास की ज़बानी एक

ख़ुशख़बरी थी। ये वही औरत थीं, जिन्होंने टोने-टोटके के लिए मुझपर बहुत ज़्यादा दबाव डाला था और बहुत ज़्यादा हठधर्मी की थी जबकि मेरी तरफ़ से इनकार ही था। अब अल्लाह ने मुझे उसका इनाम दिया। अल्लाह ने मेरे उस अमल को क़बूल फ़रमा लिया। मैंने अपने-आप से कहा, 'क्या अल्लाह ने मेरी दुआ, आरज़ू और फ़रियाद नहीं सुन ली? वह तो हर चीज़ पर क़ुदरत रखता है। उसने मुझपर कितना बड़ा करम किया है। किस शान से और किस तरीक़े से मुझे नवाज़ा है।"

जब हम मियाँ-बीवी वापस आ रहे थे यानी मेरा शौहर अपनी माँ और मैं अपनी सास से मिलकर अपने घर की तरफ़ जा रहे थे तो मैंने अपने शौहर से कहा, "आप की अम्मी ने एक ख़ाब बयान किया है। क्यों न हम लेबॉरेट्री से टेस्ट कराते चलें। उन्होंने हैरत से मेरी तरफ़ देखा। इस हैरत में प्यार-मुहब्बत भी शामिल थी। इससे पहले मैं बीसियों बार टेस्ट करा चुकी थी और हर बार नतीजा नकारात्मक होता था। मगर आज अपनी सास का ख़ाब सुनने के बाद मुझे यक़ीन-सा हो चुका था कि मैं उम्मीद से हूँ। मैंने शौहर से लेबॉरेट्री जाने के लिए ज़ोर दिया। मैंने लेबॉरेट्री में ठहरकर रिपोर्ट का इन्तिज़ार बड़ी बेचैनी से किया। ये पल सदियों की तरह लम्बे थे। लेबॉरेट्री की एक कर्मचारी ने जब मेरा नाम लेकर रिपोर्ट मुझे दी तो मुझे ऐसा महसूस हो रहा था कि जैसे मेरे दिल की धड़कन हर कोई सुन रहा है। मेरा दिल, सुकून, चैन और ख़ुदा की ख़ुशनूदी से लबरेज़ था। मैं दिली इत्मीनान की बुलन्द फ़िज़ा में उड़ रही थी। मुझे ऐसा सुनाई दिया कि जैसे मेरा शौहर कह रहा है, 'क्या आपको यक़ीन है कि यह रिपोर्ट हमारी ही है? क्या यह रिपोर्ट हक़ीक़त में मेरी बीवी की ही है? क्या हक़ीक़त में नतीजा "पॉज़िटिव" है?'

मेरा दिल अल्लाह की पनाह में झुक रहा था। मेरे जिस्म ने मेरे दिल के साथ हमआहंगी (एकरूपता) अपना ली। मैं फ़ौरन सजदे में गिर पड़ी, आजिज़ी और बेबसी के साथ, इन्तिहाई मेहरबान रब का शुक्र अदा करने के लिए।

मैं चाहती थी कि मैं सजदे से उठकर सारे लोगों से बात करूँ। मैं हर तबक़े और हर सतह के लोगों से ख़िताब करूँ। मैं हर इनसान से मिलूँ और

चीख़-चीख़कर, पुकार-पुकारकर कहूँ कि आओ, अल्लाह की क़ुदरत और चमत्कार को देखो। अल्लाह की क़ुदरत का नज़ारा करना हो तो मुझे देखो। खुदा की क़ुदरत ने मेरे वुजूद में एक और वुजूद डाल दिया है। मुझे यह वुजूद अल्लाह के सिवा कोई और न दे सकता था। मेरे बदन और रूह के मालिक ने मुझे कितने करम से नवाज़ा है। अल्लाह पाक ही सबसे बड़ा है।

बेशक क़ुरआन मजीद की आयतें और अल्लाह के नबी (सल्ल॰) की हदीसों ने ही मुझे सीधे-सच्चे रास्ते पर क़ायम रखा है।

नोट : कुछ दिन पहले इस लड़की 'मिना' को अल्लाह ने एक बेटे से नवाज़ा है, जिसका नाम 'मुहम्मद' रखा गया है।

♦♦♦